CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय प्राच्यविद्या शोध संस्थान ग्रन्थमाला–१०

कालिदास की आत्मकथा

और मेघदूत

संग्रहालय पुस्तकालय
प्रो० बी० एन० ...
संग्र.
लखनऊ

लेखक

डॉ० अच्युतानन्द घिल्डियाल

एवं

श्रीमती गोदावरी घिल्डियाल

श्रीमती डॉ० गौरी घिल्डियाल

1631

प्रकाशक

भारतीय प्राच्य विद्या शोध संस्थान

सी १४/१६० सी २ सी १ सोनिया

सिगरा, वाराणसी—२२१०१०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

1
2
3
4
5

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुरस्कार योजना फार्म

1- पुस्तक का नाम- कालिदास की आत्मकथा और मेघदूत

2- लेखक का नाम - डॉ. अच्युतानन्द घिल्डियाल

3- लेखक की उम्र (केवल युवा लेखन पुरस्कार हेतु)- ५० - -

4- जन्म स्थान (केवल अनुशंसा पुरस्कार हेतु) - गढ़वाल (उ.प्र.)

5- लेखक का पता - सी ४८/१६० सी २-१ सोनिया, सिगरा वाराणसी २२१०१०

6- उत्तर प्रदेश में पिछले दस वर्ष से लगातार रहने का प्रमाण पत्र जन्म से उत्तरप्रदेश का निवासी हूं।

(अनुशंसा पुरस्कार के लिए (~~संलग्न है~~/संलग्न नहीं)

7- पुस्तक की विधा/विषय - आत्मकथा संस्कृत. इतिहास

8- प्रकाश वर्ष - - ~~[illegible]~~ १५ जून १९९१

9- प्रकाशक का नाम और पता भारतीय प्राच्य विद्या शोध संस्थान सी ४८/१६० सी २-१ सोनिया - सिगरा - वाराणसी २२१०१०

मैं प्रमाणित करता/~~करती~~ हूँ कि मेरे द्वारा अंकित कालिदास की आत्मकथा और मेघदूत शीर्षक पुस्तक का प्रथम संस्करण प्रथम बार सन् १९९१ में प्रकाशित हुआ है तथा इस पुस्तक का तीन चौथाई या उससे अधिक भाग पुस्तक के रूप में इससे पूर्व कभी प्रकाशित नहीं हुआ है।

दिनांक - १५/१२/९१ लेखक के हस्ताक्षर अच्युतानन्द घिल्डियाल - पूरा पता सी ४८/१६० सी २-१ सोनिया - सिगरा वाराणसी २२१०१०

x x x x

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

State Museum Library Lucknow
7631

पुरस्कार योजना

राज्य संग्रहालय पुस्तकालय
प्रो० बी० एन० पुरी संग्रह
लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय प्राच्य विद्या शोध संस्थान ग्रन्थमाला १०

कालिदास की आत्मकथा और मेघदूत

State Museum Library Lucknow

लेखक

डॉ० अच्युतानन्द घिल्डियाल

एम० ए०, पीएच० डी०

अध्यक्ष--भारतीय प्राच्य विद्या शोध संस्थान, वाराणसी

पूर्व प्राध्यापक—काशी विद्यापीठ, वाराणसी

एवं

श्रीमती गोदावरी घिल्डियाल

एम० ए०, बी० टी०

पूर्व प्राध्यापिका—राजकीय बालिका इण्टर कालेज

रामनगर--वाराणसी

श्रीमती डॉ० गौरी घिल्डियाल

एम० ए०, पीएच० डी०, एल० टी०

पुस्तकालय प्रो० बी० एन० पुरी संग्रह लखनऊ

प्रकाशक

भारतीय प्राच्य विद्या शोध संस्थान

• सी १४/१६० सी २–१ सोनिया

सिगरा —वाराणसी–२२१०१०

Kalidas Ki Atmakatha aur Meghadut
CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकाशक

भारतीय प्राच्य विद्या शोध संस्थान
सी १४/१६० सी २–१ सोनिया
सिगरा—वाराणसी

वितरक

विवेक घिल्डियाल बन्धु
सी १४/१६० सी २–१
सोनिया—वाराणसी २२१०१०
एवं
महाकवि कालिदास जन्म भू स्मारक समिति
कालिदास ग्राम—कविल्ठा-कोटमा
गुप्तकाशी, कालीमठ, चमोली गढ़वाल (उ० प्र०)

सर्वाधिकार

डॉ० अच्युतानन्द घिल्डियाल
अध्यक्ष—भारतीय प्राच्य विद्या शोध संस्थान
सी० १४/१६० सी २–१ सोनिया
वाराणसी २२१०१०

१५ जून, सन् १९९१

मूल्य—सजिल्द ३६/=
,, अजिल्द ३०/=

मुद्रक

चन्द्रप्रभा प्रिंटिंग प्रेस
प्रेमचन्द मार्ग
वाराणसी
फोन ४३८४५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विषय-सूची

पृष्ठ

१. स्नेह उपहार डॉ० महाराजकृष्ण बिल्डियाल एम० एस० ३

२. अपनी बात ५-१२

प्रथम अध्याय

१. महाकवि कालिदास और उसका कविता में संक्षिप्त रूप में परिचय १-२

२. कालिदास का प्रारम्भिक जीवन ३-५

३. भारतीय संस्कृति और उत्तराखण्ड ५-८

४. प्रकृति प्रेमी कालिदास, राजा शारदानन्द और गुप्तकाशी ८-१३

५. काशी और गुप्तकाशी, महाविदुषी विद्योत्तमा और शास्त्रार्थ १६-१८

६. विद्योत्तमा और कालिदास का विवाह, काव्यसाधक कालिदास १८-२४

७. कालिदास के शाप का कारण, यक्षों के प्रति कालिदास के आदर के भाव २४-३०

८. कवि रूपी यक्ष का कनक वलय; यक्ष और मानव में अन्तर ३०-३३

९. कालिदास के घर का परिचय, शारदानन्द की कवि और विद्योत्तमा के प्रति सहानुभूति ३३-३७

१०. गढ़वाल और कालिदास, कवि का घर, क्रीड़ा शैल और बावड़ी ३७-४१

११. मेघ को अपनी पत्नी का सही परिचय, उज्जयिनी और कालिदास ४१-५४

१२. संस्कृति रक्षक कालिदास, कालिदास के जीवन का अन्तिम भाग कालिदास की सन्तान ५४-५९

१३. कीथ और कालिदास, रामभक्ति-बाल्मीकि और कालिदास ५९-६४

१४. काशी नहीं अपितु गुप्त काशी कालिदास की प्रेरक थी, कालिदास की सच्ची जन्मभूमि ६४-६६

१५. कविल्ठा और कालिदास ६६-६८

द्वितीय अध्याय

१. मेघदूत गीति काव्य का सही स्वरूप, पूर्वमेघ और कालिदास की आत्मकथा ६९-७६

२. मेघदूत पूर्वभाग-अधिकार प्रमत्त का फल, कालिदास के सच्चे भाव और आत्मकथा, मानव के जीवन में मेघ का महत्व ७६-८८

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

३. आशा ही दुख का सही सम्बल है कालिदास की जन्मभूमि गन्तव्य मार्ग ८८–९४

४. निचुल दिगनागाचार्य, मध्यप्रदेश के भूभाग का वर्णन, दशार्ण का वर्णन ९४–१०१

५. उदयन और वासबदत्ता, उज्जयिनी का वैभव, स्कन्ध के प्रति श्रद्धा १०१–११४

६. कालिदास का उत्तराखण्ड के प्रति आकर्षण, हिमालय की केदार भूमि, अलका का वर्णन ११४–१२३

तृतीय अध्याय

१. उत्तरमेघ और कालिदास की आत्मकथा, पुष्पों का महत्त्व १२४–१३१

२. यक्षरूपी कवि के घर का परिचय, बहिर्द्वार, बावड़ी और क्रीड़ाशैल १३१–

३. कवि की पत्नी और दत्तक पुत्र, कालिदास के मन के सही विचार

४. कवि का रामगिरि में अपने जीवित होने का संदेश देना, शाप की अवधि में कवि की स्थिति

५. कालिदास ने मेघदूत में अपनी सही गाथा गई है १६७–१७३

चतुर्थ अध्याय

१. कालिदास के विषय में गढ़वाल के विद्वानों के विचार उत्तराखण्ड की परम्पराओं का प्रभाव १७३–१७५

२. कालिदास की रचनाओं के प्रति पाश्चात्य और भारतीय विद्वानों के विचार १७५–१८७

३. कालिदास के मेघदूत का विश्व के अधिक लोगों पर प्रभाव १८०–१८२

४. कालिदास उत्तर प्रदेश शासन और उत्तराखण्ड १८२–१८८

५. तीर्थों का महत्त्व १८९–१९३

६. उत्तराखण्ड गढ़वाल में यात्रा करने के मार्ग १९३–१९५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सस्नेह उपहार

मानवीय सेवा से प्रभावित होकर कार्य करने वाले
अस्थिरोग विशेषज्ञ, सिद्धहस्त शल्यचिकित्सक
रोगी के रोग का सही निदान बताने में कुशल
डॉ० महाराजकृष्ण घिल्डियाल बी. एस. सी.,
एम. बी. बी. एस, एम. एस.
घिल्डियाल हॉस्पिटल नजीबा-
बाद तथा कोटद्वार गढ़वाल
को सस्नेह उपहार

अच्युतानन्द घिल्डियाल
गोदावरी घिल्डियाल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपनी बात

अपने अमर साहित्य के द्वारा मानवीय मनोवृत्तियों का सही विश्लेषण करने के कारण कालिदास को संस्कृत जगत् में ही नहीं अपितु विश्व के सर्वप्रिय कवियों में कौन नहीं जानता ? गुणग्राही विद्वानों ने विश्वभर की विभिन्न भाषाओं में कालिदास की रचनाओं का बड़ी ही श्रद्धा के साथ अनुवाद किया है। विद्वानों ने संस्कृत, जर्मनी, अंग्रेजी और हिन्दी में महाकवि कालिदास के ग्रन्थों पर बहुत कुछ लिखा है किन्तु उसके जीवनवृत्त पर कुछ भी प्रकाश नहीं डाला है। अपनी-अपनी दृष्टि के अनुमान से कई लोगों ने प्रयास कर कालिदास की जन्मभूमि पर कुछ तो बोला है किन्तु पूर्वाग्रह और पाश्चात्य जगत् के अनुकरण या स्वीकृति के कारण मतैम्य नहीं हो पाया।

वास्तव में कालिदास की जन्मभूमि के विषय में सच्ची भावनाओं पर विचार करके ही सही निर्णय किया जा सकता है। महाकवि कालिदास ने अपने प्रथम काव्य कुमारसम्भव, द्वितीय गीतिकाव्य मेघदूत और अन्तिम विश्वविख्यात शकुन्तला नाटक में सबसे अधिक वर्णन हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल की केदारभूमि का किया है। इस धरती की ओर ही उसका विशेष अनुराग रहा है। क्यों ? उसकी रचनाओं का वर्ण्य विषय यह भूमि ही क्यों बनी ? मेघदूत गीतिकाव्य में कालिदास ने हिमालय के केदारखण्ड के सन्निकट की भूमि का अलकापुरी से लेकर रामगिरि आश्रम तक का भौगोलिक दृष्टि से स्वयं पदयात्रा किया हुआ मार्ग वर्णन किया है। कालिदास ने अपने वैवाहिक जीवन के पश्चात् का जीवनवृत्त मेघदूत में दिखाया है, जो महाकवि की सच्ची आत्मकथा है क्योंकि इसमें उस महाकवि ने अपनी शाप, ताप और पाप की सच्ची गाथा गाई है।

अपने अधिकारों में प्रमत्त व्यक्ति को अति करने पर महान् दुख भोगने ही पड़ते हैं और तभी वह सच्ची शिक्षा ग्रहण करता है। शिव-पार्वती के रति सुख के वर्णन से कालिदास को पत्नी विरह के दारुण दुख के साथ कुष्ट रोग भी भोगना पड़ा था। यह सब बिना तीर्थ यात्रा, पावन नदियों के स्नान एवं निवास के दूर नहीं हो सकता था। अतः कालिदास अपनी जन्मभूमि हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल से दुगर्म मार्ग का पदयात्री बनकर कविल्ठा से गुप्तकाशी, कनखल से कुरुक्षेत्र होता हुआ उज्जयिनी पहुँच जाता है। उसकी विद्वत्ता से उज्जयिनी का गुणी शासक विक्रमादित्य अधिक प्रभावित होता है और कालिदास को गुणग्राही होने के कारण अपने नवरत्नों में सम्मानित स्थान देता है। कालिदास ने अपने उद्देश्य

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को दृष्टि में रखकर रामगिरि आश्रम में वास कर अपने प्रवासी जीवन में शाप, ताप और पाप को दूर करते हुए आठ मास के पश्चात् आषाढ मास के प्रथम दिन रामगिरि शिखर पर एक मेघ को देखा। बस उसे देखते ही उसके मन में अपनी विरहणी पत्नी की मधुर स्मृति अत्युत्कट उत्कण्ठा के रूप में जाग्रत हो जाती है। वह शिष्टाचार के साथ मेघ का स्वागत और प्रशंसा कर अपनी सच्ची आत्मकथा उसे सुनाना प्रारम्भ कर देता है। सर्वप्रथम रामगिरि से आत्मविभोर होकर अपनी जन्मभूमि उत्तरदिशा-उत्तराखण्ड में ही जाने का मार्ग मेघ को दूत बनाकर वर्णन करता है। क्यों ? जिसमें मेघदूत गीतिकाव्य का अधिक भाग समाप्त हो जाता है। जिस मार्ग से कालिदास स्वयं उज्जयिनी गया था एवं रामगिरि में एकाकी रह रहा था, उसी मार्ग को वह अपने अनुभव एवं भौगोलिक ज्ञान के द्वारा मेघ को बताना प्रारम्भ कर देता है। उज्जयिनी में निवास करने के कारण वह उसके मार्ग में पड़ने वाले भूभाग का विशद वर्णन शिव के चरण चिह्नों का महत्त्व बता कर अपने आवास का सौन्दर्यमय स्वरूप पत्नी के पास मेघ को अपनी गोपनीय बातों को बताकर संदेश देता है। यह सब वर्णन केदारखण्ड की ही भूमि का है।

गीतिकाव्य की अपनी एक विशेषता होती है कि वह महाकवि के व्यक्तिगत जीवन की सच्ची अनुभूति होती है, जिसे कि वह अपनी आत्मकथा के सही रूप में अभिव्यक्त करता है। सच्चा कवि अपने जीवन के सही दुखमय भावों को गीति-काव्य के द्वारा अपने सन्निकट के पर्यावरण के अनुरूप कथानक को लेकर अपनी जीवन गाथा को गाता है। कालिदास ने अपने कृतित्त्व में अपने सच्चे व्यक्तित्व को सही आत्मकथा के रूप में वर्णन किया है। गीतकाव्य ही आत्मकथा का सच्चा माध्यम होता है। मेघदूत गीतिकाव्यात्मक आधार पर ही कालिदास ने आत्मकथा बड़े ही दारुण दुख में गाई है। गीतिकाव्य के अतिरिक्त अन्य किसी रचना में कवि अपनी आत्मकथा को इस प्रकार वर्णन नहीं कर सकता है। मेघदूत के द्वारा कालिदास ने अपने हृदय के सच्चे भावों, अपना जीवनवृत्त, अपनी अनुभूति जन्मभूमि का परिचय और उसके स्थानों को विस्तृत रूप में स्पष्ट किया है।

मेघदूत के आधार पर तथ्यों को एकत्रित कर हमने यह 'कालिदास की आत्मकथा और मेघदूत' नाम की पुस्तक लिखी है। इसमें कालिदास का प्रारम्भिक जीवन से लेकर और जीवन के अन्त तक का वर्णन है, मेघदूत के श्लोकों के अर्थ और उनकर तथ्यों को स्पष्ट करने के लिए विस्तृत समीक्षा की गई है एवं अन्त में तीर्थों का महत्त्व तथा उत्तराखण्ड में तीर्थयात्रा का मार्ग बताया गया है।

स्वतन्त्रता से पूर्व महाकवि कालिदास के जीवनवृत्त पर गढ़वाल के विद्वानों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का ध्यान आकर्षित अवश्य हुआ था किन्तु समुचित साधनों के अभाव में उनकी लिखित सामग्री प्रकाश में न आ सकी। हमें भी अपने स्वर्गीय पूज्य पिता जी से सन् १९४३ में कालिदास सम्बन्धी प्रचुर हस्तलिखित सामग्री प्राप्त हुई किन्तु तब हम राष्ट्रीय भावनाओं से प्रभावित होकर इस दिशा में कुछ कार्य न कर सके। राजनीति को छोड़कर उच्च शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् सन् १९७० से अनेक ग्रन्थों के प्रकाश के पश्चात् १९८० में कालिदास और उसका मानवीय साहित्य की पाण्डुलिपि तय्यार कर उत्तरप्रदेश संस्कृत अकादमी लखनऊ को भेजी अधिक दिन तक उत्तर न आने से हमने उस पाण्डुलिपि को वापस मंगाकर स्वयं १९८४ में उसे प्रकाशित किया और अब १५ जून १९९१ आषाढ़ के प्रथम दिवस महाकवि कालिदास समारोह के पावन अवसर पर उस विश्व कवि की स्मृति में विस्तृत तथ्यों के साथ 'कालिदास की आत्मकथा और मेघदूत' प्रकाशित कर प्रबुद्ध अध्येताओं के समक्ष रख रहे हैं।

महाकवि कालिदास को हिमालय उत्तराखण्ड गढ़वाल का सिद्ध करने में गढ़वाल के अनेक विद्वानों ने जैसे श्री बालकृष्ण भट्ट शास्त्री, श्री विशालमणि शर्मा, श्री सदानन्द जखमोला आदि विद्वानों ने विद्वत्ता पूर्ण कार्य किया है। डा० शिवानन्द नौटियाल ने भी अपने सार गर्भित लेखों द्वारा कार्य किया है, आचार्य धर्मानन्द जमलोकी ने सन् १९८९ में 'कालिदास की जन्मभूमि हिमालय गढ़वाल' पांडित्यपूर्ण पद्धति पर पुस्तक प्रकाशित की। सन् १९८४ में मेरे पास नई दिल्ली से महाविदुषी प्रो० कमलारत्नम् का पत्र आया, उन्होंने मुझे कालिदास की जन्मभूमि के विषय में लिखा मैंने उन्हें अपनी पाण्डुलिपि के कुछ अंश भेजे और आग्रह किया कि कृपया आप वस्तु स्थिति जानने के लिए केदारखण्ड की गुप्त काशी, कालीमठ और कालिदास के ग्राम कविल्ठा को देखें तो आपको स्वत: ही विदित हो जायेगा कि महाकवि कालिदास, कहां का रहने वाला था? उस जिज्ञासु दक्षिण भारतीय विदुषी महिला ने अवस्था के अधिक होने और अस्वस्थ रहने पर भी उत्तराखण्ड की यात्रा करने का साहस किया। उस विदुषी ने केदारखण्ड को देखकर अपनी पुरानी भ्रमात्मक धारणायें छोड़कर महाकवि कालिदास को उत्तराखण्ड गढ़वाल की तपस्थली का निवासी स्वीकार किया एवं हृदय से गद्-गद् होकर ईश्वर से प्रार्थना की कि यदि मेरा अगला जन्म हो तो कालिदास की जन्मभूमि इस उत्तराखण्ड जी केदारभूमि कविल्ठा ग्राम में ही हो।

सन् १९८७ में केदारखण्ड की प्रबुद्ध जनता ने भी वर्षों से अपने हृदय में समेटे हुए विचारों को कृतज्ञतापूर्वक उत्साहित होकर विधिवत् महाकवि कालिदास की स्मृति में उसके ही ग्राम कविल्ठा में 'महाकवि कालिदास जन्म भू स्मारक समिति' की स्थापना करके अभिव्यक्त किया है। सर्वप्रथम ज्योतिर्विद शास्त्री

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चैतराम भट्ट, आचार्य सुरेशानन्द्र गौड़, श्री नरेन्द्रदत्त जमलोकी, श्री नरेन्द्रसिंह रावत, श्री वीरेन्द्रसिंह रावत ने समर्पण की सच्ची भावना से इस दिशा में सक्रिय होकर शताब्दियों से भूलाए हुए कालिदास को स्मरण करके इस शुभ एवं महत्त्वपूर्ण कार्य को प्रारम्भ करने का सराहनीय साहस किया है।

भले कार्यों को प्रारम्भ करने में अनेक प्रकार की कठिनाइयां आती हैं एवं सहयोगी नहीं मिलते हैं किन्तु सच्चे दृढ़ निश्चयी, कर्मठ,कर्तव्य निष्ठ व्यक्ति अपने सही संगठन के द्वारा अपने पूर्व पुरुषों की स्मृति में समस्त बाधाओं को दूरकर सद्कार्य में लगे ही रहते हैं। गढ़वाल के और देश के अन्य स्थानों के गण्यमान्य लोगों, विद्वानों तथा विदुषियों ने श्री हिमालय उत्तराखण्ड के वैभव पूर्ण इतिहास को बताने वाले महाकवि कालिदास के प्रति अपनी सच्ची कृतज्ञता व्यक्त करते हुए इस कार्य में पूर्ण सहयोग देकर इसे क्रियात्मक रूप में आगे बढ़ाया है :—

सर्वश्री परमधार्मिक महामान्य सतपाल महाराज, संस्थापक-मानव उत्थान-सेवा समिति नई दिल्ली, संस्कृत जगत् में ख्याति प्राप्त प्रोफेसर श्रीमती कमलारत्नम् नई दिल्ली, श्री सन्मथ बड़थ्वाल पूर्व विधायक बद्री-केदार, डॉ० भक्तदर्शनसिंह पूर्व उपशिक्षामन्त्री भारत सरकार देहरादून, डॉ० शिवानन्द नौटियाल पूर्व शिक्षामन्त्री उत्तर प्रदेश तथा सदस्य विधान सभा लखनऊ, स्वामी नित्यानन्द, विधान परिषद् लखनऊ, डॉ० इन्दिरा हृदयेश, श्री रामचन्द्र उनियाल अध्यक्ष-जिला परिषद् चमोली, श्री कुंवरसिंह नेगी विधायक बद्री-केदार, पर्वतीय विकासमन्त्रीश्री बरफियालाल जुवांठा, श्री एन० के० नेगी, पर्यटन अधिकारी, चमोली। श्री सत्येन्द्र वर्त्वाल, वरिष्ट पत्रकार श्री राधाकृष्ण वैष्णव नन्दप्रयाग, श्री धर्मानन्द उनियाल पत्रकार-श्रीनगर, आचार्य भास्करानन्द मैठाणी ऊखीमठ, डॉ० अनसूयाप्रसाद मैठाणी-मक्कूमठ, श्री कैलासनाथ पोस्ती, चमोली, श्री सत्यप्रसाद सेमवाल, श्रीकृष्ण सेमवाल, श्रो चन्द्रबल्लभ सेमवाल, कालीमठ के परमसाधक व्रतीबाबा, ग्राम नाला गुप्तकाशी के वयोवृद्ध स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी श्री शेरसिंह शाह, श्री कुंवरसिंह नेगी कर्मठ, कोठद्वार, डॉ० लक्ष्मीचन्द शास्त्री कोटद्वार, श्रीमती सुशीला उनियाल, श्रीमती डॉ० उमा मैठाणी गढ़वाल विश्वविद्यालय श्रीनगर, श्रीमती गोदावरी घिल्डियाल एवं डॉ० अच्युतानन्द घिल्डियाल, अध्यक्ष—भारतीय प्राच्य विद्या शोधसंस्थान, वाराणसी आदि ने इस कार्य में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

इसके साथ ही स्थानीय सक्रिय सहयोग देनेवाले श्री परमानन्द गौड़, कानूनगो श्री मित्रानन्द भट्ट, श्री राजेन्द्रप्रसाद भट्ट, श्री ओंप्रकाश भट्ट, श्री बचनसिंह रावत, श्री सदानन्द कोटवाल, श्री जोधसिंह राणा जालतल्ला, स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी श्री बागसिंह तन्दोरी, श्री पद्मसिंह तन्दोरी, श्री चन्द्रसिंह जालतल्ला, श्री माधोसिंह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जालतल्ला, श्री शिवरामसिंह खोन्नू, श्री बच्चीराम खोन्नू, श्री रामसिंह लोलछाड़ा, श्री दिवानसिंह व्यूखी, श्री शोभनसिंह ज्येष्ठ प्रमुख ऊखीमठ ब्लाक, श्री शिवराज सिंह प्रधान कालीमठ, श्री चन्द्रादत्त सती कोटमा, श्री कुंवरसिंह श्यासू, श्री महादेव प्रसाद कुणजेठी, श्री रमेशचन्द्र भट्ट साहित्यरत्न, श्री हर्षपति भट्ट खोन्नू, श्री शेरसिंह रावत एवं वार्गसिंह रावत का नाम इस कार्य में विशेष उल्लेखनीय है।

इसके साथ ही महाकवि कालिदास के कविल्ठा ग्राम निवासियों को धन्यवाद देना भी हम आवश्यक समझते हैं क्योंकि वे सदा महाकवि कालिदास समारोह के कार्य में बड़ी तत्परता से उत्साहित होकर सम्मान के साथ आगन्तुओं के आतिथ्य सत्कार में लगे रहते हैं और उन्होंने महाकवि कालिदास के स्मारक बनाने के लिए अपनी अधिक उपजाऊ भूमि बड़ी ही श्रद्धा से देकर श्लाघनीय कार्य किया है।

उत्तरप्रदेश का धार्मिक सांस्कृतिक और ऐतिहासिक आदि अनेक दृष्टियों से अपना विशेष महत्त्व हैं। इस भूमि में ही राम एवं कृष्ण उत्पन्न हुए हैं और इसी पावन धरती में हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल में महाकवि कालिदास ने भी जन्म लिया है। चिरकाल के पश्चात नवीन तथ्य, प्रमाणों से एवं खोज के आधार पर उत्तरप्रदेश शासन का ध्यान इस परम्परा की ओर गया और उसने मार्च सन् १९९१ में महाकवि कालिदास के प्रति सच्ची कृतज्ञता यापन करते हुए चार लाख के लगभग का अनुदान स्वीकार किया है। इस कार्य में प्रेरणा और सहयोग देने वाले लोग सचमुच बधाई के पात्र हैं।

हमें इस पुस्तक को लिखने एवं केदारखण्ड का विस्तृत अन्वेषण पूर्ण भ्रमण करने में ज्योतिर्विद् शास्त्री चैतराम भट्ट, एम० ए०, साहित्यरत्न-अध्यक्ष-महाकवि कालिदास जन्म भू-स्मारक समिति, आचार्य सुरेशानन्द गौड़ महामन्त्री महाकवि कालिदास जन्म भू स्मारक समिति कविल्ठा एवं डा० महाराजकृष्ण घिल्डियाल बी० एस० सी०, एम० बी० बी० एस०, एम० एस० ख्याति प्राप्त कुशल शल्य चिकित्सक घिल्डियाल हॉस्पिटल नजीबाबाद तथा कोटद्वार गढ़वाल का सभी प्रकार से बहुत बड़ा सहयोग एवं सहायता रही है। जिसके लिए उनके हम हृदय से आभारी हैं।

मानव जीवन पाने का उद्देश्य बहुत ही कम लोग समझ पाते हैं। संवेदन-शील मानव जीवन पाकर और उस सर्वशक्तिमान् की दी हुई आंशिक शक्ति से मानवीय मूल्यों की सुरक्षा एवं परिपालन करने वाला धन्य है। रोगी की सेवा, सहायता, सद् व्यवहार और डाक्टर की सहानुभूति आधा रोग दूर कर देती है कुष्ट भी एक रोग है जिससे कई लोग पीड़ित हैं। ऐसे लोगों के प्रति सेवा, सहानुभूति और उपकार की भावना रखने वाले कम देखे गये हैं। नजीबाबाद

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जिला बिजनौर में कुष्ट रोगियों की सेवा के लिए समाजसेवी आचार्य केला ने एक कुष्ट आश्रम स्थापित किया है। जिसमें कुछ रोगियों की सच्ची सेवा, सहानुभूति एवं भिक्षावृत्ति जैसे घृणित कार्य को छोड़ाकर उन्हें स्वावलम्बी बनाने के लिए अपना तन, मन तथा धन लगा कर अनेक कुटीर उद्योग खुला कर मार्ग दर्शन करने वाले सिद्धहस्त, शल्य चिकित्सक डॉ० महाराज कृष्ण घिल्डियाल की सच्ची सेवा वृत्ति के कार्यों को देखकर हमने यह पुस्तक उन्हें उपहार स्वरूप में दी है।

वास्तव में अपनी भावनाओं और शक्ति के अनुरूप गुणियों, अच्छे तथा लोक सेवा करने वाले लोगों को पुरस्कृत एवं प्रोत्साहित करने से ही स्वस्थ परम्पराओं अथवा नैतिक मानवीय मूल्यों की सही स्थापना हो सकेगी।

इस पुस्तक के छपाने में सहयोग देने में श्री विवेक घिल्डियाल, एम० ए०, बीलिब-पुस्तकालयाध्यक्ष-सेंट जॉन्स कालेज वाराणसी तथा सुश्री मुदिता घिल्डियाल, बी० एस० सी०, एम०-ए०, एल० टी० का भी आभार प्रकट करना हम आवश्यक समझते हैं।

हमारी नवीन प्रकाशित पुस्तकों को पढ़ने के लिए विशेष रुचि रहने वाले तथा हमें पुरस्कृत और प्रोत्साहित करने वाले पाठकों के भी हम विशेष रूप से कृतज्ञ हैं।

मानवीय गुणों के कारण त्रुटियों का होना स्वाभाविक ही है। अतः हमारे प्रबुद्ध पाठक उनके सुधार के लिए हमें सूचित करें तो हम उनके सद् परामर्श के लिए हृदय से आभारी रहेंगे।

निवास स्थान
सी० १४/१६० सी० २-१
सोनिया-सिगरा
वाराणसी-२२१०१०
आषाढ़ का प्रथम दिवस १९९१

विनीत
अच्युतानन्द घिल्डियाल
एवं
श्रीमती गोदावरी घिल्डियाल
डॉ० गौरी घिल्डियाल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रथम अध्याय

कालिदास की आत्मकथा

महाकवि कालिदास और उसका परिचय

संक्षिप्त रूप में

तेरा ही सत्साहित्य देता है तेरा सही परिचय हमें।
पर हमारा झूठा पूर्वाग्रह नहीं छोड़ पाता है हमें ।।१।।
तेरे जीवन का सही प्रेरणा स्रोत है यह हिमालय।
तेरी पावनतम जन्मभूमि है यह शुभ्र हिमालय ।।२।।
सचमुच तुमने इसका सही यथार्थ रूप पाकर।
दिया तभी पाठकों को निज साहित्य का आनन्द लाकर ।।३।।
सब जीतकर भी तुम पराजित हुए विद्योत्तमा से।
मूर्खता ने भेदखोला अपमानित हुए विद्योत्तमा से ।।४।।
सत्य ही तुम विद्योत्तमा की प्रेरणा से सत्पथ पागये।
तभी उस महाकाली का कृपा से सच ही विद्या पागये ।।५।।
कालीमठ की सिद्धपीठ ने ही तुम्हें काली दास बनाया।
गुप्तकाशी की विद्योत्तमा ने ही तुम्हें महाकवि बनाया ।।६।
तेरी साहित्य साधना ने तुझे कविकुलगुरु बनाया।
एवं विक्रम की उज्जयिनी ने तुम्हें विश्वकवि बनाया ।।७।।
जब द्वार तूने खटखटाये साधना से सभ्य होकर।
तभी प्रत्युत्तर मिला 'अस्तिकश्चिद्वाग्विशेष' बनकर ।।८।।
हो उठी मुखरित तेरी काव्यसाधना काव्य बनकर।
तभी तू भूल बैठा भाव में शास्त्रसीमा कवि बनकर ।।९।।
यौवन की वह तरंग नवीन कविता की थी उमंग।
तभी लक्ष्य बने तेरे ही काव्य में उमा के अंग-प्रत्यंग ।।१०।।
सह न सके पार्वती परमेश्वर इस अपराध को।
पाया तभी तो मेघदूत में दारुण दुख अभिशाप को ।।११।।
इसीलिए मिला तुझे प्रवासी जीवन प्रिया विरह का।
सच घूम-घूम कर भोगा तूने दुख प्रिया वियोग का ।।१२।।
धन्य हिमालय के महाकवि कालिदास जो तूने गाया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसको प्रबुद्ध पाठकों ने मेघदूत में सही है पाया ॥१३॥
बनी व्यथा तेरी कथा तेरे कुमारसम्भव के कारण।
तभी तो मेघदूत ने किया तेरी आत्मकथा को धारण ॥१४॥
मेघदूत में तूने निज शपित जीवन को है दिखाया।
रघुवंश में प्रायश्चित से मुक्त हूँ अपने को बताया ॥१५॥
काशी के मोह ने तेरी विद्योत्तमा को बताया है काशी का।
किन्तु पिता उसका राजा शारदानन्द था गुप्तकाशी का ॥१६॥
गुप्तकाशी के काशी शब्द को कुछ लोगों ने काशी ही माना।
पुनः गुप्त शब्द को गुप्तवंश में कीथ ने ठीक ही जाना ॥१७॥
तुने सर्वप्रथम सही प्रेरणा गुप्तकाशी से ही पाई।
तभी तेरे जीवन में नवीन चेतना यहीं से है आई ॥१८॥
जन्मभूमि को स्वर्ग से उत्तम समझ तुम आये यहीं।
जीवन के अन्त में मुक्त होने तप में रम गये यहीं ॥१९॥
बड़े गहन चिन्तन से लिखी हमने तेरी आत्मकथा।
और मेघदूत ने सही बताई तेरे जीवन की व्यथा ॥२०॥
तेरे ही यक्षगृह में अब बन रहा है तेरा स्मारक।
तेरे ही ग्राम के त्याग का द्योतक है तेरा यह स्मारक ॥२१॥
जय जय उपमा धनी कवि शिरोमणि कालिदास की।
सरस्वती साधक उत्तराखण्ड गढ़देश निवासी की ॥२२॥
यह केदारखण्ड की पुण्यभूमि ही है तेरी जन्मस्थली।
उज्जयिनी तो बहुत बाद में बनी है तेरी कर्मस्थली ॥२३॥
संस्कृति रक्षक संस्कृत के पोषक हे कवि कालिदास।
आपको बार-बार है नमस्कार हमारा हे कालिदास ॥२४॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कालिदास का प्रारम्भिक जीवन

महाकवि अपने समाज का सच्चा प्रतिनिधि होता है और व्यक्ति, समाज, राष्ट्र एवं मानवता को वह अपनी रचनाओं द्वारा सही मार्ग दिखा कर सुख से जीवित रहने तथा विकास करने का मार्ग बताता है। मानव के जीवन में सच्चा सामाजिक होने के कारण उस युग के सच्चे महाकवियों के सद् साहित्य का अध्ययन करने के ही पश्चात् जीओ और जीने दो की सहानुभूति युक्त एवं लोकसेवा की भावनाएँ जाग्रत होती हैं। साहित्य ही समाज का सही प्रतिबिम्ब होता है। किसी भी समाज के इतिहास को जानने के लिए उसका प्राचीन साहित्य ही सही स्रोत होता है। कवि, कविता और काव्यों के सृजनात्मकरूप में परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है। कविता और काव्य संरचना कवि के हृदय की सच्ची अनुभूति है। महाकवि अपने युग के अनुरूप अपने हृदय के सच्चे भावों को अपनी रचनाओं में प्रसंग के अनुसार कहीं न कहीं वर्णन कर ही देता है। जिस पर्यावरण में महाकवि का जन्म होता है वह उसकी घटनाओं, प्राकृतिक दृश्यों, प्रसंगों और विषय वस्तु को अपने साहित्य में अवश्य ही वर्णन कर देता है क्योंकि वह उनसे पूर्णरूप से प्रभावित और चिर-परिचित होता है।

संस्कृत साहित्य का ऐतिहासिक अध्ययन करने पर प्रबुद्ध पाठकों को उस युग के अनेक महाकवियों की अद्वितीय रचनाओं को पढ़ने का सुयोग मिलता है किन्तु उनके वास्तविक जीवन परिचय के विषय में कुछ भी पता नहीं चलता है क्योंकि उस युग में अपना परिचय देने की परम्परा ही नहीं थी। उस युग में विद्वता का ही सबसे अधिक महत्त्व था। विद्या के कारण ही विद्वानों का सर्वत्र सम्मान होता था क्योंकि मानव के जीवन निर्माण में विद्या ही सर्वोत्तम साधन थी।

'होनहार निरवान के होत चिकने पात' (प्रसादचिन्हानि पुरः फलानि) वास्तव में जिन लोगों ने संसार में अपने व्यक्तित्व और कृतित्व के कुछ करके दिखाना होता है, उनका जीवन चमत्कारपूर्ण और अनेक किंवदन्तियों से जुड़ा होता है। सचमुच अपने युग की परम्पराओं से परिबद्ध होने से संस्कृत के महाकवियों ने अपनी अमर कृतियों में कहीं भी प्रत्यक्ष रूप में अपना परिचय नहीं दिया है। संस्कृत साहित्य में छठीं शताब्दीं में सम्राट् हर्षवर्धन के आश्रित एवं 'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति' और बाणोच्छिष्टं जगतसर्वं वाली उक्ति के कवि बाणभट्ट ने अपने हर्षचरित के प्रथम उच्छ्वास में अपना पूर्ण परिचय अवश्य दिया है। उसे बाणभट्ट की आत्म-कथा माना जाता हैं। संस्कृत के प्रसिद्ध उपन्यासकार बाणभट्ट से पूर्व इस प्रकार की परम्परा नहीं थी। अतः हजारों संस्कृत के कवियों को आज भी कोई जानता ही नहीं है और जिनको जानते भी हैं तो उनका सही जीवन परिचय मिलता ही नहीं। उस युग में विद्वत्ता का युग था न कि विद्वत्ता के प्रदर्शन का। उस युग में समस्यायों,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शंकाओं और द्वन्द्वों को दूर करने के लिए शास्त्रार्थों या पारस्परिक विचार विमर्शों द्वारा सही समाधान खोजा जाता था एवं किसी सही निष्कर्ष पर पहुँचा जाता था। सभी को वैचारिक स्वतन्त्रता थी क्योंकि सहिष्णुता के आधार पर किसी निर्णय पर पहुँचने के लिए ही शास्त्रार्थ होते थे। सहिष्णुता के आधार पर ही बड़ी से बड़ी सामाजिक, धार्मिक समस्याएं हल हो जाती हैं। महाकवि कालिदास के युग में भी शास्त्रार्थं का अधिक प्रचलन था क्योंकि उसके जीवन में इन्हीं विद्वत्तापूर्ण शास्त्रार्थों ने ही सही दिशा दी है।

हिमालय के उत्तराखण्ड का भूभाग ऋषि, मुनियों, विद्या के आश्रमों और विद्वानों का जन्म स्थान रहा है। हरिद्वार से ऊपर का भूभाग देवभूमि एवं तपो-भूमि के ही नाम से जाना जाता था। उस युग में विद्वान् सन्तोषी, सहिष्णु, उदार, काव्यशास्त्र विनोदी और विद्या दान करने वाले होते थे। क्योंकि तब विद्या दान ही सबसे बड़ा दान एवं जीवन में सही दिशा दिखाने वाला मार्ग माना जाता था और समाज में विद्वानों को सर्वोच्च स्थान दिया जाता था। इसी दृष्टि से उत्तराखण्ड में अनेक बड़े-बड़े विद्या के केन्द्र चलते थे। ये सभी विद्या के केन्द्र शान्त एकान्त में ही होते थे जिनमें बालक-बालिकाएं निशुल्क बिना भेदभाव के शिक्षा ग्रहण करते थे। उस युग में राजा महाराजा इस पुनीत कार्य में आर्थिक रूप से बहुत बड़ी सहायता और विद्वान् विद्यादान देते थे किन्तु इतनी सहायता देने पर भी उन राजाओं का उन विद्या के केन्द्रों पर किसी भी प्रकार का नियन्त्रण नहीं होता था। बड़े-बड़े धनवान् और राजा उन त्यागी तपस्वी विद्वानों के समक्ष अपने आसन को छोड़कर आदर से उठ जाते थे। सभी आश्रमों के विद्यार्थी वनों से लकड़ी, फल-फूल, कन्द-मूल और समय पड़ने पर गृहस्थियों से भी भिक्षा मांगकर गुरु गृहों में विनीत होकर विद्या ग्रहण करते थे। अनुशासन में रहकर गुरुगृहों में विद्यार्थी शारीरिक और बौद्धिक विकास कर समाज के सच्चे सेवक तथा राष्ट्र के सच्चे रक्षक बनते थे। वास्तव में विद्या विद्यार्थी को विनम्रता, सही ज्ञान और पात्रता देती है। यहीं से ही अच्छे विद्यार्थी योग्य बन कर सभी क्षेत्रों में अपनी योग्यता का समाज की सेवा कर परिचय देते थे।

विश्व में महाकवि कालिदास के नाम से विख्यात होने वाले बालक का जन्म प्रकृति के सुरम्य एवं स्वच्छन्द वातावरण में हिमालय उत्तराखण्ड के अन्तिम छोर केदारखण्ड में ईसा की प्रथम शताब्दी के ५७ वर्ष पूर्व गुप्तकाशी के समीपवर्ती परमसिद्ध स्थली कालीमठ के निकट कविल्ठा ग्राम में एक मध्यम वर्गीय संस्कारी ब्राह्मण परिवार में हुआ था। यह गांव जगज्जननी काली के उपासकों अथवा पुजारियों का गांव था। इसमें मुख्यरूप से परम्परागत आधार पर दो ही ब्राह्मण जातियों के भट्ट और गौड़ लोग ही निवास करते थे और क्षत्रिय जाति के लोग भी उसमें रहते थे। वैसे चारों गढ़वालों (पौड़ी गढ़वाल, चमोली गढवाल, टिहरी-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गढ़वाल और उत्तर काशी-गढ़वाल) में प्रायः गौड़ ब्राह्मण ही अधिक रहते हैं। कुछ लोग गढ़वाल में अपने गाँव के नाम के आधार पर नाम लिखते हैं और कुछ गौड़ ब्राह्मण होने से भी गौड़ ही लिखते हैं। उनमें से ही किसी एक परिवार में इस पूर्वार्जित विद्या एवं विचित्र प्रतिभा के बालक कालिदास का जन्म हुआ था। उस बालक के माता-पिता निश्छल, निष्पाप, निष्कलंक एवं परम धार्मिक प्रवृत्ति के थे। उनके संस्कारों और कर्मों का भी उस बालक पर प्रभाव पड़ना आवश्यक था किन्तु जिन्होंने संसार मे स्वावलम्बी बनकर कुछ कार्य करना होता है, वे आत्मविश्वासी बनकर जीवन में एकाकी ही संघर्ष करके अपने क्षेत्र विशेष में संसार के लिए पथ प्रदर्शक बनते हैं। एकाकी संघर्ष करना सबके साहस का कार्य नहीं है।

माता-पिता ने संस्कारी होने के कारण अपने बालक के विवाह संस्कार के अतिरिक्त सभी अन्य संस्कार विधिवत् कर दिए थे। महाकवि बनने वाले कालिदास ने रघुवंश के दूसरे और तीसरे सर्ग में राजा दिलीप का पुत्र प्राप्ति के लिए नन्दिनी की सेवा करना तथा रघु के मुण्डन, यज्ञोपवीत संस्कार कराकर बाइसवें वर्ष में विवाह संस्कार दिखाया है। संस्कारादि शुभकार्यों का अपने ठीक समय पर होने से ही बुद्धि का सम्यक् रूप से परिमार्जन या परिष्कार हो जाता है और उदण्डता समाप्त हो जाती है। अपने संस्कारों की भी स्मृति उस महाकवि को आई ही होगी। बालक कालिदास रूपी पुत्र की प्राप्ति भी माता-पिता को अत्यधिक कठिनाई और बहुत बड़ी अवस्था में हुई। यह पुत्र उन्हें कालीमठ की सिद्धपीठ में प्रार्थना करने पर ही प्राप्त हुआ था। जिससे उसका नाम कालिदास ही पड़ गया। पिता अपने कार्यों को पूरा करके कुछ ही दिनों में स्वर्ग सिधार गये। माता के ऊपर सारी गृहस्थी और उस होनहार पुत्र का भार पड़ गया। माता अपने गृहस्थी के दायित्वों के कारण एवं बड़ी अवस्था में होने, एकलौती लाड़ली सन्तान होने के कारण भी शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध नहीं कर सकी।

भारतीय संस्कृति और उत्तराखण्ड

उस युग में समस्त उत्तराखण्ड में वैदिक संस्कृति, ब्राह्मण धर्म और संस्कृत भाषा का सबसे अधिक प्रसार एवं प्रचार था। महाकवि बनने पर महाकवि कालिदास ने जिसे रघुवंश में सबसे अधिक दिखाया है, अपने माता-पिता के पुत्र प्राप्ति के प्रति कालिदास ने रघुवंश में दिलीप के द्वारा इस प्रकार के शब्द कहलाये हैं जो उसने गुरु वशिष्ठ को कहे थे। कालिदास के माता-पिता ने भी काली से पुत्र प्राप्ति के लिए यही कामना की थी।

'देव ! तपस्या करने से और ब्राह्मणों को दान देने से जो पुण्य होता है, वह तो केवल परलोक में ही सुख देता है परन्तु अच्छी सन्तान, सेवा-सुश्रूषा करके इस लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में जो सुख देती है साथ तर्पण और पिण्डदान आदि करके परलोक में भी सुख देती है।'[1]

उस युग में गाँवों में भी गाँव के विद्वानों द्वारा छोटे-बच्चों को विद्याध्ययन के लिए भी निजी पाठशालाएँ चलती थीं। वेदों को ज्ञान-विज्ञान का भण्डार एवं भारतीय संस्कृति का मूलाधार माना जाता है। कविल्ठा गाँव से गुप्तकाशी कुछ ही मील दूर रही होगी। जहाँ वहाँ के राजा शारदानन्द और वहाँ के त्यागी, तपस्वी विद्वानों द्वारा कई विद्या के केन्द्र चलते थे एवं पण्डितों का गाँव होने से गाँव में भी बच्चों को प्रारम्भिक शिक्षा देने एवं संस्कारी बनाने का प्रबन्ध था किन्तु कालिदास की माँ अपनी परिस्थितियों, एकलौते पुत्र होने, कठिनाइयों से प्राप्त होने तथा पिता के न होने से उसे अपने से दूर नहीं होने देती थी। यहाँ तक कि खेतों, बनों में जाते हुए भी उसे साथ ले जाती थी। कुछ बड़ा होने पर वह अपने पशुओं को वन में चराने भी ले जाने लगा। यहीं से उसे हिमालय की विस्तृत प्राकृतिक छटा को देखने का सौभाग्य प्राप्त होने लगा। ईश्वर की लीला भी बड़ी विचित्र है कि उसे जिसको जैसा बनाना होता है, उसके लिए वैसी ही पृष्ठभूमि तय्यार कर देता है और उसे वैसा ही बना कर दिखाता है। माता अपने बालक को वनों, पर्वतों से आने से विलम्ब होने पर भी भयभीत हो जाती थी। प्रत्येक माता अपने बालक का निकट का भला चाहती है। अतः उसकी इच्छा के विरुद्ध पढ़ने-लिखने जैसे कार्यों के लिए बाध्य नहीं करती थी किन्तु प्रत्येक पिता अपनी सन्तान को अपने से अच्छी स्थिति में देखना चाहता है और उसे अच्छा बनाने के लिए ही कठोर व्यवहार भी करता है परन्तु बालक कालिदास का पिता पहले ही परलोक सिधार गया था। अतः इस दृष्टि से उस पर ध्यान नहीं दिया गया।

ईश्वर की यह एक विचित्र लीला है कि जिसे वह सांसारिक माया में फंसाकर स्वार्थी बनाना चाहता है, उसे विभिन्न प्रकार के सुख, सम्पत्ति एवं अनेक प्रकार के साधन देकर निन्यानवे के फेर में डाल देता है किन्तु जिससे उसे संसार की सेवा और लोक कल्याण के लिए कुछ कार्य करवाना होता है, उसका सर्वस्व हरण कर उसे एकाकी संसार में संघर्ष करने के लिए विपन्नावस्था में ही छोड़ देता है। जब मानव के बुरे दिन आते हैं तो वह कह कर नहीं आते और जब विपत्तियाँ आती हैं तो चारों ओर से आती हैं। बालक कालिदास का एकमात्र सहारा तथा सहायक माता ही थी किन्तु वह भी सहसा इस संसार से अपने बच्चे को पूर्ण अनाथ छोड़कर चल बसी। अब एकाकी और असहाय बालक गाँव वालों की कृपा पर आश्रित हो गया। लोग अपनों को देखें या मातृ-पितृ हीन बालक

१—लोकान्तरसुखं पुण्यं तपोदानसमुद्भवम्।
सन्ततिः शुद्धवंश्या हि परत्रेह च शर्मणे॥ रघुवंश १ सर्ग ६९ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कालिदास को देखें। बालक कालिदास गायों को चराने, वन जाने के लिए अधिक उत्सुक रहता था। अतः अन्य लोगों के साथ भोजन आदि करके वनों में चला जाता था। अब तो उसकी चिन्ता करने वाला ईश्वर और उसके कर्मों के अतिरिक्त कोई नहीं था।

इस बालक को बाल्यकाल से ही हिमालय के सन्निकट के भूभाग केदारखण्ड में शिव-पार्वती के कैलास, यक्षों की अलकापुरी तथा मनोहर प्रकृति के सुन्दर-तम स्वरूप की कहानियों को सुनने की रुचि थी। अपनी ही आँखों से उसमें उस प्रकृति की ही छटा, नदियों का कल-कल निनाद, झरनों का जल प्रपात, पेड़-पौधों औषधियों और वनस्पतियों को अति सन्निकट से देखने की उत्कण्ठा होती थी। अतः वह गायों को चराने, घास लाने पर्वतीय पर्यावरण को अति निकट से देखने के लिए वन जाने में अधिक रुचि लेने लगा। महाकवि कालिदास ने अपने बाल्य काल के अनुभवों को रघुवंश में राजा दिलीप को हिमालय की ही उन्नत घाटियों में वशिष्ठ मुनि की नन्दिनी को चराते हुए दिखाया है :—

दूसरे दिन नन्दिनी ने राजा दिलीप की भक्ति को जानने के लिए शीघ्रता से घास चरते-चरते हिमालय की ऐसी गुफा में घुस गई, जिसके ऊपर ऊँचाई से गंगा की धारा गिरने से आस-पास हरी-हरी घास जमी हुई थी।[1]

इतना ही नहीं अपितु अपनी गाय सेवा और पशुधन की सुरक्षा का रघुवंश के प्रथमसर्ग में सम्राट् दिलीप के रूप में दिखाया है :—

'सम्राट् दिलीप बड़ी लगन से नन्दिनी की सेवा करता था। कभी तो वह उसे रसीली घास की मुट्ठियाँ खिलाये थे, कभी उसकी देह को खुजलाते थे और मक्खी, मच्छर उड़ाते थे एवं वह जिधर भी जाना चाहती थी उसे जाने देता था।'[2]

मानव के जीवन में वैदिक काल से पशुओं का एक महत्त्व पूर्ण स्थान है। यज्ञों के सम्पादन, आरोग्य जीवन के लिए दूध और कृषि के उत्पादन एवं भार ढोने में पशु की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका है। अतः उसकी सुरक्षा एवं खाद्य सामग्री का भी ध्यान रखना आवश्यक था। बालक कालिदास गायों की रक्षा और उनके साथ दूर तक हिमालय के प्राकृतिक सौन्दर्य को देखता रहता था।

१—अन्येद्युरात्मानुचरस्य भावं जिज्ञासमाना मुनि होम धेनुः।
गंगाप्रपातान्तविरूढशष्पं गौरीगुरोर्गह्वरमाविवेश॥
रघुवंश २ सर्ग २६ श्लोक

२—आस्वादवद्भिः कवलैस्तृणानां कण्डूयनैर्दंशनिवारणैश्च।
अव्याहतैः स्वैरगतैः स तस्याः सम्राट् समाराधनतत्परोऽभूत्॥
रघुवंश २ सर्ग ५ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर्वतीय प्रदेश के लोग शीतप्रधान भूमि में रहने के कारण रूप में सुन्दर, सौम्य, कठोर परिश्रमी, साहसी, उत्साही, निर्भीक, प्रकृति से सामंजस्य रखते हुए उसके स्वाभाविक रूप को निहारने के अभ्यस्त होते हैं। पर्वतों ने अपने कठोर स्वरूप से पर्वतीय प्रदेश के लोगों को कठोर परिश्रमी, वनों की औषधियों से निरोग तथा कन्द-मूल, फल-फूलों और वनस्पतियों से दीर्घायु पाई है। नदियों ने अपने स्वच्छ जल से निष्कपट हृदय, उदारता देकर दूसरों की सेवा करना और सन्तोषी बनना सिखाया है। हिमालय के उत्तराखण्ड के प्राकृतिक भूभाग से बालक कालिदास बाल्य काल से ही अत्यधिक प्रभावित था। यही कारण था कि वह प्रकृति का कवि और उपमा का धनी बना। संस्कृत के विद्वानों में 'उपमा कालिदासस्य' एक प्रसिद्ध उक्ति इसी आधार पर ही बन गई। बालक कालिदास ने अपने बाल्यकाल में ही प्रकृति का दर्शक बन कर अधिक भ्रमण करके सूक्ष्म निरीक्षण किया है। क्रौंचरंध्र पर्वत, कैलासपर्वत, शिवपार्वती के क्रीड़ाशैल, गौरी की साधनास्थली, यक्षों की अलकापुरी, गन्धमादक पर्वत केदारखण्ड की सम्पूर्ण भूमि एवं हिमालय के विस्तृत भूभाग का कालिदास ने अति ही सन्निकट से अपने शैशव काल में सूक्ष्मरूप में दर्शन कर उन स्थानों को अपने हृदय में एक जन्मजात चित्रकार की तरह संजोया था। यही कारण था कि अलकापुरी; कैलास पर्वत, हिमालय की राजधानी औषधिप्रस्थ नगर, गौरी शिखर का अपने प्रथम और द्वितीय काव्य कुमारसम्भव एवं मेघदूत में बाल्यकाल तथा यौवन काल की सही स्थितियों का ऐसा वर्णन किया है जिसे दूर का कोई व्यक्ति कल्पना के आधार पर भी इतनी सूक्ष्म विधि से कभी भी नहीं कर सकता है। क्योंकि यही तो महाकवि कालिदास की जन्मदात्री भूमि है। इसीलिए यह प्रसिद्ध उक्ति है कि जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी अच्छी होती है। जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।

प्रकृति प्रेमी कालिदास

बालक कालिदास प्रकृति के स्वच्छन्द वातावरण में माता-पिता की मृत्यु के पश्चात् पूर्ण निश्चिन्त और स्वतन्त्र होकर घूमता रहता था। समय मिलने पर अपने ग्राम के ज्योतिर्विदों, गुणज्ञों, कर्मकाण्डियों, कलाविदों वृद्धजनों, संगीतज्ञों से भी बहुश्रुत होकर कुछ न कुछ सीखता ही रहता था। उनका सुना, सीखा और देखा हुआ सभी कुछ हमें महाकवि बनने पर उसकी रचनाओं में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

पूर्व जन्म के किए कर्म और उपार्जित विद्या समय के आने पर मनुष्य के साथ-साथ चलकर उसे अपना भला-बुरा फल अवश्य दिखाते हैं। मानव की प्रतिभा को कभी भी कोई पानी के प्रवाह के समान अवरुद्ध नहीं कर सकता है और यदि कर भी सकता है तो कितने दिन तक? बालक कालिदास बाल्यकाल से प्रतिभावान् था किन्तु उसे दिशा निर्देश करने वाला कोई नहीं मिल पाया। प्रतिभावान् व्यक्ति

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को सत्संग न मिलने से कुछ अधिक दिन प्रतिभा के सही स्वरूप को देखने के लिए विशेष प्रतीक्षा करनी पड़ती है।

रूपवान् बालक कालिदास नख-शिख से देखने में आकर्षक तो था ही और उसके साथ उसकी अवस्था भी बढ़ती जा रही थी। मातृ-पितृ विहीन होने से शिक्षा-दीक्षा एवं वैवाहिक कृत्य कैसे हो सकते थे? वह कुशाग्र बुद्धि का था, वाक् पटु और प्रकृति के सूक्ष्म निरीक्षण में अत्यन्त ही जिज्ञासु था। उसकी इस अन्तर्मुखी प्रतिभा को परिवार के लोग नहीं समझ पाते थे और उसको घुमक्कड़ कहकर उसकी अवहेलना करते थे। बालक कालिदास अपनी पृष्ठभूमि प्रकृति के अति सन्निकट रहकर तय्यार करता जा रहा था जिसे कोई भी नहीं समझ पाता था। गाँव के कुछ ज्योतिषशास्त्र के पारंगत विद्वान् और काली के उपासक यह भी कहा करते थे कि यह बालक एक दिन अवश्य ख्याति प्राप्त करेगा किन्तु परिवार के कुछ निकट के लोग उसे कोसते थे और कहते थे कि यदि यह इतना ही भाग्यशाली होता तो अपने माता-पिता को इतनी छोटी उम्र में खा लेता। कुछ करता ही नहीं न पढ़ने-लिखने में रुचि ही लेता है न पौरोहित्य कार्यों को ही सीखना चाहता है। दिन-रात नदियों के किनारे और वनों में ही घूमता रहता है। कालिदास के गाँव के नीचे पार्वती की तपस्थली के निकट खाम की ओर से और केदार से मन्दाकिनी की ही एक छोटी धारा आती है। जहाँ बालक कालिदास का अधिक समय दूर-दूर तटों के निहारने में ही लग जाता था। वह सभी प्राकृतिक सम्पदा को बड़ी ही आत्मीय दृष्टि से देखता था कई दिनों तक वह कहीं दिखता ही नहीं था।

कालिदास ने अपने जीवन के प्रारम्भिक दिनों में अपने निकट के प्रकृति के पर्यावरण से इस प्रकार का सम्बन्ध स्थापित कर लिया था कि प्रकृति ही उसकी प्रारम्भिक पाठशाला बन गई थी। वह प्रकृति के प्राकृतिक स्वभाव से ही कुछ न कुछ उसकी ही मूक भाषा में सीखता जा रहा था। वह अपनी गुणग्राही दृष्टि से प्रकृति के स्वाभाविक उपकारी गुणों को अपने स्मृति पटल में संजोता जा रहा था। उस युग के घनघोर जंगलों में वन्य जीवों के आधिक्य से किसी का एकाकी जाने का साहस ही न हो पाता था। वास्तव में वन्य जन्तु तभी हिंसक बनने प्रारम्भ हुए जब मानव ने उनसे हिंसा की वृत्ति से प्रहार करना शुरू किया। वैसे ऋषि-मुनियों के आश्रमों में सभी वन्य जीव आश्रय पाते ही थे और विद्या के केन्द्रों में अध्ययन करने वाले ब्रह्मचारी दूर-दूर तक लकड़ी कन्द-मूल एवं अपने गुरुओं की गायों को चराने के लिए जाते ही थे किन्तु कभी किसी हिंसक वन्य जीव जन्तु ने उन्हें कोई हानि नहीं पहुँचाई, हिंसा हिंसा से ही बढ़ती है। वनों में हिंसक से हिंसक पशु-पक्षी भी हिंसा रहित होकर लोगों से आत्मीय सम्बन्ध कर लेते हैं। ऋषि-मुनियों के संग से भी हिंसक जीव अपने सहज भावों को छोड़कर मैत्रीपूर्ण ढंग पर रहने लगते हैं। संगत से ही बुरा भला बना जाता है। वन्य जीवों को भी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मनुष्य की तरह अपने प्राण प्रिय होते हैं। वे मनुष्य से डरते हैं और दूर रहते हैं। जब मनुष्य ने अस्त्र-शस्त्रों से जीव-जन्तुओं को मारना प्रारम्भ किया तभी से उनमें हिंसक वृत्ति जाग्रत हुई है।

कालिदास ने महाकवि कालिदास बनने पर अपने काव्यों एवं नाटकों में प्रकृति का वर्णन करते हुए प्रसंग के अनुरूप वन्य जीवों का भी वर्णन किया है किन्तु कहीं उन्हें हिंसक नहीं दिखाया है। प्रकृति तथा उसके जीव-जन्तु आदि भी सामंजस्य रखते हुए अपने संतुलन को नहीं बिगाड़ते थे।

महाकवि कालिदास ने अपनी अन्तिम रचना तथा नाटकों में विश्वविख्यात नाटक शकुन्तला में राजा दुष्यन्त के पुत्र भरत को शेर के बच्चों के दांतों को गिनते हुए तथा उनके साथ खेलते हुए दिखाया है :—

'माता के अर्द्ध स्तनपान किये हुए और घसिटने से बिखर गये हैं बाल जिसके ऐसे सिंह के बच्चे को क्रीड़ा करने के लिए हाथ से ही खींच रहा है।'[१]

शेरनी के ही समक्ष बालक भरत उसके बच्चे को दूध पीते हुए छीनता है, उसे घसिटता है किन्तु शेरनी कहीं भी अपना आक्रोश नहीं दिखाती है न अपने बच्चे की ऐसी स्थिति होने पर भी कहीं गुर्राती तक नहीं। भरत शेर के बच्चे से कहता है :—जृम्भस्व रे सिंहशावक! 'जृम्भस्च दन्तान् ते गणयिष्यामि' (हे सिंह के बच्चे! अपना मुंह खोल मैं तेरे दांतों को गिनूंगा।) महाकवि कालिदास ने बाल्यकाल से प्रकृति के साथ यह सब देखा है और हिंसक जीवों से भी कितना सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध दिखाया है।

उत्तराखण्ड देवभूमि और तपोभूमि का नाम बहुत बाद में गढ़वाल नाम से भी जाना गया है क्योंकि इस पर्वतीय भू भाग की सीमा अत्यधिक विस्तृत तिब्बत, नेपाल तक फैली है। ऐसी स्थिति में प्रजा के हितों की सुरक्षा के लिए अनेक गढ़-धारी राजा यहां राज्य करते थे। अतः यह विस्तृत भूभाग का नाम तभी से गढ़वाल पड़ गया। सम्पूर्ण गढ़वाल के चारों जिले (पौड़ी गढ़वाल, चमोली-गढ़वाल, टिहरी-गढ़वाल, और उत्तरकाशी गढ़वाल) उस समय एक ही थे। यहाँ धार्मिक भावनाओं का बाहुल्य था। भारतवर्ष की धार्मिक जनता श्रद्धा को लेकर यहां अनेक कष्टों को झेलती हुई पद यात्रा करके हरिद्वार से प्रवेश करती थी। सांसारिक प्रपंचों से संतृप्त होकर ही धार्मिक व्यक्ति पद यात्रा कर शान्ति पाने के लिए इस उत्तराखंड में आते थे। यहाँ के शांत, एकान्त, निश्चिन्त तपस्या के योग्य स्थान, देवस्थान, पापनाशिनी नदियों के संगमों, तपस्वियों के आश्रमों, फल-फूलों, कन्द-मूलों, गुणकारी जड़ी-बूटियों, औषधियों, वनस्पतियों से भरा हुआ विस्तृत भूभाग देखकर तपस्या एवं धार्मिक भावनाओं के लोग शनैः-शनैः यहीं बसने लगे। उस युग में यहाँ पाप की छाया तक नहीं थी। अधिक संग्रह से लोभ उत्पन्न होता है और

---

१. अर्धपीतस्तनं मातुरामर्दक्लिष्टकेशरम्।
प्रक्रीडितं सिंहशिशुं करेणैबावकर्षति ।। शकुन्तलानाटक ७ अंक १४ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लोभ से ही समस्त प्रकार की बुराइयाँ उत्पन्न होती हैं। यहीं कारण था कि इस उत्तराखण्ड में ऐसी भावनाएँ नहीं थीं, तभी सर्वत्र शान्ति, सुख और धार्मिक भावनाएँ फैली हुई थीं। यह धर्म प्रधान भू भाग था जिससे भारत के अधिक भू-भागों के लोग यहाँ यात्रा करने आते थे।

महर्षि वेदव्यास ने इसी उत्तराखण्ड में अठारह पुराणों की रचना की। गहन विषयों पर मनन कर उनके रहस्यों को संसार के कल्याण के लिए खोजा है। अर्जुन ने खांडव वन में यहीं तपस्या कर शिव को प्रसन्न कर गांडीव धनुष प्राप्त किया। महाकवि भारवि ने किरातार्जुनीय महाकाव्य में इसे विशद रूप में वर्णन किया है। सन्त महात्माओं ने यहीं से जगत् कल्याण के मार्ग खोजे हैं। छठी शताब्दी में जगत्-गुरु शंकराचार्य ने सर्वप्रथम यहीं जोशीमठ में ज्योतिर्पीठ की स्थापना की और तीर्थों का महत्त्व स्थापित कर बद्रीनाथ एवं केदारनाथ में अनेक कार्य किये। उसके बाद ही अन्य तीन धामों की स्थापना हुई। अन्त में यहीं आदि गुरु शंकराचार्य ने भी केदारभूमि में समाधिस्थ होकर शरीर छोड़ा है।

उत्तराखण्ड का आकर्षण आज भी लोगों के मन में है किन्तु भौतिक सुखों के आकर्षण से मानव का मन आज स्थिर और एकाग्र नहीं हो पाता है। आज इस औद्योगिक युग में अर्थ ही मुख्य हो गया है। अत: हिमालय को वस्त्रहीन करने, वनों की निर्मम कटाई, वन्यजीवों की हत्या, दुर्गम स्थानों को विलासियों तथा भ्रमणार्थियों के लिए सुगम बनाने से पर्यावरण प्रदूषण और यहाँ की प्राकृतिक स्थिति विपरीत होती जा रही है। यहाँ के आध्यात्मिक चिन्तन में लगे हुए साधु, संन्यासी, महात्मा और तपस्वी भी दूर भागते जा रहे हैं या समाधि लगाकर लीन होने लगे हैं या अदृश्य होकर मायावियों से सम्बन्ध छोड़ते जा रहे हैं। प्रकृति हवा पानी. वर्षा में भी परिवर्तन होते जा रहे हैं। लगता है हम विकास कर रहे हैं किन्तु वास्तव में प्रकृति के साथ असांमजस्य करके विनाश की ओर जा रहे हैं। प्रकृति हमारे विपरीत क्यों हो रही है? क्योंकि हमसे उससे पूर्ण सामंजस्य तोड़कर अपना स्वार्थसिद्ध करना प्रारम्भ कर दिया है। प्रकृति के विरुद्ध कार्य करने से मानव-अधिक दुखी होता जा रहा है और सन्तुलन बिगड़ता जा रहा है। सम्पूर्ण विश्व में पर्यावरण प्रदूषण की समस्या बढ़ती जा रही है।

प्रकृति में स्वच्छन्द विचरण करने वाला प्रकृति प्रेमी बालक कालिदास जिसे हो सकता है लोग किसी और नाम से भी पुकारते रहे हों वह प्रकृति रूपी पुस्तक के अध्ययन में पूर्णरूप से व्यस्त रहता था। ऋषि-मुनियों विद्वानों की ओर से श्रीनगर, रुद्रप्रयाग, अगस्तमुनि और गुप्तकाशी के निकट के आश्रमों के नाम भी वह सुनता रहता था किन्तु वह प्रकृति के अति सन्निकट होकर उसके विस्तृत रूप को अपनी आँखों में संजोता रहता था क्योंकि उन्हीं दृश्यों ने ही उसके काव्यों का वर्ण्य विषय बनना था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उन्हीं दिनों उसके निकट के शिक्षा केन्द्रों में विद्वानों में अपने द्वन्द्वों को दूर करने एवं विद्या के वैभवपूर्ण पाण्डित्य को दिखाने के लिए शास्त्रार्थ हुआ करते थे। ज्ञान की कभी भी इति नहीं होती है। अनभ्यासे विषं विद्या, स्वाध्यायान्मा प्रमदः के आधार पर विद्या प्रयोग में लाने से ही विकसित होती है और सम्मान देती है। स्वाध्याय के प्रति उदासीन होने से कर्तव्य भ्रष्ट और अनभ्यास से विद्या भूल जाती है। इन्हीं आश्रमों में सुयोग्य तथा अपने विषयों के पारंगत विद्वानों द्वारा बिना भेदभाव के बालक-बालिकाओं को शिक्षा दी जाती थी। विद्या से व्यक्ति बुद्धिमान्, विद्वान, विनम्र, ज्ञानी, व्यवहार कुशल होता है और अपना आत्मकल्याण कर सकता है। विद्यारूपी धन को पाकर व्यक्ति नम्र होता है और सम्पत्ति रूपी धन को पाकर दम्भी बनता है। अच्छे लोग इसीलिए धन के बढ़ने पर उसे दान भी करते रहते हैं। सम्पत्ति, वैभव और विद्या के विनीत भावों को महाकवि कालिदास ने प्रकृति के द्वारा सीखे हुए एवं देखे हुए भावों को शकुन्तला नाटक में इस प्रकार व्यक्त किया है :—

'वृक्ष फलों के लगने पर विनम्र-झुक जाते हैं। मेघ जल भर जाने पर नीचे झुक जाते हैं। सज्जन लोग वैभव को पाकर विनम्र हो जाते हैं यह परोपकारियों का स्वभाव ही है।'[१]

राजा और कुएँ से सभी लाभ नहीं उठा सकते हैं। केवल गुण वाले ही इनसे लाभ ले सकते हैं। गुण ज्ञान और रस्सी के लिए यहाँ प्रयुक्त हुए हैं। गुण है तो राज दरबार में पहुँच सकते हैं। रस्सी है तो कुएँ से पानी पी सकते हैं। वास्तव में 'राजा के चित्त, कृपण के वित्त, स्त्री के चरित्र और मनुष्य के भाग्य को दैव नहीं जानता पुनः मनुष्य की तो बात ही क्या।'[२] कालिदास गुण के कारण ही राजा विक्रमादित्य की सभा का श्रेष्ठ नवरत्न बना।

राजा शारदानन्द और गुप्तकाशी

उत्तराखण्ड के केदारखण्ड की भूमि में मन्दाकिनी के तट पर और प्रसिद्ध विश्वनाथ के मन्दिर के निकट गुप्तकाशी के संस्कारी, गुणग्राही, विद्यानुरागी, राजधर्म के ज्ञाता और प्रजा की रक्षा करने वाला शारदानन्द नाम का एक पराक्रमी विद्वान् राजा रहता था। उसकी महाविदुषी, स्वाभिमानिनी, यशस्विनी और परम सुन्दरी एक कन्या थी, जिसका नाम विद्योत्तमा था। जिसकी विद्वत्ता की ख्याति बहुत दूर-दूर तक फैली हुई थी। उस युग में पुरुषों के समान नारियाँ भी अपने

---

१. भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमैर्नवाम्बुभिर्दूरविलम्बिनो घनाः।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्॥
शकुन्तलानाटक ५ अंक १३ श्लोक

२. नृपस्य चित्तं कृपणस्य वित्तं स्त्रियाश्चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं दैवो न जानाति कुतो-मनुष्यः।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पाण्डित्य में किसी भी प्रकार से कम न थीं। सोलह संस्कारों में चतुर्वर्ग की प्राप्ति में विवाह संस्कार को भी सबसे अधिक महत्त्व दिया गया है क्योंकि विद्या प्राप्ति के पश्चात् यहीं से ही व्यक्ति सच्चा सामाजिक बनकर अपने दायित्वों को समझता था, और पितृऋण, ऋषिऋण एवं देवऋण से उऋण होकर मुक्ति को पाता था। विद्या के क्षेत्र में विद्वत्ता का सर्वोच्च स्थान था। उस युग में विद्या के वैभव को धारण करने वाले विद्वान् एवं विदुषियाँ वाणी के धनी और आचरण के परम पवित्र होते थे। गुणी का गुणज्ञ के साथ सभी प्रतिमानों को छोड़कर वैवाहिक सम्बन्ध हो जाता था। गुरु परिवार, गुरु पुत्री और शिष्या से वैवाहिक सम्बन्ध उसकी पवित्रता एवं सुरक्षा के कारण उचित नहीं माने जाते थे। वृहस्पति के पुत्र कच ने मृत संजीवनी विद्या शुक्राचार्य से सीखने के कारण गुरु पुत्री देवयानी के अनेक आग्रह करने पर भी विवाह सम्बन्ध अनुचित माना और इसी आधार पर विवाह नहीं किया।

काशी और गुप्तकाशी

संस्कृत के विद्वानों ने और इतिहास के लेखकों ने नगरों के वातावरण में बड़े-बड़े प्रसिद्ध नगरों को अच्छी प्रकार से देखा है। अति प्राचीन काल में उत्तराखण्ड में गुप्तकाशी नाम की एक प्रसिद्ध नगरी थी जिसका राजा शारदानन्द था किन्तु उसे संस्कृत के विद्वानों ने बहुत बाद में गुप्तकाशी का नहीं काशी का राजा मानकर उसकी महाविदुषी पुत्री विद्योत्तमा को भी काशी का ही मान लिया और उनके नाम से अनेक कहानियाँ प्रचलित की हैं। भागवत पुराण में काशी का महत्त्व इस प्रकार पाया है— जिस प्रकार सभी क्षेत्रों में काशी को उत्तम माना गया है।'[1] काशी का वास एवं मृत्यु को मुक्ति को देने वाला माना है।[2] अतः उत्तराखण्ड की गुप्तकाशी का नाम शारदानन्द और विद्योत्तमा के पश्चात् लोग भूलने लगे और उत्तराखण्ड की गुप्तकाशी भुलाई जाने लगी। राजा शारदानन्द भी काशी का माने जाने लगा। साधन सम्पन्न होने से काशी का नाम अधिक प्रसिद्ध हो गया।

वास्तव में उत्तराखण्ड का पर्वतीय भूभाग दुर्गमस्थान में होने के कारण उसके वैभव, प्राकृतिक सौन्दर्य और महाकवि कालिदास के ग्रन्थों की पृष्ठभूमि को सभी नहीं जानते। कुछ विद्वानों ने जिन्हें उत्तराखण्ड का महत्त्व ज्ञात नहीं है, उन्होंने गुप्तकाशी से गुप्त शब्द को छोड़ दिया और काशी के नाम को जानने के कारण उसे शारदानन्द एवं विद्योत्तमा के साथ जोड़ दिया। क्योंकि उन दिनों कालिदास, विद्योत्तमा, शारदानन्द और गुप्तकाशी की चर्चा सर्वत्र अधिक फैली हुई थी। वास्तव में हिमालय के उत्तराखण्ड को कालिदास ने अपने कुमारसम्भव के प्रथम श्लोक में

---

१. क्षेत्राणां चैव सर्वेषां यथा काशीह्यनुत्तमा।
भागवत १२ स्कन्ध १३ अध्याय १७ श्लोक

२. काशीमरणान्मुक्ति।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस प्रकार अपनी जन्मभूमि की ओर संकेत करते हुए परिचय दिया भी है—'उत्तर दिशा में दिशि देवता के समान हिमालय नाम का एक नगाधिराज है।'[१]

कालिदास के हृदय के इस प्रकार से विचारों को देखकर भी द्रविड़ प्राणायाम का सहारा लिया और गुप्तकाशी केदारखण्ड की विद्या की वैभव से परिपूर्ण नगरी को काशी ही मान लिया। कठिनाई और अपरिचय होने से ही सुगमता के लिए ऐसा हुआ है। गुप्तकाशी का कुछ रचनाओं में बहुत बाद में कहीं न कहीं उल्लेख होने से एवं महाकवि कालिदास की विद्वत्ता और प्रौढ़ रचना रघुवंश के आधार पर डा० ए० वी० कीथ ने अपने संस्कृत साहित्य के इतिहास में गुप्त शब्द को प्रमाणिक मानकर ले लिया और काशी को. संस्कृत के काशी को ही जानने वाले विद्वानों ने राजा शारदानन्द को भी उत्तरकाशी से काशी का ही मान लिया। वास्तव में उत्तराखण्ड की गुप्तकाशी, राजा शारदानन्द, महाकवि कालिदास और विद्योत्तमा कि मूल जन्म स्थान को सभी भ्रम में भ्रमित होकर पूर्णरूप से भूल गये 'नैष स्थाणोरपराधो यदन्धो न पश्यति' यदि अन्धा व्यक्ति खम्भे को नहीं देखता है तो क्या खम्भे का दोष है ? यदि कोई उन स्थानों को एवं सही तथ्यों को नहीं जानता है तो क्या वास्तविकता यही है ?

वास्तव में अधिक लोगों ने हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल के भूभाग को दुर्गम होने के कारण देखा ही नहीं है और यदि देखा भी है तो सूक्ष्म दृष्टि से कालिदास के ग्रन्थों के आधार पर उनका तुलनात्मक अध्ययन नहीं किया है। उसी का प्रतिफल है कि ये सब त्रुटियाँ आज तक चली आ रही हैं, उत्तराखण्ड की गुप्तकाशी का काशी शब्द वाराणसी की प्रसिद्धि और विश्वनाथ की प्राचीन नगरी होने से यातायात की सुविधा के कारण अधिक लोगों के मन में घर कर गया है एवं तीन लोक से न्यारी काशी का नाम प्रसिद्ध हो गया। गुप्तकाशी, राजा शारदानन्द, कालिदास और विद्योत्तमा को भी यहाँ से भुलाकर बलात् काशी का माना गया है। बेचारा कालिदास भी कालीमठ की सिद्धपीठ से काली का दास बनकर उत्तराखण्ड से भुलाया गया और दूसरी ओर शाप की स्थिति में अपनी बिद्वत्ता से उज्जयिनी में जाने से उसे वहीं का माना जाने लगा। जब कि उज्जयिनी का केवल मेघदूत में ही अपनी कर्मस्थली के कारण आत्मकथा में वर्णन है। यक्ष-रूपी कालिदास मेघ को अपनी जन्मभूमि में जाने का मार्ग और अपना गुप्त सन्देश देने के लिए ही क्यों अधिक आतुर है ? इस पर महाकवि कालिदास की भावनाओं का गम्भीरता से चिन्तन करना आवश्यक होगा तभी वस्तु स्थिति स्पष्ट होगी।

---

१. अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराज।

कुमारसम्भव १ सर्ग १ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उत्तराखण्ड में दो काशियां हैं—गुप्तकाशी और उत्तरकाशी। ये दोनों नदियों के तटों पर हैं और यहां विश्वनाथ का मन्दिर भी काशी के ही समान है किन्तु फिर भी संस्कृत के विद्वान् उन्हें समय के साथ दूरस्थ होने से भूल गये और उनके महत्त्व एवं कालिदास के जीवन निर्माण करने वाली उत्तराखण्ड की गुप्तकाशी और उसके महत्त्व को दूर बैठे हुए लोग भूल बैठे।

गुप्तकाशी के शारदानन्द की महाविदुषी कन्या विद्योत्तमा ने अपनी विद्वत्ता के कारण उस पाण्डित्यपूर्ण युग में तथा उत्तराखण्ड में विद्वानों के अनेक विद्या के केन्द्रों को देखकर यह प्रतिज्ञा की थी कि 'यो मां जयति शास्त्रार्थे स मे भर्ता भविष्यति।' (जो मुझे शास्त्रार्थ में जीतेगा उससे ही मैं विवाह करूँगी) दुर्गासप्तशती में भी दुर्गा ने शक्तिशाली देव और दानवों को देखकर प्रतिज्ञा की थी कि 'यो मां जयति संग्रामे स मे भर्ता भविष्यति' वास्तव में प्रतिज्ञा करना कितना कठिन कार्य होता है और उसमें भी कठोर (भीष्म) प्रतिज्ञा का परिपालन करना तो उससे भी कठिन होता है। महाविदुषी विद्योत्तमा की प्रतिज्ञा को सुन कर दूर-दूर के विद्वान् विवाह करने, शास्त्रार्थ में जीतने तथा कुछ गुणज्ञ विद्योत्तमा को देखने के लिए आते हो थे किन्तु उसकी विद्वत्ता, प्रत्युत्पन्नमति, वाक् चातुर्य और खण्डन-मण्डन की शास्त्रीय पद्धति से सभी आश्चर्य चकित थे। कोई उस महाविदुषी से शास्त्रार्थ में पार नहीं पा सक रहा था। मूर्खों में ईर्षा और विद्वानों में सदा से प्रतिस्पर्धा होती ही है। रूप, गुण और राजकन्या के दर्शनों के लोभ से बड़े-बड़े गुणज्ञ गुप्त काशी में आते थे किन्तु शास्त्रार्थ में उसे कोई परास्त ही नहीं कर पा रहा था। विद्योत्तमा की प्रतिज्ञा की बात उत्तराखण्ड से भी बाहर विद्वत् मण्डली में फैल चुकी थी जिससे उत्तराखण्ड की यात्रा और शास्त्रार्थ करने की कामना से सुदूरपूर्व के विद्वान् भी आते ही थे। अनेक बार उद्भट् विद्वानों के शास्त्रार्थ विद्योत्तमा से हुए किन्तु उसके पाण्डित्य के समक्ष सभी पराजय से लज्जित होकर चले जाते थे। रानी अपनी कन्या के विवाह के लिए सदा चिन्तित रहती थी किन्तु राजा शारदानन्द उसकी प्रतिज्ञा और प्रगाढ़ पाण्डित्य के कारण कुछ भी नहीं कह पाता था। आकाश पुष्प के समान विद्योत्तमा को पाना तथा उसकी प्रतिज्ञा को तोड़ना उस युग के विद्वानों के लिए अत्यधिक कठिन होता जा रहा था। सभी अत्यधिक चिन्तित थे।

पराजित पण्डितों ने पण्डिता विद्योत्तमा को पराजित करने की अनेक युक्तियां रचीं। दुर्बल, कपटी, घमण्डी पराजित व्यक्ति अपने प्रतिशोध को छल से ही लेते हैं। जब अपने से समर्थवान् को बुद्धि से नहीं जीता जाता है तभी छल, बल और दल से जीता जाता है। उस युग के पराजित विद्वानों ने विद्योत्तमा को पराजित

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करने के लिए एक षड्यन्त्र रचा। प्राय: बुरे कार्यों के लिए—संगठन शीघ्र बन जाते हैं और वैसे ही सहायक भी शीघ्रता से मिल जाते हैं। पराजित पण्डितों ने अपने निकट के और दूर-दूर क्षेत्रों में किसी मूर्ख नवयुवक को खोजने का एक उपक्रम किया। एक बार कुछ विद्वान् गुप्तकाशी से अपने मन के आक्रोध एवं प्रतिशोध को लेने के लिए कालीमठ सिद्धपीठ में प्रार्थना करने गये हुए थे। वह तो सिद्धपीठ है सभी का सच्चे मन से मांगने पर सिद्धि तो मिलती ही है चाहे विलम्ब भले ही हो जाये।

बहुत दिनों तक प्रयत्न करने पर उन विद्वानों ने सन्ध्या के समय कालीमठ में पर्वत श्रृङ्खलाओं और नदी की तरंगों को निहारते हुए किसी पेड़ की कटने की आवाज सुनी और वे उस ओर को चल पड़े तथा ठीक स्थान पर पहुँच गये। वह स्थान कालिदास के गाँव कविलठा और कालीमठ के बीच का स्थान था। एक बालक दिन भर तो वनों में घूमता रहा और सन्ध्या होने पर उसे अपने पशुओं के लिए पत्तियों वाले पेड़ से घास निकालने की याद आई। वह शीघ्रता से घबराता हुआ एक पेड़ की टहनी पर चढ़कर और उसे ही काटने लगा, पर्वतीय भू-भाग में गर्मियों में घास के अभाव में कुछ पत्तियों वाले ऐसे पेड़ होते हैं जिनकी पत्तियाँ घास की तरह पशु हरे घास के कारण बड़े ही चाव से खाते है। पेड़ की टहनी काटने वाला नवयुवक बालक कालिदास ही था जो प्रच्छन्न प्रतिभा वाला था। देखने में अति ही रूपवान्, सौम्य, युवा, स्वस्थ, आकर्षक और आकृति में भोला-भाला था। प्रतिशोधी विद्वान् उसे देखकर प्रसन्न हुए तथा उसका परिचय पूछ कर समझ गये कि यह हमारी कार्यपूर्ति का अच्छा माध्यम है। सहानुभूति और सहायता की भावना से उन्होंने उसे समझाया और अवस्था के अनुरूप विवाह आदि के कई प्रलोभन दिए। दुखी, एकाकी और मूर्ख व्यक्ति विवाह का वास्तविक दायित्व और योग्यता को नहीं समझते हैं अपितु यौवन की क्षुधा की संतृप्ति के लिए शीघ्र ही तय्यार हो जाते है और एकाकी जीवन से दुखी रहने से भी चिन्तित रहते हैं।

महाविदुषी विद्योत्तमा और शास्त्रार्थ

ईश्वर के निर्मित विधान को अल्प बुद्धि वाला मनुष्य नहीं जानता है। ईश्वर तो दूरदर्शी, न्यायकर्ता, दयालु, उपकारी और अपने जनों पर विशेष कृपा रखता है। अत: उसने महामूर्ख कालिदास को महाकवि बनाने का एक सुन्दर संयोग जुड़ा दिया। वास्तव में भारतीय संस्कृति की दृष्टि से नारी सभी स्थितियों में पुरुष की सच्ची प्रेरणा और पथप्रदर्शक रही है। लोगों की ऐसी भी धारणा है कि ईश्वर जो कुछ करता है, वह भले के ही लिए करता है यदि इसे मनुष्य गम्भीरता से सच्चे हृदय से समझे तो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उन विद्वानों के कहने पर नवयुवक कालिदास गुप्तकारी विद्योत्तमा के साथ विवाह करने के लिए तैयार हो गया। वे विद्वानोचित उत्तम मूल्यवान् परिधानों से उस बालक को विभूषित कर गुप्तकाशी ले आये। उस युवा बालक का वहाँ पहुँचने का समाचार इधर-उधर बड़ी तीव्रगति से फैला क्योंकि कई दिनों से शास्त्रार्थों के कार्यक्रम नहीं हो रहे थे। किसी को किसी भी बुरी भावना की आशंका ही नहीं थी क्योंकि केदारखण्ड विद्या के क्षेत्र में बहुत आगे था। यह क्षेत्र साधकों का था। अतः विद्वानों से रहित नहीं हो सकता था। महाकवि कालिदास ने गुण और अवस्था के विषय में स्वयं पार्वती की तपस्या को देखते हुए कहा है—धर्मकार्यों में अवस्था नहीं देखी जाती है अपितु गुण देखे जाते हैं।[1] गुप्तकाशी के राजा शारदानन्द अनेक विद्वान्, प्रजाजन और निष्पक्ष महात्माओं की उपस्थिति में बहुत बड़ी गोष्ठी का आयोजन किया गया था क्योंकि यह कपटपूर्ण पद्धति पर अधिक लोगों के आग्रह पर हो रहा था। प्रतिद्वन्दी और प्रतिशोधी विद्वानों ने राजकुमारी महाविदुषी विद्योत्तमा को शास्त्रार्थ के लिए ललकारा और संकेतों के माध्यम से शास्त्रार्थ करने की शर्त रखी एवं कहा कि ये हमारे गुरु आपसे शास्त्रार्थ करना चाहते हैं, किन्तु ये साधनारत हैं, अतः इन्होंने मौन धारण किया हुआ है। मौन को वास्तव में अर्थों की प्राप्ति का साधन माना जाता है, मौन को किसी कार्य की स्वीकृति का भी लक्षण माना जाता है और मौन को ही विद्वत्ता के परिचय में मूर्खता का द्योतक भी माना जाता है। इस पर कुछ देर विद्योत्तमा शंकित होकर चिन्तित तो हुई और सभा मंडली स्तब्ध हो गई किन्तु उसे अपने पूर्ण पांडित्य पर विश्वास था। राजकुमारी विद्योत्तमा से संकेतों द्वारा प्रश्न पूछने का अभिमान युक्त मुद्रा में विपक्षी वयोवृद्ध और विद्यावृद्ध लोगों ने आग्रह किया कि आप प्रश्न पूछें।

सौम्यरूपा महाविदुषी विद्योत्तमा ने विद्वत्तापूर्ण पद्धति पर गम्भीरता से परब्रह्म की सत्ता स्थापित करने के लिए अपने हाथ की संकेत वाचक मुद्रा में एक अंगुली को उठाया किन्तु महागुरु के रूप में प्रतिष्ठित बालक तथा होने वाले महाकवि कालिदास ने अपनी ही बुद्धि से एक अंगूली को एक आँख फोड़ने अथवा निकालने का संकेत समझकर हृदय में छिपी हुई मूर्खता के आक्रोश में अपनी दो अंगुलियाँ उठाकर उत्तर दिया। जिसे विपक्षी विद्वानों ने अपने पांडित्यपूर्ण एवं बुद्धि चातुर्य से इसका युक्ति पूर्वक समाधान कर आत्मा-परमात्मा जीव और ब्रह्म के दो पृथक् स्वरूप सिद्ध किये। इसके पश्चात् पंचतत्व की सत्ता स्थापित करने के लिए महाविदुषी विद्योत्तमा ने विद्वत्ता के आधार पर अपनी पाँचों अंगुलियाँ तथा हाथ

१. धर्मकार्येषु वयः न समीहते। कुमार सम्भव

२

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को उठाया। इस पर प्रछन्न गुरु कालिदास ने अपनी मुट्ठी बांध का अपने शारीरिक बल का परिचय देकर मुक्के से मारने का संकेत किया। उसका भी विपक्षी विद्वानों की ओर से प्रत्युत्तर देने वाले पारंगत विद्वान् ने अपनी विद्वत्ता और वयोवृद्ध होने के आधार पर मुट्ठी को पंच तत्त्वों के एकत्व का वास्तविक अर्थ बताकर सृष्टि के महत्त्व को सिद्ध किया। इस प्रकार की परिपुष्ट युक्तियों से सभी श्रोता स्तब्ध हो गये। इस संकेत युक्त शास्त्रार्थ से विद्योत्तमा की मुखमुद्रा में कुछ गम्भीरता आ गई और उसने विपक्षी विद्वानों के बार-बार कहने पर भी पुनः प्रश्न नहीं पूछा। जैसी जिसकी भावना होती है उसे सिद्धि भी वैसी ही मिलती है।[1]

विद्योत्तमा और कालिदास का विवाह

महाविदुषी विद्योत्तमा ने अपनी प्रतिज्ञा के अनुरूप शास्त्रार्थ में पराजय स्वीकार की और मौनावलम्बी गुरुओं के गुरु से विवाह करना स्वीकार कर लिया। कपट-पूर्ण युक्तियों से विजय बहुत लम्बे समय से पराजित विद्वानों की हुई और इस प्रतिशोध से उनका हृदय शान्त हो गया। शास्त्रार्थ में महाविदुषी विद्योत्तमा को अपमान एवं महामूर्ख पति की प्राप्ति हुई। विधि के विधानों की भी विचित्र ही लीला होती है, जिन्हें कोई स्वप्न में भी नहीं जानता है। महाविदुषी विद्योत्तमा का विवाह राजसी वैभव के साथ कालिदास से हुआ और राजा तथा रानी ने राजवंश की परम्पराओं के अनुसार दोनों वर एवं वधू को कुछ दिन के लिए वहीं रोक लिया। महाकवि कालिदास ने अपने विवाह की स्मृति कुमारसम्भव में आठवें सर्ग में शिव-पार्वती के विवाह के पश्चात् हिमालय ने दोनों को अपने औषधिप्रस्थ नगर में रोक लिया था। उसी प्रकार राजा शारदानन्द ने भी दोनों को कालिदास और विद्योत्तमा को कुछ दिन के लिए विवाह के पश्चात् गुप्तकाशी में ही रोक लिया था।

महाविदुषी विद्योत्तमा सुगन्ध रहित एवं सौन्दर्ययुक्त युवा, स्वस्थ और सौम्य मौनी विद्वान् पति को पाकर प्रसन्न तो हुई किन्तु मिलन के प्रथम सम्भाषण में ही विद्योत्तमा के मन में मौन में संकेत के द्वारा शास्त्रार्थ होने से कुछ शंका बनी हुई थी। अतः विवाह के पश्चात् प्रथम वार्तालाप में उस मौनी विद्वान् की परीक्षा लेने के लिए विद्योत्तमा सोच ही रही थी कि तब तक अकस्मात् घुड़साल से घोड़े की हिनहिनाने की आवाज सुनाई दी। समस्या पूर्ति की दृष्टि से विद्योत्तमा ने कहा 'सैन्धवः वदति' उस मौनी विद्वान् ने शब्द की तो पूर्ति नहीं की किन्तु अशुद्ध सन्ध वत्ति कहकर उत्तर दिया। पर्वतीय प्रदेश में सबसे शक्तिशाली, शीघ्रगामी और उपयोगी पशु घोड़ा ही होता है, जो दुर्गम यात्रा में सच्चा सहायक होता है।

---

१. मौनं सर्वार्थ साधनम्। मौनं स्वीकारलक्षणम्। मौनं मूर्खस्य लक्षणम्।

२. यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी।

Digitized by Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कुछ लेखकों के उष्ट्र का प्रयोग भी किया है किन्तु वह रेगीस्तान का उपयोगी पशु था न कि पर्वतीय प्रदेश का प्रकरण एवं प्रसंग के अनुरूप सैन्धव शब्द ही अधिक युक्ति संगत और सही था। जिसका हमने तथ्यों के ही आधार पर प्रयोग किया है। सैन्धव नमक के लिए भी प्रयोग होता है। राजा शारदानन्द के पास अश्वसेना अधिक संख्या में थी। उस शास्त्रार्थ में जीतने वाले मौनी विद्वान् के शब्दोच्चारण से विद्योत्तमा को अपने पर महान् दुख हुआ और उन प्रतिशोधी विद्वानों के षड्यन्त्र से अत्यधिक क्रोध आया किन्तु क्या किया जा सकता था। यह सब विद्योत्तमा की प्रतिज्ञा का ही प्रतिफल था। अतः इसका वह किसी पर दोषारोपण भी नहीं कर सकती थी। विद्योत्तमा ने अपमान और क्रोध के वशीभूत होकर भयंकर रूप धारण कर कालिदास को रात में ही गुप्तकाशी के राजमहल से अपमानित कर धक्का लगाकर भगा दिया। प्रायः चिरसंचित आशाओं पर आघात लगने पर क्रोध में ऐसा हो ही जाता है।

मानापमान की भावनाएँ और अपने समान ही व्यक्ति से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने में व्यक्ति को दुख, शोक और घृणा नहीं होती है। अभाव, बड़े-छोटे के भाव एवं असहमति से ही दुखकी उत्पत्ति होती है। आघात लगने पर ही बड़ा से बड़ा बुद्धिमान् भी आक्रोश में आ जाता है। क्रोध सभी गुणों को दूरकर देता है। महाविदुषी विद्योत्तमा इतना सब कुछ जानने पर भी अत्यन्त कठोर व्यवहार कर बैठती है। इसीलिए विवाह सम्बन्ध बहुत ही सोच समझकर समान योग्यता, गुण, आयु और कुल में किया जाता है, जिससे आत्मग्लानि नहीं होती है एवं जीवन में किसी प्रकार का दुख नहीं देखना पड़ता है। कुमार-सम्भव में कालिदास ने शिव के द्वारा शिव की प्राप्ति में साधनारत पार्वती को यह सब कहा है। वैसे समायोजन की भावनाओं से भी वैवाहिक जीवन अधिक सुखी होता है। भारतीय समाज में समायोजन के कारण ही पारिवारिक जीवन सुखी देखे गये हैं।

महाविदुषी विद्योत्तमा के कठोर वचनों और व्यवहार से कालिदास की बुद्धि जाग्रत हो गई। वह अपनी वास्तविक मूर्खता और कपट के कारण कुछ भी नहीं बोल पाया और इस प्रकार की घटना से किंकर्तव्य विमूढ़ हो गया। अपमानित होने से कालिदास के मन के समस्त उद्वेग शान्त हो गये और महाविदुषी विद्योत्तमा का सुयोग्य पति बनने के लिए अपनी कुलदेवी काली के पास काली-मठ में अपनी अपमानित होने की व्यथा को सुनाने के लिए अन्धकारपूर्ण रात्रि में ही वहाँ पहुँच गया। जैसे बच्चा सब तरफ से हारकर, मार खाकर एवं अपमानित होकर अपनी माँ की गोद में आकर सुख की सांस लेता है। उसी प्रकार प्रथम अवस्था में विद्या उपार्जन न करने वाले कालिदास ने भी कालीमठ में आकर ही

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आशा भरी सुख की साँस ली और वह अपनी श्रद्धामयी भावना से विद्या प्राप्ति के लिए काली की आराधना में लग गया।

कालिदास की साधनास्थली कालीमठ—सोना मूल्यवान् धातु होने पर भी उसे अपने शुद्ध होने की परीक्षा कसौटी में घिस कर या आग में तपकर हथौड़ों की मार खाकर देनी ही पड़ती है। उसी प्रकार अपने से बड़े, अवस्था या ज्ञान वाले के कठोर वचनों की ताड़ना और तिरस्कृत होने पर ही सच्चे-स्वाभिमानी व्यक्ति का अस्तित्व या महत्त्व प्रकाश में आता है तथा उसकी सुप्त भावना जाग्रत होती है। युवा कवि कालिदास की पत्नी से तिरस्कृत होने पर ही बुद्धि खुली और उसे अब विद्या का वास्तविक महत्त्व समझ में आया। बालक कालिदास ने अपने बाल्यकाल में सम्पूर्ण समय दूर-दूर तक हिमालय के प्राकृतिक वैभव को देखने में ही व्यतीत किया था। वैसे रुचि से किया गया कार्य अभिरुचि देता है और कभी भी व्यर्थ नहीं जाता है किन्तु भाषा न होने से अभिव्यक्ति नहीं हो पाती है एवं मन को व्यथा अवश्य होती है। प्रकृति के प्राकृतिक सौन्दर्य से ही प्रकृति का कवि कालिदास अधिक आकर्षित था। उसने जगज्जननी काली के वास्तविक स्वरूप को पहचानने में तब अधिक ध्यान नहीं दिया था। प्रायः सांसारिक मानव बड़ी-बड़ी विपत्तियों में पड़ने के पश्चात् ही उस सर्वशक्तिवान् की शक्ति पर विश्वास कर आस्थावान् बनता है। साधना और भक्ति के पश्चात् ही श्रद्धालु व्यक्ति में ईश्वरीय शक्ति जाग्रत हो जाती है। दुर्बल व्यक्ति संकटों में दुस्साहस करके भी अपना बुराकर पलायनवादी या आत्मघाती तक बन जाता है किन्तु सबल, आत्मविश्वासी एवं ईश्वर का कृपापात्र व्यक्ति अपमानित होने पर ही अपने सही स्वरूप को पहचानता है और जीवन में संघर्ष करने का साहस लेता है। वस्तुतः उस ईश्वर ने प्रत्येक व्यक्ति को किसी न किसी विशेष कार्य के सम्पादन करने के लिए ही उत्पन्न किया है। अतः उसे वैसा बनाने के लिए प्रकृति भी वैसा ही उपक्रम बनाती है। उत्तराखण्ड की केदारभूमि कविल्ठा ग्राम का एक साधारण बालक अपने पूर्वजों की तपस्या, साधना और पुण्यों के बल पर ही अपने घर न जाकर आत्मसमर्पण करने के लिए कालीमठ की सिद्धपीठ में पूर्ण विश्वास के साथ रुक गया। उस सिद्धपीठ में काली की उपासना करने से उसकी सुप्त प्रतिभा जाग्रत हो गई और अब वह काली का सच्चा दास बन गया। उसकी जिह्वा में सरस्वती का वास हो गया एवं अब वह महाविदुषी विद्योत्तमा के योग्य विद्वान् बन गया।

उत्तराखण्ड की केदारभूमि के प्रसिद्ध शक्तिपीठ कालीमठ में महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती की सच्ची साधना करने के पश्चात् काली का दास बनने वाले कालिदास ने सिद्धि प्राप्त कर पुनः गुप्तकाशी के निकट के शिक्षा के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

केन्द्रों में विधिवत् विद्यार्थी बनकर समस्त विद्याओं का अनेक आचार्यों से शिक्षा ग्रहण की। कुछ ही दिनों में वह अपनी पूर्व उपार्जित विद्या, काली की सिद्धि, पारंगत विद्वान् गुरुओं के चरणों में बैठने और अपनी सच्ची लगन से अद्वितीय विद्वान् हो गया। विद्या उपार्जन की विधि को महाकवि कालिदास ने अपने अन्तिम काव्य रघुवंश में राजा दिलीप के प्रसंग में इस प्रकार बताया है :—

'जिस प्रकार सच्चा विद्यार्थी सब सुखों को छोड़कर लगन से विद्या प्राप्त कर लेता है वैसे ही तुम भी सब भोगों को छोड़ कर कन्द-मूल-फल खाते हुए सदा इस गाय की सेवा करोगे तो यह तुम पर प्रसन्न होगी और तुम्हारी इच्छा पूरी करेगी।'[1]

विद्या और साधना अत्यधिक कठिनाई से ही प्राप्त होती है। अपने जीवन की अनुभूति तथा गुरुओं के आश्रमों में रहकर कितनी निष्ठा तथा कठिनाई से महाकवि कालिदास ने काली की कृपा से विद्या उपार्जन की, इसे राजा दिलीप और गुरु वशिष्ठ के आश्रम में पुत्र प्राप्ति के लिए आये हुए प्रसंग में बहुत अच्छी प्रकार स्पष्ट किया है :—

'कुलपति वशिष्ठ ने जो पत्तों की कुटिया बनाई उसी में राजा दिलीप ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए रानी सुदक्षिणा के साथ कुशा की चटाई पर ही सोये। प्रातः काल वशिष्ठ ने जब अपने शिष्यों की वेद-पढ़ाना प्रारम्भ किया तब उसकी ध्वनि कान में पड़ते ही राजा दिलीप उठ बैठे।'[2]

इस दोनों श्लोकों के उद्धरणों से यह स्पष्ट होता है कि कालिदास ने विद्योत्तमा से मूर्खता के कारण अपमानित होकर केदारखण्ड की काली की कालीमठ सिद्धपीठ में ही साधना कर सिद्धि प्राप्त की, जिसके बल पर सुयोग्य गुरुओं के सान्निध्य में गुप्तकाशी के सन्निकट रहकर उनसे सच्चा विद्यार्थी बनकर अत्यन्त कठिनाई से विद्या प्राप्त की। साधना पूर्व उपार्जित विद्या होने और अच्छे गुरुओं के सन्निकट में बैठकर उसे विद्या शीघ्रता से प्राप्त हो गई थी। गहन अध्ययन; सुयोग्य गुरुओं के पास, नियमों का पालन करते हुए और परिश्रम करने से ही पूर्ण योग्यता प्राप्त होती है। अपने सच्चे अनुभवों को कालिदास ने प्रकरण के अनुसार अपनी रचनाओं में दिखाया ही है।

---

१. वन्यवृत्तिरिमां शश्वदात्मानुगमनेन गाम।
विद्यामभ्यसनेनेव प्रसादयितुमर्हसि ॥ रघुवंश १ सर्ग ८८ श्लोक

२. निर्दिष्टां कुलपतिना स पर्णशालामध्यास्य प्रयतपरिग्रह द्वितीयः।
तच्छिष्याध्ययननिवेदितावसानां संविष्टः कुशशयने निशां निनाय ॥
रघुवंश १ सर्ग ९५ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

केदारखण्ड में कालिदास के युग में गुप्तकाशी, अगस्तमुनि और रुद्रप्रयाग आदि अनेक स्थान विद्या के केन्द्र बने हुए थे। जिनमें अपने विषयों के निष्णात विद्वान् शिक्षा देते थे किन्तु बहुत बड़े अन्तराल के बाद परिस्थितियों के कारण ये सब भुलाए गये। तीर्थयात्रियों की पदयात्रा की धार्मिक भावनाओं से प्रभावित होकर बहुत बाद में केदारखण्ड की पुरानी परम्परा की स्मृति में केदार भूभाग के कुछ प्रबुद्ध लोगों में भारतीय संस्कृति की सुरक्षा के भाव जाग्रत हुए और तभी गुप्त काशी में एक वृहद् उद्देश्य से उत्तराखण्ड विद्यापीठ की स्थापना हुई एवं रुद्र-प्रयाग में ज्योतिषशास्त्र, आयुर्वेद और संस्कृत साहित्य के प्रति अपना प्रेम एवं पुरानी परम्परा की रक्षा के लिए प्रज्ञाचक्षु स्वामी सच्चित्तानन्द ने अनेक विद्यालयों की स्थापना की।

काव्य साधक कालिदास

कालिदास एक महाविदुषी नारी से अपमानित होने के पश्चात् ही पारंगत विद्वान् होकर पुनः अपने स्वीकृत सम्बन्ध को स्मरण कर और पारिवारिक जीवन के सुख भोगने की आशा से सभी दृष्टियों से परिपूर्ण होकर विद्योत्तमा के राज-महल गुप्तकाशी में मिलने जाता है। वैसे महाविदुषी स्वयं भी इतने दिन तक मन से दुखी थी किन्तु किसी से वह कुछ नहीं कह पाती थी। सरस्वती के साधक कालिदास की कितनी शुद्ध और सच्ची भावनायें थीं कि वह अपने को प्रेरणा देने वाली पत्नी, सहचरी और विद्या प्राप्ति का मार्ग बताने वाली पथ प्रदर्शिका के पास अत्यधिक उत्साह, उमंग एवं सच्चे हृदय से मिलने जाता है। कालिदास ने अपने में विद्या का अभाव अनुभव किया। अतः उसने मन में कहीं भी विद्योत्तमा के प्रति तनिक भी आक्रोश नहीं दिखाया अपितु उसके ही समान विद्वान् बनने का पूर्ण प्रयास किया। उसने अपने में पूर्णत्व के भाव लाकर विद्वान् बनकर ही महाविदुषी विद्योत्तमा के राजमहल में पहुंचकर अत्यन्त ही शिष्टाचार के साथ दरवाजा खट-खटाया (अनावृतकपाटं द्वारं देहि) इससे कालिदास की उपार्जित विद्या का भी विद्योत्तमा को पता चल गया और उसने अन्दर से ही अपनी दूरदर्शिता और पाण्डित्य से पूछा :—'अस्ति कश्चित् वाग् विशेषः' यह कोई विशिष्ट वाणी है। यही महाविदुषी विद्योत्तमा के मुख से निकला हुआ वाक्य काली के दास को महाकवि, कविकुलगुरु और विश्वकवि बना देता है। इस वाक्य के आधार पर ही कालिदास ने समता को दिखाते हुए अपनी विद्वत्ता और विद्योत्तमा के पाण्डित्य का सम्मान करते हुए इस वाक्य की पदपूर्ति तीन उत्कृष्ट महाकाव्यों के रूप में की है।

इन तीनों काव्यों के प्रथम श्लोक महाविदुषी विद्योत्तमा के मुख से दूसरी बार निकले हुए मधुर वाक्य के तीन शब्दों पर ही सिद्धिप्राप्त कालिदास ने अपनी विद्वत्ता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और महामूर्खं से महाकवि होने का परिचय देकर उनकी पदपूर्ति कर तीन सर्वश्रेष्ठ काव्यों की रचना की। काव्यों में महाकवि कालिदास का सर्वश्रेष्ठ अन्तिम प्रौढ़ काव्य रघुवंश है और नाटकों में विश्वभर की सर्वश्रेष्ठ कृति अपनी जन्मभूमि हिमालय की तलहटी में प्रवेश करने वाले दूसरे द्वार गढ़वाल कोटद्वार के निकट कण्वघाटी में कण्वाश्रम का विशद वर्णन करने वाला शकुन्तला नाटक है।

अस्ति से प्रथम महाकाव्य कुमारसम्भव की रचना हुई है। जिसका प्रथम श्लोक अपनी जन्मभूमि के हिमालय के परिचय से प्रारम्भ होता है। 'अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयोनाम नगाधिराजः'।

महाकवि कालिदास के साहित्य का अध्ययन करने वाले प्रबुद्ध पाठकों को गम्भीरता से सोचना चाहिए कि महाकवि अस्ति से अन्य कुछ और भी वर्णन कर सकता था किन्तु उसने हिमालय को ही क्यों अपने काव्य का वर्ण्य विषय चयन किया ? सर्वप्रथम कालिदास के जीवन पर उत्तराखण्ड में स्थित हिमालय का सबसे अधिक प्रभाव पड़ा था। क्योंकि ? इस केदारभूमि की धरती में ही उसने अपने जीवन को संघर्ष के रूप में देखा है। हिमालय के उदार, वैभवपूर्ण और उपकारक भावों को दृष्टि में रखकर ही अपनी कृतज्ञता की दृष्टि से प्रथम स्थान देकर वर्णन किया है। मानव को मानवीय दृष्टि से उदार, उपकारी बनाने के लिए हिमालय से निकलने वाली नदियों, वन सम्पदा और पावन स्थानों से लाभ लेने का संकेत किया है। राष्ट्रीय दृष्टि से राष्ट्रीय एकता, अखण्डता और भावात्मक दृढ़ता के लिए अपने पाठकों को ऐसा दृष्टिकोण दिया है। समन्वयवादी बनकर धार्मिक सहिष्णुता का भी परिचय दिया है। कुमारसम्भव में महाकवि कालिदास ने अपनी जन्मभूमि के प्राकृतिक सौन्दर्य, हिमालय, शिव-पार्वती के प्रति अपने अनन्य स्नेह को व्यक्त किया है किन्तु इसके साथ ही साथ नवीन कविता की उमंग और यौवन की तरंगों का भी परिचय दिया है।

कश्चित् से मेघदूत गीतिकाव्य का सृजन हुआ, जिसका प्रथम श्लोक 'कश्चित् कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारात्प्रमत्तः' से प्रारम्भ होता है। इसमें कालिदास ने अपने शपित जीवन की दारुण दुख भरी करुण कथा बताई है।

अन्त में वाग्विशेष शब्द से अपनी प्रौढ़ एवं प्रांजल महाकाव्य की रचना की है। जिसका प्रथम श्लोक—

वागर्थाविव संपृक्तौ वागर्थ प्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ बन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ ॥

भगवान् शिव विद्या, बुद्धि और सकल कलाओं के जन्मदाता हैं। आशुतोष= शीघ्र प्रसन्न होने वाले भी हैं और क्रोध में संहारक भी हैं। वही वाणी या शब्द सार्थक माने जाते हैं, जो सारगर्भित अर्थों से परिपूर्ण होते हैं। यहां वाणी और अर्थ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की एकता के साथ शिव-पार्वती को एक माना गया है। शिव से पृथक् शक्ति नहीं और शक्ति से पृथक् शिव नहीं है। शिव और शक्ति का समन्वय रूप ही मानव कल्याणकारी है। शिव शक्ति हीन होने पर शव के सदृश हो जाता है।

महाकवि कालिदास ने वाक्सिद्धि प्राप्त करने के पश्चात् अपनी सभी रचनाओं में भगवान् शंकर के प्रति अपनी अनन्य भक्ति व्यक्त की है किन्तु अर्धनारीश्वर शिव की नहीं। कालिदास ने अपने प्रथम काव्य में अपनी जन्मभूमि में बाल्यकाल से देखे हुए प्राकृतिक सौन्दर्य और उससे प्रभावित हुए दृश्यों एवं कथानक को ही प्रमुख स्थान दिया है। केदारखण्ड, हिमालय, उसका औषधिप्रस्थ नगर, गौरीशिखर, पार्वती की साधना एवं साधनास्थली का विशद विवेचन किया है। यह सब कवि का केदारखण्ड, शिव-पार्वती के प्रति भक्ति और अपनी जन्मभूमि की धरती के प्रति विशेष आकर्षण है। इसे हिमालय के केदारखण्ड के भूभाग का परिभ्रमण करने वाला व्यक्ति ही या वहीं का रहने वाला ही अच्छी प्रकार से जान सकता है। महाकवि कालिदास की हृदय की वास्तविक भावनाओं को उसके ग्रन्थों के समुचित अध्ययन के पश्चात् वर्णित स्थानों को देखने के अनन्तर ही जाना जा सकता है। दूर बैठे कल्पना से नहीं।

पूर्वाग्रह को छोड़कर महाकवि के अमर साहित्य का गम्भीरता से अध्ययन करने पर विदित होता है कि महाकवि कालिदास ने हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल के केदारखण्ड की पावन भूमि में ही जन्म लेकर प्रकृति की गोद में बैठकर उनका सच्चा स्नेह पाया है। प्रकृति के ही सूक्ष्म निरीक्षण में बाल्यकाल बिताया, पारिवारिक सुखद जीवन के प्रथम दिन में प्रवेश करते ही नारी से अपमानित होना पड़ा और कालीमठ की काली की कठोर साधना करने पर वाणी की सिद्धि प्राप्त की। वास्तव में यौवन की चंचल प्रमाथिवलवदृढ़ उमंगों के कारण नवीन आशु कविता की तरंगों से प्रेरित होकर तथा महाविदुषी विद्योत्तमा को भी अपनी कविता का महत्त्व दिखाने के लिए कालिदास ने अपने प्रथम महाकाव्य में कैलाशपति शंकर और हिमालय की पुत्री पार्वती पर आधारित कुमारसम्भव में अपनी जन्मभूमि की गौरवगाथा का परिचय, भारत माता के उत्तुंग विशाल भाल का, देश को शस्यश्यामला करने वाली नदियों के उद्गम स्थान, दयार्द्र, उदार हृदय का और कठोर तपस्या का प्रतीक हिमालय का सच्चा महत्त्व अभिव्यक्त करके अपने हृदय के सहज भावों को स्पष्ट करने के लिए ही कुमारसम्भव का सृजन किया है। प्रथम श्लोक में अस्ति से उस प्रथम काव्य को प्रारम्भ किया है—

उत्तर दिशा में देवता के समान हिमालय नामक पर्वतों का राजा पूर्व और पश्चिम समुद्र में प्रविष्ट होकर पृथ्वी के मानदण्ड की तरह विद्यमान् है।[1]

---

१. अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा, हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य, स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः॥
कुमारसम्भव १ सर्ग १ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कालिदास के शाप का कारण

मानवीय दृष्टि से मानव के मन में यौवन की स्वच्छन्द भावनाएं और एक प्रचण्ड आंधी आती है, उसमें भी नवीन विवाहित जीवन की ओर कवि हृदय रखने वाले सिद्धि प्राप्त भावुक व्यक्ति की बात ही क्या क्योंकि उसके हृदय में तो मानव होने से नवीन से नवीन भावनाएं तथा कामनाएं स्फुरित होती रहती हैं। महाकवि कालिदास प्रतिभा सम्पन्न और प्रकृति का अनुभवी युवा कवि था। प्रकृति के सान्निध्य में बाल्यकाल से उसने जो देखा उसे भाषा एवं वाणी के मुखरित होने पर नगाधिराज हिमालय के विस्तृत वर्णन के साथ कुमारसम्भव महाकाव्य में सर्वप्रथम कविता के नव उन्मेष भाव और यौवन की उद्दीप्त कामनाओं ने पर्वत पुत्री पार्वती की कठोर तपस्या से शिव के समाधिस्थ मौन को परम सौन्दर्य के स्वरूप उन्मत्त कामदेव से तुड़वा दिया।

महाकवि कालिदास ने दैवीय शक्ति के अद्भुत कार्यों को मानवीय रूप देकर जगज्जननी पार्वती के नख-शिख का सूक्ष्माति सूक्ष्म वर्णन कविता का सौन्दर्य पाकर चमत्कार पूर्ण तो हुआ ही किन्तु कालिदास के लिए यह अभिशाप का भी कारण बना। शिव-पार्वती के सुरति सुख का वर्णन युवा हृदय कवि के लिए यथार्थ वर्णन करने का प्रसंग तो मिला किन्तु शास्त्र मर्यादा के विरुद्ध जगत् के माता-पिता का इस प्रकार का विश्लेषण उचित न हो सका। इसीसे ही महाकवि कालिदास के सुखद पारिवारिक जीवन पर यह तुषारापात हुआ।

कुमारसम्भव की रचना के पश्चात् महाकवि कालिदास को मानसिक दुःख हुआ। वह स्वयं कर्मकाण्ड और ज्योतिषशास्त्र गणित एवं फलित का पारंगत विद्वान् था। उसे नवीन कवि हृदय की तरंग और यौवन की प्रथम उमंग ने भयंकर कष्ट दिया। स्वयं कालिदास ने कुमारसम्भव के ९ वें सर्ग में शिव-पार्वती के सुरति सुख में अग्नि का कपोत के रूप में प्रवेश करना अधिक घातक सिद्ध किया है क्योंकि अग्निदेव को पार्वती का कोपभाजन बन कर शाप सहन करना पड़ा :—

त्वं सर्वभक्षी भव भीमकर्मा कुष्ठाभिभूतोऽनल धूपगर्भः।
इत्थं शशापाद्रिसुता हुताशं रुष्टा रतानन्द सुखस्य भंगात्॥

महाकवि कालिदास ने मेघदूत में कुमारसम्भव का यक्ष के समान फल पाया है। स्वयं कालिदास अपनी आत्मकथा मेघदूत में अपने शाप को यक्ष के रूप में स्पष्ट करता है और अपनी पत्नी से कहता है :—

'उस शाप की अवधि को आंख बन्द करके सहन कर लो। कार्तिक में विष्णु के उठने पर हरिप्रबोधिनी एकादशी को मेरा शाप समाप्त हो जायेगा।'[1]

---

१. शापान्तो मे भुजगशयनादुत्थिते शाङ्‌र्गपाणौ
शेषान्मासान् गमय चतुरो लोचने मीलयित्वा॥ उ० मे० ५० श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जिस प्रकार पार्वती के शाप से कालिदास ने कुमारसम्भव में अग्नि को कुष्ट रोग पीड़ित दिखाया है तथा ब्रह्मवैवर्तपुराण की योगिनी एकादशी के माहात्म्य में हेममाली को कुष्ट रोग से पीड़ित दिखाया गया है। भागवत के चित्रकेतु को पार्वती के ही वर्णन से पापमयी राक्षस योनि मिली। महाकवि कालिदास के पूर्व वर्णित विवरण से स्पष्ट होता है कि उसे भी जगत् के माता-पिता, शिव-पार्वती के सुरति-सुख के वर्णन का फल ताप, पाप, और कुष्ट रोग में अवश्य मिला है, जिसे उसने अपने शरीर में कुष्ट रोग के चिह्नों को अनुभव किया और अपने ज्योतिष एवं कर्मकाण्ड के ज्ञान से दूर करने का भी उपाय सोचा। तन्त्र, मन्त्र और यन्त्र इस प्रकार कायिक, मानसिक और वाचिक पापों को दूर करने में अधिक सहायक होते हैं एवं तीर्थयात्रा भी उपयोगी होती है।

महाकवि कालिदास अपनी जन्मभूमि उत्तराखण्ड गढ़वाल से प्रमुख दो कारणों से ही अपने यहाँ के राजाओं का आश्रय छोड़कर क्यों उज्जयिनी के विक्रमादित्य की राजसभा में पहुँचा ? अपने जन्मस्थान को बिना बहुत बड़ी विपत्ति पड़े कोई भी नहीं छोड़ना चाहता है और उस पर भी वह परमसुन्दरी, विदुषी, नवयुवती, नव विवाहिता पत्नी को छोड़कर क्यों जायेगा ? जो वस्तु अधिक कठिनाई से प्राप्त होती है उसे छोड़ना कितना कठिन और कष्ट कारक होता है। उसे कालिदास ने मेघदूत में स्वयं अपनी अनुभूति से स्पष्ट किया है।

महाकवि कालिदास ने अपनी आत्मकथा का रहस्य बताने वाले मेघदूत गीति-काव्य में अपने शाप, व्यथा और कथा को बहुत ही मार्मिक शब्दों में यक्ष के नाम का सहारा लेकर अपने जीवन में घटित सच्ची घटना को वर्णन किया है। कालिदास दैवीय कोप से पीड़ित था और इस प्रकार के शाप, ताप एवं पाप का प्रायश्चित बिना विभिन्न पवित्र नदियों के जल, तीर्थयात्रा, देव स्थानों के दर्शन अपने जन्म स्थान को छोड़े बिना नहीं हो सकता था। न जाने कहाँ-कहाँ उसे और भी जाना पड़ा होगा किन्तु अधिक वर्णन अलकापुरी से रामगिरि आश्रम का सूक्ष्म रूप में किया है। रामगिरि वैसे भी राम और सीता के चरणों तथा स्नानों से पवित्र है। उनके वास से भी यह परम पवित्र स्थान बन गया था। कालिदास स्वयं आस्थावान् और परम ज्ञानी था। अतः उसने धार्मिक दृष्टि से अपने कार्यों को अपने निकट की अलकापुरी के यक्ष से जोड़कर उसके माध्यम से अपनी कथा को वर्णन किया है।

यक्षों के प्रति कालिदास के आदर के भाव

श्रीमद्भागवत में भागवतकालीन समाज में देखा गया है कि जीवन की बाधाओं से बचने के लिए यक्षों की पूजा को भी महत्त्व दिया गया है :—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'धर्म उपार्जन करने के लिए विष्णु भगवान् की, वंश परम्परा की रक्षा के लिए पितरों की, बाधाओं से बचने के लिए यक्षों की और बलवान् होने के लिए मरुद्-गणों की आराधना करनी चाहिए।'[1]

इससे यह भी सिद्ध होता है कि कालिदास ने यक्षों का कुमारसम्भव एवं मेघ-दूत में अधिक वर्णन किया है।

वस्तुतः महाकवि कालिदास ने यक्ष जाति के प्रति मेघदूत में अपना विशेष अनुराग दिखाया है। यक्ष ने अपनी दुःख भरी आत्मकथा मेघ को सुनाई है क्योंकि सज्जन पुरुष दूसरों की करुणकथा सुन कर द्रवित हो जाते हैं। कालि-दास ने अपनी अन्य पुस्तकों में भी यक्षों का वर्णन किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि यक्ष कालिदास का ग्राम देवता रहा होगा क्योंकि अपनी बाधाओं को दूर करने के लिए ही लोग उनसे प्रार्थना करते हैं। कई जगहों पर तो यह भी देखा गया है कि गाँव देवता गाँव वालों पर आने वाली विपत्ति को पहले ही सूचित कर देता है और उसका सही निदान भी बता देता है। उस गाँव देवता के उप-कार के कारण आज भी अनेक गाँवों में लोग अपने-अपने ग्राम देवता की पूजा करते हैं और अपने समस्त धार्मिक कृत्यों को सामूहिक रूप में उस देवस्थान पर ही मनाते हैं। लोगों की ऐसी भी धारणा है कि ग्राम देवता के अप्रसन्न होने पर गाँव वालों पर बहुत बड़ी विपत्ति भी आ सकती है। उत्तराखण्ड की केदारभूमि में यक्षों के प्रति लोगों की अधिक श्रद्धामयी भावनाएँ देखी जाती हैं। जिसका महा-कवि कालिदास पर भी अवश्य ही प्रभाव पड़ा है।

अलका के सन्निकट महाकवि कालिदास के ग्राम कविल्ठा में आज की एक ऊँचे टीले पर यक्षों का निवास स्थान भग्नावशेष रूप में हैं। सम्भवतः अपनी पैतृक वंश परम्परा के अनुरूप अपने ग्राम देवता के रूप में ही यक्ष को मेघदूत के प्रारम्भ में विघ्न बाधाओं को दूर करने तथा उसे ही अपनी आत्मकथा का माध्यम इसीलिए बनाया हो। अलका का वैभव भी यक्ष के आधार पर प्रसंग के अनुरूप उसी प्रकार का बनाना पड़ा है। कालिदास ने जब अपने को यक्ष माना है तभी यक्ष की नगरी का भी वर्णन करना पड़ा है। कविल्ठा ग्राम में भी अलका के समान अनेक समानताएँ देखी जाती हैं।

---

१. धर्मार्थं उत्तमश्लोकं तन्तुं तन्वन् पितॄन् यजेत्।
रक्षाकामः पुण्यजनानोजस्कामो मरुद्गणान्॥
भागवत् २ स्कन्ध ३ अध्याय ८ श्लोक।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाकवि कालिदास ने रघुवंश में भी राजा दिलीप की रानी सुदक्षिणा की तुलना यक्ष पत्नी सुदक्षिणा से इस प्रकार की हैं :—

राजा दिलीप की मगधकुल में उत्पन्न तथा दिलीप के चित्त का अनुकरण करने वाली सुदक्षिणा नाम से प्रसिद्ध पटरानी वैसी ही थी जैसी यक्ष की पत्नी सुदक्षिणा।[1]

कालिदास ने मेघदूत के प्रथम श्लोक में ही यक्ष को अपने गीतिकाव्य का माध्यम तो बनाया है किन्तु नाम को स्पष्ट नहीं किया है अपितु कश्चित्-किसी शब्द विशेष का प्रयोग कर उसके नाम को छिपा कर स्वयं अपनी ही व्यथा आत्म-कथा के रूप में गाई है। प्राय: अपने जीवन की सच्ची कथा अन्य पुरुष के रूप में इसी शैली पर अभिव्यक्त की जाती है। कोई कैसा व्यक्ति ? जो अपने कर्तव्य का समुचित रूप से परिपालन न करने से अपनी प्रिया के असह्य विरह के दुख से एक वर्ष तक भोगे जाने वाले अपने प्रभु के शाप से प्रभावहीन होकर रामगिरि आश्रमों में अपने दुख के दिन विता रहा था, जिन आश्रमों का जल वनवास काल में सीता द्वारा स्नान करने से पवित्र हो गया था एवं जो आश्रम सदा घनी छाया वाले वृक्षों के द्वारा घिरे रहते थे। सूर्य का आतप, विरह का संताप और शाप की व्यथा के लिए शीतल जल, घनी छाया, पवित्र स्नान एवं स्थान की परमावश्यकता होती है। वेचारा यक्ष विरह के दुख, शाप के ताप, ग्रीष्म ऋतु की गर्मी से अधिक सन्तप्त होने से शान्त रामगिरि में वास कर रहा है।

महाकवि कालिदास के शिव और पार्वती, माता-पिता, स्वामी, विद्या, बुद्धि के देने वाले, प्रेरणा के स्रोत एवं कुमारसम्भव के मुख्य वर्ण्य विषय हैं। अपने कवि होने के प्राप्त अधिकार एवं कर्तव्य को भूलकर कालिदास ने अपने प्रभु की अवहेलना कर एक वर्ष का कठोर पत्नी विरह का दारुण दुख, साधना की शक्ति रहित होकर रामगिरि आश्रमों में दिन विताए। अपनी यौवन की ओर कविता की उद्दीप्त भावनाओं से महाकवि कालिदास जगत् के माता-पिता के प्रति अपने कर्तव्य को भूल गया और उसी एक भूल का दारुण दुख पत्नी वियोग तथा कुष्ट रोग पाया। वह अपनी साधना से विशेष शक्ति पा चुका था किन्तु शाप से उसकी वह शक्ति प्रभावहीन हो गई थी। जिसे मेघदूत के प्रथम श्लोक में ही कवि ने स्पष्ट किया है—'शापेनास्तंगमितमहिमा' कालिदास ने अपने शाप जन्य जीवन का किसी न किसी रूप में अपनी रचनाओं में वर्णन किया है—मेघदूत में यक्ष को

१. तस्या दाक्षिण्यरूढेन नाम्ना मगधवंशजा।
पत्नी सुदक्षिणेत्यासीदध्वरस्येव दक्षिणा॥ रघुवंश १ सर्ग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुबेर का शाप, कुमारसम्भव में काम को ब्रह्मा का शाप, अग्नि को पार्वती का शाप, रघुवंश में दिलीप को कामधेनु नन्दिनी का शाप, अज की रानी इन्दुमती को तृणविन्दू ऋषि का शाप, दशरथ को श्रवण कुमार के माता-पिता का शाप, अहिल्या को पति का शाप, मेनका को इन्द्र का शाप, विक्रमोर्वशी में उर्वशी को भरतमुनि का शाप, शाकुन्तल नाटक में शकुन्तला को दुर्वाशा का शाप और महाकवि कालिदास को भी कुमारसम्भव में शिव-पार्वती के नख-शिख का वर्णन शास्त्र मर्यादा का उलंघन करने से अवश्य ही मेघदूत में शाप भोगना पड़ा है। कालिदास ने इसीलिए अपनी रचनाओं में शाप का अधिक उल्लेख किया है। कभी-कभी बहुत बड़े-बड़े पापों को धोने के लिए या उनका प्रायश्चित करने के लिए ईश्वर के नाम के साथ उन्हें बार-बार कहने से भी वे दूर हो जाते हैं और वह कुछ हलका हो जाता है। अपने मन के इस प्रकार के भावों को छिपाने से कुण्ठा उत्पन्न होती है तथा व्यक्ति मानसिक दुख से कभी स्वस्थ नहीं हो पाता है। ऐसे ही लोग मानसिक रोगी होते हैं और प्रकट करने से मानसिक दुख दूर होने लगते हैं तथा दोषी व्यक्ति का सुधार हो जाता है। अपराध की स्वीकृति या उसका प्रकट करना भी प्रायश्चित के समान है।

वास्तव में महाकवि कालिदास को भूगोल का भ्रमण करने के कारण अच्छा परिचय था और शास्त्रों के भी विभिन्न क्षेत्रों का विस्तृत ज्ञान था। अतः अपने अपराध का प्रायश्चित करने के लिए तीर्थाटन, पवित्र स्थानों के जल का स्नान और उनमें वास करना आवश्यक माना गया है। महाकवि कालिदास ने अपने भौगोलिक गहन अध्ययन का तीन दृष्टियों से लाभ उठाया है:—१—शाप की निवृत्ति २—साहित्य संरचना और ३—अपनी साहित्य साधना से विद्या का सही लाभ लेने के लिए रामगिरि आश्रम एवं विक्रम की राजधानी उज्जयिनी को सोच समझ कर चयन किया।

अपने निवास स्थान में व्यक्ति का प्रभाव और परिचय अधिक अवश्य होता है किन्तु वह एक सीमित क्षेत्र में एवं एक निर्धारित रूप में ही होता है। वास्तव में यदि कालिदास अपने ही जन्मस्थान में ही रहता तो वह विश्व विख्यात न हो पाता और उसकी प्रतिभा इतनी शीघ्र प्रकाश में न आती तथा इतनी प्रतिष्ठा न पाता। यद्यपि विद्वान् अपनी विद्वत्ता से सर्वत्र सम्मान अवश्य पा जाता है किन्तु एक सीमित क्षेत्र में वाणी और लिखित पुस्तकों के प्रभाव में अत्यधिक अन्तर होता है। वाणी का प्रभाव शीघ्र तो पड़ता ही है किन्तु एक सीमित क्षेत्र में ही पड़ता है और शीघ्र ही समाप्त भी हो जाता है किन्तु लेखनी द्वारा लिखे गये सत्साहित्य का प्रभाव कुछ विलम्ब से अवश्य पड़ता है किन्तु शिक्षित समाज पर चिरस्थायी पड़ता है। महाकवि कालिदास ने अपनी प्रतिभा से महाराजा विक्रमादित्य की सभा में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नवरत्नों में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया और सद्साहित्य से सम्पूर्ण विश्व में विख्यात हुआ। धैर्य, धार्मिक आस्था, विश्वास और अपनी करुण गाथा को मेघ द्वारा सुनाने पर कालिदास रूपी यक्ष समय से पूर्व शाप मुक्त हो गया था।

प्रत्येक वस्तु के मूल्यांकन का अपना-अपना स्थान होता है। बिना उचित स्थान में गये सही वस्तु का सही मूल्यांकन नहीं हो पाता है। उज्जयिनी में जाने से ही कालिदास की विद्वत्ता का सही मूल्यांकन हुआ है और शाप भी दूर हुआ है।

कविरूपी यक्ष का कनकवलय

महाकवि कालिदास के युग में स्त्री-पुरुष दोनों ही आभूषण धारण करते थे। स्त्रियां प्रकृति के फूल-पत्तों से भी सौन्दर्य प्रसादन का कार्य लेती थीं। वास्तव में आभूषण सौन्दर्यवर्धक, आकर्षक, आर्थिक समृद्धि के द्योतक और सामाजिक प्रतिष्ठा का भी परिचय देते थे। यक्षरूपी कालिदास के हाथों में सोने के कड़े थे। उस युग में इनको धारण करने का सम्भ्रान्त लोगों में एक प्रकार का प्रचलन भी था। ये कड़े महाकवि को विवाह के अवसर पर राजा शारदानन्द के द्वारा मिले थे। ये विवाह की स्मृति के चिह्न थे, राजा शारदानन्द की प्रतिष्ठा के द्योतक थे और पत्नी के अनुराग के प्रतीक थे। अपनी विदुषी, नव विवाहिता और परमरूपवती पत्नी के दारुण विरह में यक्षरूपी कवि इतना दुर्बल हो गया था कि उस बेचारे के दोनों हाथों के सौन्दर्य वर्धक एवं स्मृति चिह्न कनकवलय गिर गये थे। जिससे उसके मणिबन्ध खाली दिख रहे थे।[1] कवि का इन स्वर्ण के कड़ों का वर्णन करना श्वसुर पक्ष की समृद्ध स्थिति, अपनी आर्थिक स्थिति और अपनी पत्नी विद्योत्तमा के अत्यधिक अनुराग की अभिव्यक्ति करना भी था। इस प्रकार के वर्णन से महाकवि कालिदास ने अपने वैवाहिक सम्बन्ध को एक उच्च परिवार में दिखाने के लिए भी ऐसा वर्णन किया है। शाप की स्थिति में भी वह उन स्वर्ण कड़ों को घर नहीं छोड़ पाता है क्योंकि उसके इस वैशिष्ट्य का पुनः कैसे ज्ञान होता? कनकवलय का गिरना कवि के विरह में अत्यधिक कृष होने का परिचायक है एवं पत्नी के प्रति अत्यधिक अनुरक्त होने का द्योतक है।

महाकवि अपने पारिवारिक जीवन के यौवन काल में पूर्ण निश्चिन्त होकर समुचित सुख नहीं भोग पाया क्योंकि पूर्वमेघ में मेघ को मार्ग बताते हुए अपने मन के अतृप्त भावों को मेघ के मनोरंजन के साथ ही साथ कवि होने से अपना भी मनोरंजन कर लेता है और अपने मन के भाव भी अभिव्यक्त कर देता है:—

१, तस्मिन्नद्रौ कतिचिदबलाविप्रयुक्तः स कामी
नीत्वा मासान्कनकवलयभ्रंशरिक्तप्रकोष्ठः ॥ पूर्वमेघ २ श्लोक ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गर्भाधानक्षणपरिचयान्नूमावद्धमालाः । पूर्वमेघ ९ श्लोक
मध्ये श्यामः स्तन इव भुवः शेषविस्तारपाण्डुः । ,, १८ श्लोक
सोत्कम्पानि प्रियसहचरीसंभ्रमालिंगितानि ॥ ,, २२ श्लोक
तीरोपान्तस्तनितसुभगं पास्यसि स्वादु यस्मा-
त्सभ्रूभंगं मुखमिव पयो वेत्रवत्याश्चलोर्मि ॥ ,, २५ श्लोक
यः पण्यस्त्रीरतिपरिमलोद्गारिभिर्नागराणा-
मुद्दामानि प्रथयति शिलावेश्यभिर्यौवनानि ॥ ,, २६ श्लोक
गण्डस्वेदापनयनरुजाक्लान्तकर्णोत्पलानां
छायादानात् क्षणपरिचितः पुष्पलावीमुखानाम् । २७ श्लोक
लोलापांगैर्यदि न रमसे लोचनैर्वञ्चितोऽसि । २८ श्लोक
स्त्रीणामाद्यं प्रणयबचनं विभ्रमो हि प्रियेसु । २९ श्लोक
शिप्रावातः प्रियतम इव प्रार्थनाचाटुकारः । ३२ श्लोक
स्तोयक्रीडानिरतयुवतिस्नानतिक्तैर्मरुद्भिः । ३७ श्लोक
ज्ञात्वास्वादो विवृतजघनां को विहातुं समर्थः । ४५ श्लोक
तस्योत्संगे प्रणयिन इव स्रस्तगंगादुकूलां
न त्वं दृष्ट्वा न पुनरलकां ज्ञास्यसे कामचारिन् ॥ ६७ श्लोक

वास्तव में यक्ष रूपी कालिदास ने अपने जीवन के विरह के दुख के आठ मास अत्यन्त ही कष्ट में रामगिरि पर्वत पर व्यतीत किए एवं अपनी पत्नी की चेष्टाओं को स्मरण कर ही अपना समय यापन किया है, तभी उन्हीं भावों को मेघदूत गीतकाव्य में कविता का रूप देकर मन्दाक्रान्ता छन्द में दुखी, विरही, शाप पीड़ित, कठोर यातना में प्रवासी रहकर मन्दगति से गाया है। गाने से दुख दूर होता है चित्त एकाग्र होता है और दुख का समय धीरे से निकल भी जाता है। सामवेद से ही गीत, गान और संगीत का जन्म हुआ है :—

महाकवि कालिदास ने उत्तरमेघ के उस श्लोक में यक्षों के दामपत्य सुखमय जीवन का इस प्रकार वर्णन किया है :—

'जिस अलका में रहने वाले यक्षों के आँखों से आनन्द के आँसू निकलते हैं और किसी दूसरे दुख के कारण नहीं। प्रियजनों के समागम से दूर होने वाला काम जन्य ताप के अतिरिक्त उन्हें कोई ताप नहीं होता है। यौवन के अतिरिक्त दूसरी वृद्धा-वस्था आदि उनकी अवस्था नहीं होती है।'[1]

---

1. आनन्दोत्थं नयनसलिलं यत्र नान्यैर्निमित्तै-
नान्यस्तापः कुसुमशरजादिष्टसंयोगसाध्यात् ।
नाप्यन्यस्मात् प्रणयकलहाद्विप्रयोगोपपत्ति
र्वित्तेशानां न च खलु वयो यौवनादन्यदस्ति ॥ उत्तरमेघ ४ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस प्रकार के उद्धरण मेघदूत को महाकवि कालिदास की ही आत्मकथा सिद्ध करने में सहायक होते हैं। यक्षों को तो प्रणय कलह के अतिरिक्त प्रिया का विरह ही नहीं देखना पड़ता है फिर तो यह सब दुख शपित, दुखित और व्यथित प्रवासी कालिदास का ही तो है। दूसरे के दुख को इतना विह्वल होकर कभी भी व्यक्त नहीं किया जा सकता है। स्वयं की पीड़ा दूसरों से कुछ अधिक ही दारुण दिखती है। अतः यह स्पष्ट होता है कि मेघदूत की दारुण विरह व्यथा किसी प्रवासी यक्ष की नहीं किन्तु कवि के कल्पित यक्ष की स्वयं महाकवि कालिदास की ही सच्ची आत्म-कथा है। अलकापुरी का वैभव और उसके यक्षों का पारिवारिक सुखद जीवन से कालिदास ने अपने निकट के क्षेत्र का अथवा केदारखण्ड में यक्षों का अधिक प्रभाव देखकर ही ऐसा वर्णन किया है। इससे स्पष्ट होता है कवि का यक्षों से घनिष्ठ धार्मिक सम्बन्ध था।

यक्ष और मानव में अन्तर

पूर्व उद्धरण में यह दिखाया गया है कि यक्ष रोते नहीं हैं, उनके आँसू नहीं निकलते किन्तु यक्ष रूपी कालिदास और उनकी पत्नी तो रो-रोकर इतना नीर बहा देते हैं कि चित्रकला के ज्ञाता होने पर भी शिला पर रंगों से चित्र नहीं बना पाते और चित्र के द्वारा भी नहीं मिल पाते हैं :—

धातुओं के रंगों से पत्थर पर प्रेम के कारण रूठी हुई तुम्हारा चित्र बनाकर ज्यों ही मैं अपने आपको तुम्हारे पैरों पर गिरा हुआ बनाना चाहता हूँ वैसे ही बार-बार उमड़े हुए आँसुओं से मेरी आँखें भर जाती हैं। निर्दयी देव उस चित्र में भी हमारे मिलन को नहीं सह सकता।'[1]

यक्ष रूपी कालिदास ने अपनी पत्नी को भी दारुण दुख में रोते ही दिखाया है। आँसुओं के गिरने से वह वीणा भी नहीं बजा पा रही है :—

तन्त्रीरार्द्रां नयनसलिलैः सारयित्वा कथञ्चिद्
भूयो भूयः स्वयमपि कृतां मूर्च्छनां विस्मरन्ती ॥

स्वप्न में सहवास करती हुई भी वह आँसुओं के कारण पूरी नींद नहीं ले पाती :—

मत्सम्भोगः कथमुपनमेत्स्वप्नजोऽपीति निद्रा
माकांक्षन्तीं नययसलीलोत्पीडरुद्धावकाशाम् ॥

यक्ष और मानव की ऐसी भिन्न परिस्थितियों से स्पष्ट होता है कि मेघदूत गीतिकाव्य महाकवि कालिदास की शापग्रसित एवं प्रवासी जीवन की एक सच्ची आत्मकथा है। महाकवि बनने के पश्चात् कुछ ही दिन पारिवारिक सुख भोगता हुआ कुमारसम्भव काव्य के सृजन के पश्चात् ही सहसा शरीर में कुष्ट रोग के

---

१. उत्तरमेघ ४५ श्लोक।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चिन्हों को देखकर तथा मानसिक विषमस्थिति के होने से ही गृहत्याग और प्रिया का विरह सहन करना पड़ा। उस युग में पहले तो किसी को कुष्ट रोग होता ही नहीं था और यदि हो जाता था तो इसे दैवीय प्रकोप मानकर ही नदियों के स्नान, ईश्वर का ध्यान, तीर्थयात्रा और घर छोड़कर ही उपचार किया जाता था। यह शाप ही था, अतः इसकी अवधि कवि एक वर्ष तक ही क्यों मानता है : क्योंकि उसके कुष्ट चिह्न स्नान, ध्यान, तीर्थ यात्रा एवं तीर्थ वास से शनैः-शनैः वे दूर होते जा रहे थे। उस युग में कुष्ट रोग बहुत बड़ा अपराध का कारण माना जाता था। अतः घर को छोड़कर कुछ दिन तीर्थ स्थानों में रहने से इस प्रकार के दोष दूर हो जाते थे। कुष्ट रोग शारीरिक त्रुटियों के कारण भी होता है किन्तु कालिदास को पार्वती-परमेश्वर के शाप से कुष्ट रोग को भी भोगना ही पड़ा था।

कालिदास के घर का परिचय

भारतीय समाज में एक कहावत बनी है कि राजा भी अपनी कन्या को अनेक दृष्टियों से विवाह के पश्चात् अपने घर पर नहीं रख सकता है। कारण उसका भरण-पोषण, आकांक्षाओं की पूर्ति तथा समुचित रीति से संरक्षण नहीं हो सकता है। विवाहिता कन्या अपने परिवार से दूर अपने पति के यहाँ ही अधिक सुखी, समस्त प्रकार से प्रसन्न, कुशल गृहिणी बनकर आदर्श जीवन व्यतीत कर सकती है। शकुन्तला नाटक में भी स्वयं महाकवि कालिदास ने कन्या को पतिगृह में रहना ही अच्छा माना है क्योंकि—

'एक मात्र पितृ कुल में रहने वाली सधवा स्त्री को साध्वी होने पर भी शंका की दृष्टि से देखते हैं। अतः अपने बन्धुओं द्वारा युवती स्त्री पति की प्रिय या अप्रिय होने पर भी पति के पास ही रहने के लिए अच्छी समझी जाती है।'[1]

अपनी अन्तिम विश्वविख्यात रचना शकुन्तला नाटक में कालिदास ने शकुन्तला को पितृगृह से ही विदा करने के प्रसंग में बहुत ही मार्मिक ढंग पर यह तथ्य स्पष्ट किया है :—

कन्या वस्तुतः दूसरे का धन है। आज उसे पति के पास भेजकर मानो चिर-काल की धरोहर लौटाकर मैं तत्काल प्रसन्न चित हो गया हूँ।'[2]

---

१. सतीमपि ज्ञातिकुलैकसंश्रयां
जनोऽन्यथा भर्तृमतीं विशङ्कते।
अतः समीपे परिणेतुरिष्यसे
प्रियाऽप्रिया च प्रमदा स्वबन्धुभिः॥ शकुन्तला ५ अंक १८ श्लोक

२. अर्थो हि कन्या परकीय एव तामद्य सम्प्रेष्य परिग्रहीतुः।
जातोऽस्मि सद्यो विशदान्तरात्मा चिरस्य निक्षेपमिवार्पयित्वा॥
शकुन्तला ४ अंक २४ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसी परम्परा से प्रभावित होकर ही राजा शारदानन्द ने भी अपनी एकमात्र विदुषी कन्या की विदाई करती बार अपने मन में ऐसी व्यथा अनुभव की जिसे कालिदास ने कुमारसम्भव में पार्वती को विदा करती बार और शकुन्तला नाटक में शकुन्तला को पति गृह भेजते हुए दिखाया है :—

आज शकुन्तला जायेगी, अतः मेरा हृदय आवेग से दुखी हो रहा है, स्वर रोके गये अश्रु प्रवाह के कारण विकृत हो रहा है। दृष्टि चिन्ता के कारण निश्चेष्ट हो रही है। वन में रहने वाले मुझको भी कन्या स्नेह के कारण ऐसी घबराहट हो रही है तो पुनः गृहस्थ लोग पुत्री के वियोग के नये दुख से क्यों न दुखी होते होंगे ?[1]

राजा शारदानन्द और उसकी पत्नी को अपनी पुत्री को विदा करने में तो अवश्य महान् कष्ट हुआ होगा क्योंकि वह उनकी एक लौती प्रिय और विख्यात विदुषी कन्या थी। राजा शारदानन्द अपनी विदुषी कन्या को कविल्ठा ग्राम में भेजकर अपने दायित्व से मुक्त अवश्य हुआ किन्तु उसने अपनी पुत्री के लिए उसके सामाजिक स्तर के उपयुक्त बहुत सुन्दर भवन, उद्यान, पानी की बावड़ी, भ्रमण के लिए ग्राम के उपरी उच्च शिखर पर क्रीड़ा क्षेत्र भी बनाया हुआ था। अपने इस सुन्दरतम वैभव पूर्ण भवन का कालिदास ने मेघ को उत्तरमेघ के १४ श्लोक से १९ तक इन छैः श्लोकों में स्पष्ट वर्णन किया है। इसके साथ ही राजा शारदानन्द ने प्रचुर धन, गृह कार्य की सामग्री भी अवश्य ही दी होंगी ?

राजा शारदानन्द की महाकवि और महाविदुषी के प्रति सहानुभूति

राजा शारदानन्द ने अपनी कन्या एवं उसके पति कालिदास की सुख-सुविधा का पूर्ण ध्यान रखा ही होगा ? और उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप आवास का निर्माण भी अवश्य ही किया होगा क्योंकि घर के कार्य में महाविदुषी को कष्ट न हो। अतः उसके कार्य में सहयोग देने के लिए कुछ सेविकाएँ भी दी होंगी ? जिसे कालिदास ने स्वयं अपनी आत्मकथा में मेघ को बताया है कि तुम मेरे घर में प्रवेश कर मेरा सन्देश तब सुनाना जब सेविकाएँ अथवा सहेलियां सो जायें :—

'दिन में प्रिय सखियां उस कृष शरीर वाली को किसी तरह भी एकाकी नहीं छोड़ सकेंगी क्योंकि संसार में स्त्रियों का स्वभाव एक जैसा ही होता है। अतः हे

---

१. यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पष्टमुत्कण्ठया
कण्ठः स्तम्भितबाष्पवृत्तिकलुषश्चिन्ताजडं दर्शनम्।
वैक्लव्यं मम तावदीदृशमपि स्नेहादरण्यौकसः
पीड्यन्ते गृहिणः कथं न तनयाविश्लेषदुःखैर्नवैः ॥

शकुन्तला ४ अंक ८ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मेघ ! शय्या के पास वाली खिड़की पर बैठा हुआ तू दास-दासियों के सो जाने पर ही मेरी पूरी नींद न ले सकने वाली प्रिया के पास पहुँचना।[1]

इस उद्धरण से यह भी स्पष्ट होता है कि गुप्तकाशी के राजा शारदानन्द को अपनी विदुषी संस्कृत जगत् में ख्याति प्राप्त पुत्री और सरस्वती के साधक अपने दामाद महाकवि कालिदास के सम्मान का भी पूर्ण ध्यान था। कितना भी वह छोटा राजा रहा होगा तब भी राजा ही तो था। उसने गृह कार्य में सहायता के लिए दासियाँ और मनोरंजन कराने के लिए सहेलियां भी दी हुई थीं। जिसे अपनी आत्मकथा के पूर्व वर्णित श्लोक में स्वयं कालिदास ने स्पष्ट किया है। यह राजा शारदानन्द की उनके प्रति सच्ची सहानुभूति और सम्मान था। उन दोनों के प्रति राजा एवं रानी का अत्यधिक स्नेह था तथा विद्योत्तमा उनकी एकाकी प्रिय सन्तान थी। बेचारा यक्ष तो कुबेर का एक साधारण सेवक था और न जाने उस जैसे उसके कितने और सेवक रहे होंगे ? क्या सभी सेवक अपनी पत्नियों के लिए सेविकाएँ और सहेलियाँ रख सकते हैं क्योंकि सभी अलका में अपने वैभव में मस्त हैं पुन: सेवा करने के लिए कहाँ से सेवक बुलाये गये हैं ? यह कालिदास की अपने हृदय की व्यथा को कथा के रूप में वर्णन करने की उस युग के अनुरूप एक सुन्दरतम शैली है। शारदानन्द द्वारा एकत्र की हुई सामग्री का कालिदास ने अपनी आत्मकथा में विस्तृत रूप से वर्णन किया है। यह कवि की शारदानन्द के प्रति कृतज्ञता, वास्तविकता को स्पष्ट करना और अपनी सही स्थिति बताना है।

राजा शारदानन्द ने अपनी विदुषी पुत्री की आकांक्षाओं के अनुरूप उसके लिए सुसज्जित गृह का निर्माण भी अवश्य ही किया होगा क्योंकि राजकुमारी विद्योत्तमा ने बाल्यकाल में जो सुख भोगा था उसी के अनुरूप ही विवाह के पश्चात् भी एक महाकवि की पत्नी के रूप में उसे सुखी देखना भी आवश्यक था। शारदानन्द की वह एकलौती सन्तान भी थी। अपनी आत्मकथा में यद्यपि महाकवि कालिदास ने अपने प्रारम्भिक जीवन का वर्णन तो नही किया है किन्तु श्वसुर द्वारा दी गई सम्पत्ति को अपनी मानकर उसका विस्तृत रूप में मेघदूत में स्वयं अपनी वाणी से वर्णन किया है। अपनी अनुभूति और अपने समस्त-सुखों से परिपूर्ण एवं सुसज्जित आवास का महाकवि कालिदास ने मेघ को इस प्रकार कितना सही वर्णन किया है :—

१—स्निग्धाः सख्यः कथमपि दिवा तां न मोक्ष्यन्ति तन्वी-
मेकप्रख्या भवति हि जगत्यङ्गनानां प्रवृत्तिः।
स त्वं रात्रौ जलद ! शयनासन्नवातायनस्थः
कान्तां सुप्ते सति परिजने बीतनिद्रामुपेयाः॥ उत्तरमेघ २७ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'वहाँ कुबेर के घर के उत्तर में पास ही इन्द्रधनुष के समान सुन्दर फाटक युक्त दूर से ही दिखाई देने वाला मेरा घर है। जिसके अन्दर मेरी प्रिया द्वारा लालन-पालन करके बड़ा किया हुआ दत्तक पुत्र के समान, हाथों से छुए जाने योग्य गुच्छों से झुका हुआ एक छोटा सा मन्दार का वृक्ष है।'[1]

महाकवि कालिदास ने अपने घर की पहचान सुन्दर फाटक जो गोलाकार में हैं, जो अपनी ही विशेषताओं के कारण दूर से ही दिखाई देगा उसके समान वहाँ कोई दूसरा भवन ही नहीं होगा क्योंकि वह राजा शारदानन्द द्वारा बनवाया गया था उसके अन्दर आंगन में मन्दार का पेड़ है। पेड़-पौधों को पर्यावरण की शुद्धि, धूप से रक्षा, शीतलता, नमी, वर्षा, हवा, प्राकृतिक सौन्दर्य और पूजा एवं जीवन की रक्षा के लिए फल-फूल, हवन सामग्री तथा इंधन का भी काम देते थे। प्राचीन भारतीय समाज में वृक्षों को लगाना एवं उनकी सुरक्षा करना बहुत बड़ा पुण्य का कार्य माना जाता था। हरे और फलदार पेड़ों को काटना पाप गिना जाता था और उस समय आज की तरह पर्यावरण प्रदूषण जैसी समस्या भी न थी।

जिस व्यक्तियों की कोई सन्तान नहीं होती थी, वे पशुओं, पक्षियों और पेड़ों की सेवा कर प्रसन्न होकर पुत्र जैसा सुख अनुभव करते हैं। उपकार और पुण्य प्राप्ति की दृष्टि से भी फलदार एवं छायादार पेड़ मार्गों के किनारे लगाए जाते हैं। महाकवि कालिदास ने अपनी इन मानवीय भावनाओं को आत्मीय सम्बन्ध के साथ शकुन्तला नाटक के ४ अंक में ऋषि कण्व के द्वारा बुलवाया है :—

'तुम (वृक्षों) को सींचे बिना जो जल भी ग्रहण नहीं करती थीं, तुम्हारे प्रति स्नेह के कारण जो आभूषण प्रिय होने पर भी तुम्हारे पत्ते नहीं तोड़ती थीं और तुम्हारे फूलने के समय जिसका भी उत्सव होता था, उसे प्रेम से मनाती थी। वही यह शकुन्तला पति के घर जा रही है, तुम इसे जाने की आज्ञा दो।'[2]

१—तत्रागारं धनपतिगृहादुत्तरेणास्मदीयं
दूराल्लक्ष्यं सुरपतिधनुश्चारुणा तोरणेन।
यस्योपान्ते कृतकतनयः कान्तया वर्धितो मे
हस्तप्राप्यस्तबकनमितो बालमन्दारवृक्षः ॥ उत्तरमेघ १४ श्लोक

१. पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वसिक्तेषु या
नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।
आदौ वः कुसुमप्रवृत्तिसमये यस्या भवत्युत्सवः
सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम् ॥

शकुन्तला ४ अंक ११ श्लोक।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मानव के जीवन में जल का अत्यधिक महत्त्व है। अतः उस सृष्टिकर्ता ने पृथ्वी में तीन भाग पानी ही रखा है। कालिदास के ग्राम कविल्ठा के नीचे नदी है किन्तु राजा शारदानन्द ने अपनी पुत्री की सुविधा के लिए सुन्दर बावड़ी बनाई हुई थी, वह कैसी थी ? इसका कालिदास ने ही अपने शब्दों में मेघदूत में ऐसा वर्णन किया है :—

'उस मेरे घर में मरकत मणि की शिलाओं से बनी हुई सीढ़ियों वाली एक बावड़ी है, जो कोमल वैदूर्यमणि की नाल वाले खिले हुए स्वर्ण कमलों से सम्पन्न है और उसके स्वच्छ जल में रहने वाले हंस तुझे देखकर भी दुखित हुए पास ही में स्थित मानसरोवर जाने की इच्छा नहीं करेंगे।'[1]

इस श्लोक में 'मानसं सन्निकृष्टं' से यह स्पष्ट होता है कि अलका, मानसरोवर कविल्ठा ग्राम से निकट ही थे। जिन्हें वह प्रायः देखता रहा होगा। श्वसुर, शारदानन्द अन्य राजाओं और आश्रयदाता विक्रमादित्य के द्वारा भी पर्याप्त सहायता प्राप्त रही होगी ? तभी कालिदास का इतना सुख-सुविधाओं से युक्त आवास था।

गढ़वाल और कालिदास

हिमालय के उत्तराखण्ड में अनेक छोटे-छोटे राज्य थे, जिन्होंने अपने राज्य की सुरक्षा के लिए या अपने राजसी वैभव को दिखाने के लिए अपने-अपने गढ़ (दुर्ग) बनाये हुए थे। इसी आधार पर अनेक गढ़ों के होने कारण इस भूभाग का नाम गढ़वाल पड़ा। बहुत बाद में इन गढ़ों का भूभाग टिहरी राजवंश के अधिकार में आने से यह गढ़वाल नाम से प्रसिद्ध हो गया। जिसकी राजधानी सर्वप्रथम बहुत दिनों तक श्रीनगर में रही। श्रीनगर राजधानी होने पर राजा के हाथी खोला ग्राम की सीमा में बांधे जाते थे। उस स्थान को आज भी 'हाथी रौणा' की धार कहा जाता है और उसके ही कुछ दूर देवलगढ़ दुर्ग बनाया हुआ था। अंग्रेजों के आने पर विशाल गढ़वाल के दो भाग हो गये १—टिहरी गढ़वाल २—ब्रिटिश गढ़वाल। नेपाल के राजा से युद्ध करने की सहायता में ही अंग्रेजों को राज्य का आधा भाग दिया गया था। जिसकी प्राकृतिक सीमा अलकनन्दा नदी थी। टिहरी के राजा बहुत दिनों तक देवलगढ़ की राजराजेश्वरी देवी को अपनी कुलदेवी मानकर पूजा करने आया करते थे।

---

१. वापी चास्मिन् मरकतशिलाबद्धसोपानमार्गा
हैमैश्छन्ना विकचकमलैः स्निग्धवैदूर्यनालैः।
यस्यास्तोये कृतवसतयो मानसं सन्निकृष्टं
नाध्यास्यन्ति व्यपगतशुचस्त्वामपि प्रेक्ष्य हंसाः॥ उत्तरमेघ १५ श्लोक।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उत्तराखण्ड गढ़वाल में जन्म लेने, राजा शारदानन्द के दामाद होने के कारण और हिमालय के उत्तराखण्ड का प्रतिभा सम्पन्न ख्याति प्राप्त महाकवि होने के कारण क्या हिमालय उत्तराखण्ड के अन्य राजाओं ने तन, मन एवं धन से उसको सम्मान नहीं दिया होगा ? उस युग में राजा एवं प्रजा कवियों का अत्यधिक समादर करते थे। अपने जीवन के अन्तिम भाग में उज्जयिनी के महाराजा विक्रमादित्य का आश्रय छोड़कर महाकवि कालिदास हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल में ही रहने लगा था। कालिदास के अन्तिम जगत् प्रसिद्ध शकुन्तला नाटक के अध्ययन और अन्तिम श्लोक से यह स्पष्ट होता है।

हिमालय उत्तराखण्ड के राजाओं से पूर्ण सम्मान पाने के पश्चात् ही कालिदास सभी प्रपंचों को छोड़कर निश्चिन्त होकर गढ़वाल में ही रहने लगा था। भारतीय संस्कृति के रक्षक कालिदास ने अपने रघुवंश महाकाव्य में इक्ष्वाकुवंश के रघुवंशीय राजाओं के आदर्श चरित्रों को भी रघुवंश में अच्छी प्रकार से दिखाया है। कालिदास महाकवि के साथ ही साथ स्वस्थ भारतीय परम्पराओं का भी बहुत बड़ा पक्षधर था।

महाकवि कालिदास ने अपने को हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल का निवासी बताने में अपने प्रथम महाकाव्य कुमारसम्भव में गढ़वाल के ऊपरी क्षेत्र केदारखण्ड का सूक्ष्म निरीक्षण कर वर्णन किया है और अन्तिम प्रसिद्ध रचना शकुन्तला नाटक में गढ़वाल के नीचे के क्षेत्र हिमालय की तराई कोटद्वार कण्वाश्रम का अति ही सूक्ष्म वर्णन किया है। ये दोनों रचनाएं उत्तराखण्ड गढ़वाल का महाकवि कालिदास कालीन वैभवपूर्ण इतिहास को बताने में परम सहायक हैं। मेघदूत गीति काव्य तो कालिदास की आत्मकथा और जन्मभूमि के प्रमाणों से भरा पड़ा हुआ है। मेघदूत के सन्देश, अपनी जन्मभूमि एवं महाविदुषी विद्योत्तमा से मिलने के पश्चात् वह महाकवि पुनः उज्जयिनी नहीं गया। जाता भी कैसे ? क्योंकि बड़ी साधना, तपस्या और दारुण दुखों से प्राप्त अपनी प्रिय वस्तु को वह महाकवि मृत्यु पर्यन्त अब कैसे छोड़ सकता था ? अनेक कष्टों से प्राप्त वस्तु का महत्त्व सच्चा व्यक्ति अच्छी प्रकार से जानता है और उसके प्राप्त होने पर उसके लिए बड़ा से बड़ा त्याग करने को तत्पर रहता है। अतः महाकवि कालिदास विद्योत्तमा को पाकर पुनः उत्तराखण्ड की केदारभूमि के बाहर कहीं नहीं गया। प्रेरणा, शान्ति, भक्ति और मुक्ति पाना भी उसके जीवन का मुख्य लक्ष्य था।

कालिदास के प्रारम्भिक जीवन की अनेक कहानियाँ, गुप्तकाशी, राजा शारदानन्द एवं विद्योत्तमा के नाम बहुत दिनों तक चर्चा के विषय रहे। अनपढ़ कालिदास नाम और उससे जुड़ी हुई कहानियाँ बहुत दिनों तक प्रचलित रहीं। संस्कृत के विद्वानों में कुमारसम्भव, रघुवंश की सूक्तियां आज भी साधारण जनता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में भी प्रसिद्ध हैं। उत्तराखण्ड में महाकवि कालिदास के रघुवंश महाकाव्य के द्वितीय सर्ग के प्रथम श्लोक से गाय की सेवा, कर्तव्य की भावना जगाने, ऋषियों की सेवा और विद्याध्ययन के महत्त्व को बताने तथा कष्ट से विद्या उपार्जन करने का मार्ग दिखाया है। जिसे गढ़वाल के संस्कृतज्ञ अपने बच्चों की शिक्षा इसी से प्रारम्भ करते थे :—

'दूसरे दिन प्रातःकाल रानी सुदक्षिणा ने सर्वप्रथम फूल, गन्ध माला से श्रद्धा के साथ नन्दिनी की पूजा की फिर जब नन्दिनी के बछड़े ने दूध पी लिया तब यशस्वी राजा दिलीप ने उसे बांध दिया और गुरु वशिष्ठ की उस धेनु को वन में चराने के लिए खोल दिया।'[1]

हिन्दू संस्कृति में वैदिक काल से गाय को सबसे बड़ा धन माना जाता था और उसके मूत्र, गोबर, दूध, दही, मक्खन और घी को शरीर को पौष्टिक बनाने के लिए आवश्यक मानकर उसे माता माना गया था। गाय कृषि, धार्मिक कृत्य, दूध के लिए आवश्यक मानी गयी थी। गायों की सेवा करना, उन्हें चराना अच्छा कार्य माना जाता था। श्रीकृष्ण ने भी उस परम्परा का ध्यान रखा और अपने बाल्य-काल में गायों की सेवा की। ठीक इसी प्रकार अपने बाल्यकाल में महाकवि कालिदास ने भी गायों की सेवा की है। जिसे राजा दिलीप के प्रसंग में रघुवंश में दिखाया है।

कवि का घर, क्रीड़ा शैल और बावड़ी

महाकवि कालिदास ने बाल्यकाल से ही प्रकृति के साथ सामंजस्य रखकर उसके मानवीय उपकार की दृष्टि से जो भी सीखा उसे अपने अमर साहित्य में अपनी माधुर्य गुण युक्त सुकुमार भावनाओं से अपने अध्येताओं को ब्रह्मास्वाद सहोदर के निकट पहुँचाया है। मेघदूत में छः श्लोकों में तो कवि ने अपने घर का सही परिचय देने में बड़ी ही विदग्धता दिखाई है। वास्तव में वह एक महाकवि का घर है और फिर राजा के द्वारा बनाया गया है। प्राकृतिक शैल खण्डों के जल स्रोतों से निकलने वाले पानी की बावड़ी बनी है। उसी बावड़ी के पास ही एक क्रीडा पर्वत है:—

'इसी बावड़ी के किनारे इन्द्रनील मणियों से बनी हुई चोटी वाला एक क्रीड़ा शैल है, जो सुनहरे केले के वृक्षों की बाड़ के कारण अत्यन्त दर्शनीय है। हे मित्र!

१—अथ प्रजानामधिपः प्रभाते जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्याम्।
वनाय पीतः प्रतिवद्धवत्सां यशोधनो धेनुमृषेर्मुमोच॥
रघुवंश २ सर्ग १ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बिजली से चमकते हुए किनारों वाले तुझे देखकर तथा मेरी प्रिया को वह प्यारा लगता है, अतः मैं आतुर मन से उस क्रीड़ाशैल का स्मरण कर रहा हूँ।'[१]

सौन्दर्य वृद्धि, सुरक्षा, एकान्त वास और दूर-दूरतक प्राकृतिक वैभव को देखने के लिए क्रीड़ा शैल बावड़ी के किनारे है। क्रीड़ाशैल में भ्रमण करने की आतुरता से भी कवि अधिक चिन्तित है। यक्षरूपी कालिदास की क्रीड़ाशैल के स्मरण से ही पत्नी, अपने पूर्व क्रिया-कलापों एवं घर की स्मृति अत्यधिक उत्कण्ठा को धारण कर लेती है। यह कवि की कहीं भी कल्पना नहीं है अपितु अपने देखे हुए, उपयोग किए हुए स्थान और प्रिया के साथ क्रीड़ाशैल पर भ्रमण करने की स्मृतियां उसे विह्वल कर रही हैं।

उस क्रीड़ा शैल में विभिन्न प्रकार के वृक्ष भी हैं वह लाल अशोक पाद प्रहार और सुन्दर बकुल वृक्ष मादक मुख की मदिरा चाहता है। अपने पूर्व सुखों की स्मृति में यक्ष रूपी कवि अधिक चिन्तित है। दुख में पूर्व सुख की अनुभूति अधिक होती हैं और दुखी व्यक्ति उनकी स्मृति में ही अधिक व्यग्र हो जाता है :—

'क्रीडा पर्वत पर कुरबक की बाढ़ वाले, माधवी लता गृह के समीप हिलते हुए पत्तों वाला लाल अशोक और सुन्दर बकुल वृक्ष हैं। एक वृक्ष अशोक मेरे साथ तेरी सखी के बाएँ पैर की चोट खाना चाहता है तो दूसरा फूलों को उत्पन्न करने की इच्छा से उसके मुख की मदिरा को चाहता है। ओठों के स्पर्श के रूप में निकली हुई मदिरा को चाहता है।' (पादप्रहार और मुख मदिरा से दोनों वृक्ष अपना वास्तविक लाभ देते हैं) अशोक का लाल फूल कामोद्दीपन वाला भी होता है।[२]

पालतु पक्षियों के लिए भी क्रीड़ाशैल पर बैठने के लिए एक सुन्दर मचान भी बनाया हुआ था। वह मचान दोनों वृक्षों के बीच में इस प्रकार अपने विशेष निर्माण से शोभा दे रहा था :—

हे मेघ! रक्ताशोक और बकुल वृक्ष के बीच में कोमल बांसों की शोभावली एक सोने की बैठने वाली छड़ी है, जिस छड़ी का निचला भाग पन्नों से बना है।

---

१. तस्यास्तीरे रचितशिखरः पेशलैरिन्द्रनीलैः
क्रीड़ाशैलः कनककदलीवेष्टनप्रेक्षणीयः।
मद्गेहिन्याः प्रिय इति सखे! चेतसा कातरेण
प्रेक्ष्योपान्तस्फुरिततडितं त्वां तमेव स्मरामि॥ उत्तरमेघ १६ श्लोक

२. रक्ताशोकश्चलकिसलयः केशरश्चात्र कान्तः
प्रत्यासन्नौ कुरबलवृतेमधिवीमण्डपस्य
एकः सख्यास्तव सह मया वामपादाभिलाषी
कांक्षत्यन्यो वदनमदिरां दोहदच्छद्मनाऽस्याः॥ उत्तरमेघ १८ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उस पर हाथ में पहने हुए कंगनों की झनझनाहट से मधुर तालियों से मेरी प्रिया के द्वारा नचाया जाने वाला तुम्हारा मित्र मोर सायंकाल होने पर वहाँ बैठता है।'[१]

उस युग में प्रचुर मात्रा में राजाओं के पास विभिन्न प्रकार के रत्नों का भण्डार होता था। अतः अपनी पुत्री की रुचि के अनुरूप राजा शारदानन्द ने मुक्त हृदय से दान भी दिया ही होगा। तभी तो ऐसा वैभव पूर्ण घर है।

इस श्लोक से कवि की पत्नी के पक्षी, पेड़-पौधों, फल-फूलों, संगीत (नृत्य-वाद्य) काव्यकला आदि ललित कलाओं के विशद ज्ञान का भी पता चलता है, जिसको कि अपनी आत्मकथा में यत्र-तत्र महाकवि कालिदास ने वर्णन किया है। वस्तुतः यक्ष तो एक सामान्य कुबेर की पूजा के लिए पुष्प लाने वाला माली ही तो है। वैसे यक्षों के कृपण स्वभाव के विषय में भी कई जगह अच्छा वर्णन किया गया है वह कृपण अपने लिए कैसे इतना व्यय कर सकता है?

सन्देश पहुँचाने के लिए मार्ग बताने के पश्चात् यक्षरूपी कवि ने अपने घर की पहचान का कई श्लोकों में वर्णन किया है। जिस अपनी प्रिया के लिए वह सन्देश भेज रहा है, उसके सौन्दर्य, नख-शिख और आकार का भी बहुत ही सूक्ष्म दृष्टि से मेघ को परिचय दिया है। जिससे सन्देश देने में कोई त्रुटि न हो जाये।

मेघ को अपनी पत्नी का सही परिचय देना

अपनी नवयुवती पत्नी का अवस्था के अनुरूप महाकवि कालिदास रूपी यक्ष ने चित्रकार की भाँति सटीक वर्णन किया है। स्वस्थ, गठीला, युवावस्था का शरीर दुबला-पतला सौन्दर्यवर्धक और आकर्षण होता है :—

'शरीर से दुबली-पतली, पूर्ण युवावस्था को प्राप्त, अनार के बीजों के समान दांतों वाली, पके हुए बिम्बफल के समान लाल अधरोष्ट से शोभित पतली कमर-वाली, डरी हुई मृगी के समान चंचल नेत्रों वाली, गहरी नाभिवाली, नितम्बों के भार से मन्द-मन्द गति से चलने वाली, उन्नत स्तनों से कुछ झुकी हुई और युवतियों में ब्रह्मा की प्रथम रचना के समान जो स्त्री होगी उस घर में तुम प्रवेश करना।'[२]

---

१. तन्मध्ये च स्फटिकफलका काञ्चनी वासयष्टि-
मूले बद्धा मणिभिरनतिप्रौढवंशप्रकाशैः।
तालैः शिञ्जावलयसुभगैर्नर्तितः कान्तया मे
यामध्यास्ते दिनसविगमे नीलकण्ठः सुहृद्वः॥ उत्तरमेघ १९ श्लोक

२. तन्वी श्यामा शिखरिदशना पक्वबिम्बाधरोष्ठी
मध्ये क्षामा चकित हरिणीप्रेक्षणा निम्ननाभिः।
श्रोणीभारादलसगमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्यां
या तत्र स्याद्युवतिविषये सृष्टिराद्येव धातुः॥ उत्तरमेघ २२ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपनी नवयुवती पत्नी का वास्तविक स्वरूप और उसके स्वाभावित सौन्दर्य का वर्णन करने में यक्ष रूपी कवि ने अपने अनन्य प्रेम को भी अभिव्यक्त किया है। यक्ष एवं यक्षिणियां तो सदा युवा अथवा युवती ही रहती हैं किन्तु अपनी प्रिया का कवि यौवन काल का ही उत्कृष्ट वर्णन कर रहा है। अपनी पत्नी की आकृति को एवं नख-शिख सौन्दर्य से वह यह सिद्ध कर रहा है कि युवतियों में विधाता की यह सुन्दरतम प्रथम रचना है। वैसे अपनी प्रिय वस्तु सबको अच्छी और जगत् में अद्वितीय लगती ही है, किन्तु उपमा का धनी कालिदास पूर्वतीय भाग की नारी के स्वाभाविक सौन्दर्य का वर्णन कर रहा है।

महाकवि कालिदास ने हिमालय के सन्निकट के वातावरण से प्रभावित होकर यक्ष जाति की वैभवपूर्ण नगरी अलका का और यक्षों के प्रति विशेष अनुराग होने पर ही अपने मेघदूत का माध्यम यक्ष को ही बनाया है। यक्ष ग्राम देवता के रूप में एक प्रतीक भी है। यक्ष अपनी विघ्न-बाधाओं को दूर करने का भी एक मंगलमय आधार है किन्तु यक्ष इतने दुःख में नहीं रहते जितने दुख में स्वयं महाकवि कालिदास मेघदूत में देखा गया है। यक्ष जन्म जात रूप से ही अजर, अमर सर्वगुण सम्पन्न है। उत्तरमेघ में मेघ को कवि ने अपनी पत्नी को ब्रह्मा की प्रथम रचित नारी और सौन्दर्यमयी रचना माना है। महाकवि कालिदास को सौन्दर्यशास्त्र का ही नहीं अपितु आकृति विज्ञान का भी अत्यधिक ज्ञान था। सौन्दर्य के साथ ही साथ अपनी विदुषी पत्नी की आकृति की कितनी विशेषताएँ बताता है। इतना ही नहीं अपितु इतने उचित विशेषणों के द्वारा उसके गुणों का वर्णन किया है कि ये कम नारियों में दिखते हैं—तन्वी = स्वस्थ, सुन्दर और छरछरे बदनवाली (दुबली पतली) श्यामा = १६ वर्षीय युवती, श्यामा से श्याम रंग नहीं अपितु यौवन पूर्णअवस्था ऐसी स्त्रियों का समागमन ऋतुओं के अनुकूल ही शीत एवं उष्ण होता है। शिखरिदशाना = शिखर के समान बराबर उठे हुए, देखने में सुन्दर, ओठों की लालिमा से जो विशेष रूप धारण कर लेते हैं और तीखे है। पक्वबिम्बाधरोष्ठी = पके हुए बिम्बफल के समान लाल ओष्ठवाली। ओंठों का लाल होना अच्छे स्वास्थ्य शरीर में रक्त वृद्धि का परिचायक हैं। मध्ये क्षामा = क्षीण कटि पतली कमर भी सौन्दर्य वृद्धि का द्योतक है। शरीर स्थूल नहीं है। चकित हरिणीप्रेक्षणा = लज्जाशील और सुन्दर नेत्रों वाली। निम्ननाभि = गहरी नाभि वाली, यह पति से विशेष प्रेम करने वाली और उसकी इच्छा के अनुरूप कार्य करने वाली होती है। विद्या आदि गुणों में परिपूर्ण होने पर भी पति के प्रति अधिक अनुरक्त होती है। श्रोणीभारादलसगमना = गजगामिनी एवं नितम्बों के भार से मन्द गति से चलने वाली, श्रेणी के भार से मन्द-मन्द चलने वाली। स्तोकनम्रा = अवस्था के अनुरूप स्तनों के भार से विनीत है। ऐसी सुन्दर युवती ब्रह्मा ने अपनी रचना में इसका प्रथम ही निर्माण किया है क्योंकि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यह आकृति, स्वभाव, गुण, सौन्दर्य और सौम्यभाव में संसार की नारियों में अद्वितीय है।

दैवीय दृष्टि से नहीं अपितु मानवीय दृष्टि से अपनी पत्नी की विविध प्रकार की विशेषताओं को बताना ही कवि का उद्देश्य रहा है। क्योंकि सन्देश वाहक को जिससे पहचानने में तनिक भी कष्ट और द्विविधा न हो 'यत्राकृति तत्र गुणावसन्ति' जहाँ सौन्दर्य होता है वहाँ गुण होते ही हैं की बात भी यहाँ सही चरितार्थ हो रही है। इस श्लोक से यह स्पष्ट होता है कि यक्षों की पत्नियां तो सदा तन्वी और श्यामा ही रहती हैं किन्तु यहाँ तो महाकवि कालिदास ने अपने गीतिकाव्य का मुख्य पात्र अलका का यक्ष बनाया है। अतः उसका आश्रय लेकर ही अपने जीवन की गाथा, पत्नी को सन्देश और दूत को अपने घर, गृहिणी का ठीक-ठीक सूक्ष्म दृष्टि से भी परिचय दिया हैं। अलका के यक्ष की अलका का भी तो कुछ न कुछ वर्णन करना भी आवश्यक हो जाता था।

मानवीय आकृति का सही-सही परिचय देकर महाकवि कालिदास ने अपनी आत्मकथा की ओर अध्येताओं का ध्यान आकर्षित किया हैं। उसे समझ सकना या न समझ सकना सच्चे पाठक पर निर्भर करता है। इस श्लोक से कालिदास की पत्नी की मुखाकृति, शारीरिक संरचना, सौन्दर्य, सौम्यता और अपने पति के प्रति अनन्य प्रेम का भी सम्यग् ज्ञान प्राप्त हो जाता है। वह वास्तव में विधाता की सुन्दरतम प्रथम कृति थी। जिसके रूप, गुण और अच्छे स्वभाव का कालिदास पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा हुआ था।

यक्ष अपने क्षेत्र के विस्तृत भूभाग को छोड़कर किसलिए उज्जयिनी तक की यात्रा कर रामगिरि आश्रम में एकाकी निवास करता? तीर्थस्नान, तीर्थयात्रा, तीर्थवास और तीर्थ में साधना करने के लिए गंगाओं का उद्‌गम स्थान हिमालय क्या कम महत्त्व रखता है? व्यास, उद्धव, विदुर, धृतराष्ट्र, गान्धारी, पाँचों पांडव मान्धाता पुत्र मुचुकुन्द, और राजा परीक्षित् तो उतनी दूर से इस उत्तराखण्ड तपोभूमि में आये और बेचारा यक्ष इतनी दूर गर्मी में उससे भी अधिक दुख भोगने उज्जयिनी क्यों जाता? महाकवि कालिदास ने तो शाप और कुष्ट रोग को दूर करने के अतिरिक्त यश तथा अर्थ भी उपार्जन करना था एवं उस युग में संस्कृत के प्रसार-प्रचार में विक्रमादित्य का सम्पूर्ण भारत में ख्याति प्राप्त नाम था। इसके साथ ही वह विद्वानों का आश्रयदाता और परम गुणग्राही था। ऐसे शासक से मिलना कालिदास के लिए उस युग के अनुरूप आवश्यक था। शाप ने एकपन्थ दो काज का काम किया।

प्रत्येक वस्तु का एक स्थान होता है, जहाँ उसका सही मूल्यांकन होता है। विपरीत स्थान में होने से व्यक्ति, वस्तु और सामग्री का महत्त्व कम हो जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यक्ष का उज्जयिनी में क्या महत्त्व ? किन्तु महाकवि कालिदास को समस्त भारत में कवियों के कुल में प्रथम स्थान मिलना था और विद्वत्ता प्रकाश में आनी थी। यहीं से उसकी कविता प्रकाश में आकर विश्व भर में फैली। अतः यह मेघदूत गीतिकाव्य महाकवि कालिदास की ही सही आत्मकथा है, उसकी यह प्रत्युत्पन्नमति और पारखी दृष्टि है।

महाकवि कालिदास यदि उज्जयिनी महाराजा विक्रमादित्य की राजसभा में न जाता तो जिस प्रकार हिमालय, उत्तराखण्ड, विद्योत्तमा, शारदानन्द, गुप्तकाशी, कालीमठ और कविल्ठा उसकी जीवन गाथा से भुलाएँ गये हैं उसी प्रकार उसकी रचनाएँ भी भुलाई जा सकती थीं। यद्यपि पाश्चात्य विद्वानों और कुछ उनके अनुयायियों ने कालिदास को गुप्तकाल का सिद्ध करने का अधिक प्रयास किया है। इसके साथ ही कई कालिदासों की गिनती करके प्रसिद्ध अमरसाहित्य के प्रणेता महाकवि कालिदास को विक्रमादित्य उपाधिधारी का समकालीन गुप्तवंशीय चन्द्रगुप्त माना है।

स्वतन्त्र होने के पश्चात् भी हमारे मस्तिष्क में पाश्चात्य विद्वानों की भावनाएँ इस प्रकार बैठी हैं कि उन्हें हमारे कुछ लोग नहीं भूल पाते हैं। वास्तव में आज भी यदि कोई पाश्चात्य विद्वान् महाकवि कालिदास का परिचय, आत्मकथा और मेघदूत पर आधारित कुछ भी सामग्री लेकर अपने विचारों को प्रस्तुत करता तो वह हमारे लिए सही प्रमाण हो जायेगी। क्योंकि उसके कार्य को शोधपूर्ण, खोजपूर्ण और तथ्यों का सही विश्लेषण करने वाला माना जायेगा। वास्तव में यह लोकोक्ति सही है कि—'घर का जोगी जोगणा और बाहर का जोगी सिद्ध।' वह दूर बैठ कर कल्पना से ही सही लिख सकता है और हम महाकवि कालिदास की साधना स्थली, कर्मस्थली एवं जन्मस्थली से उसके वर्णित अमरसाहित्य से सही सामग्री एकत्रित कर उसका उन स्थानों से तुलनात्मक अध्ययन-चिन्तन तथा मनन कर एक सही सृजनात्मक कार्य कर रहे हैं। वह दोष ही देखने वालों के लिए प्रमाण नहीं हो सकता है। कालिदास ने अपने मालविकाग्निमित्र नाटक में युग के अनुरूप अपने मन की सही बात कह ही दी :—

'पुराने ही होने से न तो सब अच्छे हो जाते हैं और न नये होने से ही सब बुरे हो जाते हैं। सज्जन लोग दोनों को परखकर उनमें से जो अच्छा होता है उसे ही अपना लेते हैं एवं जिन्हें अपनी समझ होती ही नहीं है, उन्हें तो जैसा दूसरे समझा देते हैं उसे ही वे ठीक मान बैठते हैं।'[१]

१. पुराणमित्येव न साधु सर्वं न चापि काव्यं नवमित्यवद्यम्।
सन्तः परीक्ष्यान्यतरद्भजन्ते मूढः परप्रत्ययनेयबुद्धिः॥
मालविकाग्निमित्र १ अंक २ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रवासी कवि दूरस्थ प्रदेश में बैठा अपनी पत्नी के विषय में तरह-तरह की परिकल्पनाएँ कर रहा है। अपने अनन्य प्रेम को व्यक्त करने के लिए उसे अपना दूसरा जीवन मानता है। विरह के कारण उसका सौन्दर्य भी कुछ परिवर्तित हो गया है किन्तु जो कि कभी यक्षिणियों का नहीं होता है :—

'हे मेघ ! मुझ साथी के दूर होने पर चकवी की तरह कम बोलने वाली एवं अकेली उसे तुम मेरा दूसरा जीवन समझो। अति उत्कण्ठावाली वह युवती लम्बे विरह के कारण इन दिनों के व्यतीत होने पर पाले से पीड़ित कमलिनी के समान दूसरे ही रूप को प्राप्त हो गई होगी, मैं ऐसी कल्पना करता हूँ।'[1]

कवि को अपनी पत्नी की मनस्थिति और उसके हृदय के पवित्रतम विचारों का पूर्ण ज्ञान है। वह सौम्यरूपायुक्त सुन्दरी ही नहीं है अपितु मृदु और मितभाषी भी है। कवि अपने पारिवारिक जीवन से अत्यधिक सन्तुष्ट, आशावादी एवं परम आत्मविश्वासी है। उसके इतने बड़े प्रवासी जीवन में उसे कहीं भी पत्नी के प्रति तनिक भी शंकालु नहीं देखा गया है। महाकवि कालिदास के युग के लोगों में इस प्रकार का नैतिक बल था। लोग अपने दायित्वों का सही पालन करते थे।

विरहिणी युवती अपने एकाकी जीवन में अत्यधिक दुखी होने से अपने प्रिय जन के विषय में चिन्तित होकर रोती रहती है। कवि की पत्नी विदुषी होने पर कविता भी कर सकती है, वाद्ययन्त्रों से गा भी सकती है, पेड़-पौधों को सींच भी सकती है, पशु-पक्षियों से मनोरंजन भी कर सकती है किन्तु उसे अपने दारुण दुख में प्रिय की स्मृति के अतिरिक्त कुछ और अच्छा ही नहीं लग रहा है। नव युवती उसमें भी नवोढ़ा और कोई भी सन्तान नहीं है पुनः वह किसी से न मिल ही पाती है न अपनी सफाई ही कर सकती है, उसे अपने तन तक की सुध ही नहीं है।

'हे मेघ ! अधिक रोने से सूजे नेत्रों वाली, निश्वास से गरम होने से शोभा हीन ओंठ वाली, हथेली के ऊपर रखा हुआ बालों के लटकने के कारण पूर्ण रूप से न दिखने वाला मुख तेरे आवरण से निश्चय ही क्षीण कान्ति वाले चन्द्रमा के समान दिख रहा होगा।'[2]

---

१. तां जानीयाः परिमितकथां जीवितं मे द्वितीयं
दूरीभूते मयि सहचरे चक्रवाकीमिवैकाम्।
गाढोत्कण्ठां गुरुषु दिवसेष्वेषु गच्छत्सु बालां
जातां मन्ये शिशिरमथितां पद्मिनीं वान्यरूपाम्॥ उत्तरमेघ २० श्लोक

२. नूनं तस्याः प्रबलरुदितोच्छूननेत्रं प्रियाया
निश्वासानामशिशिरतया भिन्नवर्णाधरोष्टम्।
हस्तन्यस्तं मुखमसकलव्यक्ति लम्बालकत्वा-
दिन्दोर्दैन्यं त्वदनुसरणक्लिष्टकान्तेर्बिभर्ति॥ उत्तरमेघ २४ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जिसके प्रति व्यक्ति का अनन्य स्नेह होता है उसके विषय में ही वह सबसे अधिक चिन्तिन, शंकित एवं दुखी रहता है। महाकवि कालिदास ने यद्यपि अपने प्रारम्भिक जीवन का कहीं भी एक क्रमबद्ध रूप में वर्णन नहीं किया है किन्तु अपनी रचनाओं में अपनी बाल्यकाल की स्मृतियाँ किसी न किसी रूप में अवश्य ही वर्णन की हैं। वैसे सम्पूर्ण मेघदूत गीति काव्य में महाकवि के वैवाहिक जीवन के पश्चात् की सारी कथा, व्यथा और परिचय अच्छी प्रकार से देखा जा सकता है। अपने जीवन की एक छोटी सी व्यथा पूर्ण घटना को महाकवि कालिदास ने अपनी जन्मभूमि और कर्मभूमि के स्थानों का कितनी सूक्ष्म दृष्टि से वर्णन किया है। यात्रा के वर्णन में मार्ग का कितना सही मेघ को दिशा निर्देश किया है। जो महाकवि की आपबीती घटनाओं से घटित सच्ची कथा है। जिसे महाकवि कालिदास ने अपनी सही आत्मकथा के रूप में वर्णन किया है। बाल्यकाल में देखे हुए भूभाग का मेघ को अपनी जन्मभूमि का मार्गदर्शन के रूप में वर्णन किया है और अपने प्रवासी जीवन के विरह जन्य दुख का मेघदूत के प्रारम्भ से उज्जयिनी वर्णन तक अपनी कर्मभूमि की स्मृति को बहुत ही कृतज्ञता पूर्वक शैली पर वर्णन किया है। अपनी व्यथा पूर्ण पत्नी के एकाकी विरही जीवन का, अपने घर का और विरह के दुख में दुखी अपनी सहचरी का कितना सही वर्णन किया है। ये महाकवि के जीवन की अनन्य स्नेहमयी भावनाएँ हैं। जिससे उसके पति-पत्नी के पूर्व सुखद जीवन का सही ज्ञान होता है।

कवि मेघको अपनी अनेक कलाओंमें दक्ष विदुषी पत्नी का परिचय दे रहा है :—

महाकवि कालिदास ने अपनी पत्नी की सही स्थिति और उसकी विद्वत्ता का सही परिचय अपने विरचित गीत के गाने योग्य पदों में मेघदूत में दिया है। यह तो सभी स्वीकार करते हैं कि महाविदुषी विद्योत्तमा कालिदास की ही पत्नी थी। अपनी काव्य कला को उसने भी मूर्तरूप अपने एकांकी विरह के जीवन में अवश्य दिया होगा ? कवि हृदय रखने वाला व्यक्ति दुःख में कैसे अपनी कविता को भूल-सकता है ? क्योंकि कविता दुःखी हृदय की ही पुकार होती है। जैसे महाकवि कालिदास ने अपने व्यथित, शपित और प्रवासी जीवन में अपने हृदय की समस्त कथा को मेघदूत में गाया है। एक लम्बे काल के अन्तराल में गुप्तकाशी जब भुलाई जा सकती है तो क्या महाविदुषी विद्योत्तमा की कविताएँ भी विस्मृति के गर्त में नहीं गिर सकती हैं ? दुःखी यक्षरूपी कवि अपनी पत्नी के दारुण दुःख का चित्र किस प्रकार खींचता है :—

हे सौम्य मेघ ! मैले वस्त्र वाली अपनी गोद में बीणा को रख कर मेरे नाम के पद वाले गीत को उच्च स्वर से गाने की इच्छा करती हुई, आँसुओं से भीगी हुई—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तारों को ठीक कर बार-बार अपने बनाये हुए स्वरों के उतार-चढ़ाव के क्रम को भी भूल जाती है। ऐसी वह तुम्हें दिखेगी।[१]

इससे कवि के संगीतशास्त्र का मर्मज्ञ होने का भी परिचय मिलता है और सा रे ग म प द नि इन सातों स्वरों के आलाप उतार-चढ़ाव का भी दोनों पति-पत्नी को सम्यग् ज्ञान था।

कवि दारुण विरह में होने पर भी आस्थावान् और कितना आशावादी है। अपनी पत्नी को आश्वासन देता है कि तुमने आठ मास तो दुःख में व्यतीत कर ही लिए अब शेष चार मास को भी देहली में रखे हुए फूलों को गिन रही तथा मन में मेरे सहवास को स्मरण करती हुई दिखाई देगी।[२] कवि मेघ को समक्ष देख कर ही अपनी हृदय की कथा अपनी कविता के माध्यम से सन्देश देने के लिए सुनाता है। इसके साथ ही साथ अपनी पत्नी के दुःखों को कल्पना करता हुआ उसकी स्मृति में भी कुछ अपने को हल्का अनुभव करता है। दुःख दूसरों को सुना कर भी कम तथा मन हल्का हो जाता है।

महाकवि कालिदास ने यदि मेघदूत में अपने शाप युक्त प्रवासी जीवन का वर्णन किया है और अपने भौगोलिक ज्ञान के द्वारा अपनी जन्मभूमि तथा कर्म-भूमि की विशेषताओं एवं प्राकृतिक सौन्दर्यमय वैभव का वर्णन किया है तो वहीं सर्वप्रथम अपने विरही जीवन की गाथा में अपने शरीर की स्थिति को भी व्यक्त किया है कि प्रिया के विरह के कारण वह इतना कृष हो गया था कि उसके हाथों में विवाह संस्कार की स्मृति में पहने हुए स्वर्ण के कड़े स्वतः ही गिर जाने से उसकी हाथ की कलाई खाली दिखाई दे रही हैं। अपनी शारीरिक और मानसिक स्थिति को कवि ने अपने सन्देश में सन्देशवाहक मेघ को सही-सही बताया है क्योंकि उसके दुःख को सुनकर उसकी प्रेयसी भी अपने दुःख को इतना दारुण नहीं समझेगी।

अपनी आत्मकथा में अपने हृदय की सही-सही बात, अपनी यात्रा के संस्मरण, अपनी कर्मस्थली के वन, नदियों, पर्वतों और प्रसिद्ध—प्रसिद्ध स्थानों का वर्णन करता हुआ, अपनी प्रेयसी की हृदय की व्यथा को अनुभव कर मेघ को अपनी कर्मभूमि से जन्मभूमि में जाने का मार्ग बताता है। गंगा का महत्त्व, सगर के पुत्रों का तारा जाना, उसके उद्गम स्थान के वैभव का वर्णन और मार्ग में पड़ने वाले ऐतिहासिक स्थानों का भी विशद् विवेचन किया है।

महाकवि कालिदास ने यदि अपनी कर्मभूमि और जन्मभूमि का विशद् वर्णन कर अपना परिचय दिया है तो अपनी सहचरी की मनस्थिति का भी सही वर्णन

---

१. उत्तरमेघ २६ श्लोक। २. उत्तरमेघ २७ श्लोक।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation Chandigarh

किया है। मानव का जिसके प्रति अत्यधिक अनुराग होता है और संसार में उसे वह सृष्टिकर्ता की अनुपम कृति मानता है। उसकी शारीरिक स्थिति, आकृति, सौन्दर्य, और विरह दारुण दुःख को झेलने को भी बहुत ही अच्छी प्रकार से दिखाया है। वास्तव में जिसकी गृहिणी गुणी, कुशल, कलाविद् और पूर्ण विदुषी होगी, उसका पारिवारिक जीवन कितना सुखी रहा होगा। किन्तु शाप और कुष्ट रोग के कारण सारा सुखी जीवन दुःखमय हो गया था, जिसके लिए वह इतना व्यग्र, चिन्तित और कष्ट में है। विवाह संस्कार की पवित्रता और उसी आधार पर आचरण की शुद्धि पर उसका कितना अटूट विश्वास है कि वह मध्य रात्रि में ही मेघ को घर में प्रवेश करने के लिए कहता है। पत्नी, मेघ और विरही कवि के अतिरिक्त कोई भी उनके सन्देश के विषय में कुछ भी नहीं जानते हैं। उस सन्देश में कुछ पति-पत्नी की गुप्त बातें भी हैं जिन्हें पूर्ण विश्वास प्राप्त करने के लिए केवल मेघ को ही बताया है। मेघ को इसलिए यक्ष रूपी कवि ने अपना छोटा भाई बनाया है। कई बार किसी अपरिचित व्यक्ति पर सहसा विश्वास नहीं हो पाता है। अतः प्रिय जन की ओर से विश्वास के लिए कोई विशेष चिह्न देना पड़ता है। मेघ इस प्रकार का चिह्न तो पवनपुत्र हनुमान की तरह नहीं दे सकता था किन्तु यक्षरूपी कवि कालिदास ने अपनी पत्नी की बात कहलवा दी—'मैंने स्वप्न में तुम्हें किसी रमणी से समागम करते देखा।' (दृष्टः स्वप्ने कितव! रमयन्कामपि त्वं मयेति।) इससे गोपनीय और क्या चिह्न हो सकता था। अपनी गोपनीय बात कवि कह ही देता है।

महाकवि कालिदास ने अपनी पत्नी के सौन्दर्य और उसकी स्वाभाविक शारीरिक संरचना का अच्छा वर्णन किया है। पत्नी के स्वरूप के वर्णन करने से पूर्व वह अपने घर का और गृह निर्माण का सही-सही परिचय देता है। घर में सुख, आदर्श और जीवनोपयोगी सभी वस्तुएं हैं किन्तु गृहस्वामी के बिना सभी शोभा हीन हो रही हैं।

सचमुच महाकवि कालिदास ने विवाह के पश्चात् संघर्ष झेलकर काली की उपासना और सरस्वती की साधना करके सच्ची विद्या प्राप्त की। अपनी उपार्जित विद्या से पत्नी को प्रसन्न किया और उसके प्रेरक शब्दों के आधार पर ही महाकवि में नव कविता का स्फुरण हुआ। हिमालय के निवासी महाकवि ने अपने बाल्यकाल में अपने क्षेत्र के वातावरण में पर्वतराज हिमालय, शिव-पार्वती की साधना स्थली, यक्षों की अलका शिव के निवास स्थान कैलास में जो देखा उसे प्रथम काव्य में अपनी नई कविता की उमंग में महाविदुषी विद्योत्तमा के समक्ष कुमारसम्भव में कविता रूपी कामिनी के रूप में संजोकर रख दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वही प्रथम काव्य महाकवि के लिए पारिवारिक सुखद जीवन में बाधक और अभिशाप का कारण बना। जिस अपनी विदुषी प्रेयसी को प्रसन्न करने के लिए कविता उपहार में दी। वही कविता एक लम्बे समय का वियोग का कारण बन गयी। जिसके ध्यान में कवि का मन रम गया था उसी से उसे बिछोह हो जाता है। इसी से मिलता-जुलता प्रसग दुर्वासा का शाप अपनी अन्तिम सर्वोत्कृष्ट रचना अभिज्ञान शाकुन्तल में स्वयं कालिदास ने अपने अनुभव को स्पष्ट किया है :—

'एकाग्रचित्त होकर जिसका ध्यान करती हुई तू आये हुए मुझ तपोनिधि को नहीं जानती, वह स्मरण दिलाने पर भी उसी तरह तेरा स्मरण न करेगा जैसे कोई उन्मत्त व्यक्ति पहले की हुई बात का स्मरण नहीं करता।'[1]

अपनी कविता में एकाग्र मन से एक होकर लगे हुए पति-पत्नी को पार्वती के द्वारा दारुण वियोग का दुःख अकस्मात् मिल गया, जिसकी महाकवि एवं महाकवित्री को स्वप्न में भी आशंका न थी किन्तु एक छोटी सी भूल कितना दुःख दे सकती है। पति-पत्नी को सम्मिलित रूप में कविता के द्वारा व्यथा भोगनी पड़ी। यद्यपि महाविदुषी विद्योत्तमा ने तो पार्वती-परमेश्वर का बुरा नहीं किया था पुनः उसे भी यह दारुण दुःख क्यों भोगना पड़ा ? क्योंकि विद्योत्तमा के कारण ही यह सब कृत्य हुआ था। अतः वियोग का दुःख दोनों को सम्मिलित होकर ही भोगना पड़ा।

महाकवि कालिदास अपने भौगोलिक ज्ञान से हिमालय के उत्तराखण्ड से अनेक तीर्थों, नगरों, वनों, नदियों और सरोवरों का स्नान, ध्यान कर उज्जयिनी नगरी में पहुँचा था। वहाँ उसका विद्वत्ता के कारण अधिक सम्मान हुआ और अन्त में वह रामगिरि पर्वत पर पहुँच कर कुछ दिन वहीं वास करने लगा। आषाढ़ मास के बादल ने उसके मन को उद्बोधित कर दिया। उस स्मृति की व्यथा ने किसी यक्ष को लेकर ही महाकवि कालिदास ने अपने जीवन की काव्य रचना के पश्चात् की घटनाओं को एक क्रमबद्ध रूप में मेघदूत गीतिकाव्य में अपनी सच्ची 'आत्मकथा' में वर्णन किया है। जीवन की वह सच्ची व्यथा ही महाकवि कालिदास की कथा बन गई। मेघदूत में वर्णित व्यथा ही महाकवि कालिदास की आपबीती सच्ची कथा है जिसे हम उसकी आत्मकथा के रूप में मेघदूत के ही आधार पर वर्णन कर रहे हैं। प्रबुद्ध पाठक इसमें वास्तविकता

---

१. विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा
तपोनिधिं वेत्सि न मामुपस्थितम्।
स्मरिष्यति त्वां न स बोधितोऽपि सन्
कथां प्रमत्तः प्रथमं कृतामिव ॥ शाकुन्तल नाटक ४ श्लोक १ श्लोक।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देख कर कवि के सच्चे हृदय के भावों को उसकी ही स्वरचित सही आत्मकथा समझें। यद्यपि इस पर अभी तक किसी ने इस प्रकार चिन्तन नहीं किया था। हमने कल्पना से नहीं अपितु तथ्यों को एकत्रित करके ही यह सत्य निरूपण किया है।

उज्जयिनी और कालिदास

महाकवि कालिदास शाप के दुखों को भोगने के पश्चात् और अपने द्वितीय गीतिकाव्य को समाप्त कर अपने आश्रयदाता विक्रम की नगरी उज्जयिनी से सम्मान अत्यन्त उत्सुकता एवं प्रसन्नता के साथ अपनी पत्नी को विरह काल में संजोई हुई कामनाओं के साथ मिलने के लिए अपनी जन्मभूमि हिमालय के दूर छोर केदार घाटी के लिए प्रस्थान करता है। जिस मार्ग से कालिदास शपित स्थिति में दुखी होकर गया था, उससे ही शाप विमुक्त होकर, यश, अर्थ प्राप्त कर और अपनी सच्ची आत्मकथा के स्रोत मेघदूत गीतिकाव्य को साथ लेकर बड़े ही प्रसन्न, आनन्द, उत्साह एवं उमंग से उत्तराखण्ड अपनी जन्मभूमि चल आता है। मेघदूत के द्वारा कवि स्वयं अपनी आत्मकथा को अपने पाठकों के समक्ष रखता है।

महाकवि कालिदास ने विक्रमादित्य के राज्य में काफी लम्बे समय तक निवास किया है। अपनी कविताओं और काव्यकृतियों से विक्रमादित्य के राज्य में ख्याति प्राप्त की। उस प्रवास के समय उसकी रचित कृतियों का गुणज्ञों ने संग्रह भी किया होगा। जो बाद में कालिदास को वहीं का सिद्ध करती रही हैं। मेघदूत गीतिकाव्य उज्जयिनी के भूभाग में भोगी गई दारुण विरह व्यथा ही कवि की सच्ची कथा है। इस गीतिकाव्य के कुछ ही श्लोकों के आधार पर ही कालिदास को उज्जयिनी का सिद्ध किया जाता है। आज भी लोग यात्रा करने, आजीविका और व्यापार के लिए दूर-दूर तक चले जाते हैं किन्तु उनका मूल स्थान नहीं बदलता है, उनकी नागरिकता भले ही बदल जाये एवं कई पीढ़ियों के बाद ही वे भुलाए भी जा सकते हैं। कुछ लोग ऐसे महान् लोगों के मूल स्थान को न जानने के कारण उनकी कर्मभूमि को ही जन्मभूमि समझ बैठते हैं।

महान् लोग, लेखक, सुधारक, समाज के पथ प्रदर्शक और प्रचारक मानवीय एवं राष्ट्रीय दृष्टि से एक वर्ग विशेष के प्रतिनिधि होते हैं किन्तु उनकी क्षेत्रीय पहचान भी अपना एक महत्त्व रखती है। यह सब क्षेत्रवाद के लिए नहीं अपितु पर्यावरण की दृष्टि से परिस्थिति विज्ञान में सन्तुलन को एक व्यवस्थित रूप में रखने के लिए तथा उनकी विशेष पहचान के लिए आवश्यक है। लेखक अपने समाज का प्रतिनिधि होता है और वह अपने समाज में होने वाली घटनाओं, परिस्थितियों, भाषा, प्राकृतिक वैभव एवं परम्पराओं का भी अपनी रचनाओं में अपना परिचय

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भी दे ही देता है। उसे समझना अध्येताओं पर निर्भर करता है। कालिदास विश्व-कवि के साथ ही साथ राष्ट्रकवि भी है किन्तु जन्म की दृष्टि से वह हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल का ही निवासी था क्योंकि अपनी जन्मभूमि के पर्यावरण का उसने अपनी रचनाओं में विस्तृत विवेचन किया है। यह सब इस आत्मकथा से पूर्णरूप से सिद्ध हो जाता है।

उज्जयिनी में साधन सुलभता की दृष्टि से कालिदास की काव्यकृतियाँ पूर्ण रूप से सर्वप्रिय होने के कारण या बहुत दिनों तक जन-मानस में प्रचलित होने से सुरक्षित रही हों जिसके आधार पर उत्तराखण्ड गढ़देश का वह प्रवासी, राज्याश्रय में रहने से वहीं का मान लिया गया है। महाकवि कालिदास के उज्जयिनी में अधिक दिन रहने एवं आने-जाने से भी विद्वानों ने उसे उसकी विद्वता से और उस युग की विद्वानों की भूमि से उसे वहीं का निवासी समझ लिया क्योंकि हिन्दू संस्कृति और संस्कृत के विकास में कालिदास के योगदान तथा उज्जयिनी के मेघदूत में वैभवपूर्ण वर्णन, प्रद्योत, उदयन एवं वासवदत्ता की कथाओं के समान उसकी हृदय हारिणी कविता के वर्णन से विद्वान् उसे उज्जयिनी का ही समझ बैठे हैं। वैसे महाकवि कालिदास ने अपने ग्रन्थों में सबसे अधिक वर्णन और अपने ग्रन्थों का वर्ण्य विषय हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल के भूभाग को ही बनाया है। उसके काव्य इसके उदाहरण हैं।

जो लोग कालिदास को गुप्तकाल का मानते हैं उनके लिए अपनी अन्तिम विश्व-विख्यात रचना शकुन्तला नाटक के प्रारम्भ में ही अपने को गुणज्ञ विक्रमादित्य (पराक्रम का सूर्य) का समकालीन और उसकी राज्य सभा में रहने के लिए इस प्रकार का प्रमाण दिया है :—

'आर्ये! रसों तथा भावों के प्रकृष्ट भेदों के प्रधान शिक्षक विक्रमादित्य की यह सभा विद्वानों से भरी हुई है। इसमें कालिदास द्वारा रचित कथावस्तु वाले अभिज्ञान शाकुन्तल नामक नवीन नाटक के साथ हमें उपस्थित होना है। अतः प्रत्येक पात्र के लिए प्रयत्न करो।'[१]

महाकवि कालिदास कविता में विक्रमादित्य के राज्य में अधिक ख्याति और विक्रम का विशेष कृपा पात्र होने से ईर्षालु विद्वान् उससे चिढ़ते थे एवं अपने को नाटकों का कुशल रचयिता मानते थे। उसके पश्चात् ही कालिदास की सर्वतोन्मुखी प्रतिभा से नाटकों को देख कर सदा के लिए मौन हो गये।

---

१. सूत्रधार—आर्ये! इयं हि रसभावविशेषदीक्षागुरोर्विक्रमादित्यस्य अभिरूप-भूयिष्ठा परिषद्। अस्यां च खलु कालिदासग्रथितवस्तुनाऽभिज्ञानशाकुन्तलनामधेयेन नवेन नाटकेनोपस्थातव्यमस्माभिः, तत्प्रतिपात्रमाधीयतां यत्नः।' शाकुन्तल प्रथम अंक १ श्लोक के पश्चात् की गद्य।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वास्तव में मेघदूत कालिदास की आत्मकथा बताने का एक स्रोत है और उसके ही अनुसार कवि अपनी कर्मभूमि से अपनी पत्नी के पास जन्मभूमि में जाने के लिए भी अत्यधिक उत्सुक दिखाई देता है। यदि हिमालय के उत्तराखण्ड के छोर अलकापुरी के निकट का वह रहने वाला न होता तो शाप की अवधि पूर्ण होने पर अपनी जन्मभूमि में आने के लिए इतना अधिक आतुर क्यों दिखाई देता एवं मेघ की खुशामद (आग्रह) शीघ्र सन्देश देने के लिए क्यों करता ? यदि वह उज्जयिनी का ही निवासी होता तो वह उज्जयिनी तक का मार्ग बताकर वहीं प्रेयसी के पास सन्देश पहुँचा देता। प्रेयसी और जन्मभूमि कालिदास की विशेष आकर्षण का विषय थी तथा उज्जयिनी आश्रयदाता एवं महाकाल के कारण दर्शनीय नगरी थी। टेढ़ा मार्ग होने पर भी आश्रयदाता और आराध्य शिव के दर्शन कराने एवं स्वयं स्मरण करना भी आवश्यक था। मंगलमयी यात्रा के लिए शुभ वस्तुओं का दर्शन भी शकुनशास्त्र के अनुसार लाभप्रद होता है।

उज्जयिनी से शाप, ताप, और पाप से मुक्त होने एवं यश प्राप्ति के पश्चात् राजा विक्रमादित्य के द्वारा सैनिकों के संरक्षण के साथ ससम्मान महाकवि कालिदास की मानसिक स्थिति देखकर उस गुणग्राही और उदार राजा विक्रमादित्य ने महाकवि को उसकी जन्मभूमि में भेज दिया था। कालिदास मेघदूत में स्वयं अपने सन्देश में अपने आने का संकेत कर रहा है—'शेषान्मासान् गमय चतुरो लोचने मीलयित्वा' दो विरही जनों की मन कामनायें मिलने पर ही तो पूरी होगी ? अतः कालिदास अपनी जन्मभूमि में देर-सवेर उज्जयिनी से अवश्य ही गया है। दूसरी ओर शाप के दारुण दुख में जगज्जननी ने अपने ज्ञानी पुत्र की व्यथा पर दया करके उसके अपराध अवश्य क्षमा कर दिये होंगे ? क्योंकि आदि गुरु शंकराचार्य ने भी स्वीकार किया है—'पुत्र कुपुत्र हो सकता है किन्तु माता कभी भी कुमाता नहीं हो सकती है।'[१] जो सर्वशक्ति ज्ञानियों को भी बलात् आकर्षित कर सकती है।[२] वह परिस्थिति और उज्जयिनी के राजा विक्रमादित्य के विचारों का कालिदास की शाप विमुक्ति हेतु क्या नहीं बदल सकती थी ? राजा विक्रमादित्य ने उसी की कृपा से सहर्ष, ससम्मान एवं सैनिकों के साथ उसे उसकी जन्मभूमि में उसकी पत्नी के पास पहुँचा दिया था।

अपनी जन्मभूमि में वापस आने पर मार्ग में रुकते हुए सर्वत्र कालिदास का अत्यधिक सम्मान हुआ है। गुप्तकाशी में तो उसे सबसे अधिक सम्मान मिला था।

---

१. कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति। देव्यापराधस्तोत्र

२. ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा।
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति॥ दुर्गासप्तसती १।५६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपनी जन्मभूमि में आने के पश्चात् अपनी अतृप्त कामनाओं की पूर्ति कर महाकवि कालिदास ने रघुवंश प्रौढ़ महाकाव्य की रचना हिमालय के ऊतुंग शिखर केदारखण्ड में की क्योंकि यहां उसे शान्त, एकान्त और समस्त प्रकार से सुखद जीवन प्राप्त हो चुका था। महाकवि की विदुषी पत्नी काव्य कला के साथ ईश्वर की उपासना में भी लगी रहती थी, जैसा कि कालिदास ने मेघदूत अपनी आत्मकथा में मेघ को प्रसंगवश संकेत किया है 'सा बलिव्याकुला वा' या तो देवताओं की पूजा में लगी होगी।

महाकवि कालिदास और विद्योत्तमा दोनों उत्तराखण्ड धार्मिक क्षेत्र के रहने के कारण परमधार्मिक थे। अतः अपनी जन्मभूमि में आने के पश्चात् वे अपने ही क्षेत्र में शिव और शक्ति के दर्शनों से लाभान्वित होते रहे हैं। क्योंकि केदारनाथ, गौरीकुण्ड, गौरीशिखर, कैलास, हिमालय औषधिप्रस्थनगर और अलका उनके सन्निकट ही थे। शकुन्तला नाटक के अन्तिम श्लोक में कालिदास ने अपनी आत्मकथा की पूर्तिकर कहा—ममापि च क्षपयतु नीललोहितः पुनर्भवं परिगतशक्तिरात्मभूः क्योंकि अब महाकवि कालिदास की समस्त सांसारिक कामनाएँ पूर्ण हो चुकी थीं और अब वह अन्तिम लक्ष्य मुक्ति की कामना करता है। जीवन के अन्तिम भाग में महाकवि कालिदास ने चाहे पद्मपुराण से लेकर या महाभारत से लेकर या हिमालय की तलहटी कोटद्वारा के निकट कण्वघाटी में महात्मा कण्व के आश्रम से प्रभावित होकर ही अभिज्ञान शाकुन्तल नाटक को लिखा है। उत्तराखण्ड में महर्षियों द्वारा चलाये गये विद्या के केन्द्रों का आश्रम पद्धति का कालिदास ने गुप्तकाशी और कण्वाश्रम को देखकर वर्णन किया है। इसके साथ ही ये आश्रम असहायकों की भी रक्षा करते थे। शकुन्तला की सुरक्षा एवं सम्बर्धन भी इसी आश्रम में हुआ है। ऋषि-मुनि धार्मिक दृष्टि से भी तपस्या करते हुए अपने उपार्जित ज्ञान को विद्या के केन्द्रों में समाज की भावी पीढ़ी को बड़ी ही तत्परता से देते थे। भरत जैसे पराक्रमी बालक भी इन्हीं ही आश्रमों में पले हैं और यहीं से उन्हें सच्चा ज्ञान मिला है। शकुन्तला को महाकवि कालिदास ने सुखद जीवन व्यतीत करने के लिए महर्षि कण्व के द्वारा शकुन्तला नाटक में चार श्लोकों में कितना सुन्दर और आदर्शमय उपदेश दिए हैं :—

;गुरुजनों की सेवा करो, सपत्नी जनों सौतों से प्रिय सखी सा व्यवहार करो, तिरस्कृत होने पर भी क्रोध में आकर अपने पति के प्रति प्रतिकूल व्यवहार मत करो, आश्रित जनों के प्रति अधिक से अधिक उदार रहो, भोगों को पाकर अभिमान मत करो। इस प्रकार का व्यवहार करने वाली युवतियाँ ही गृहिणी के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पद को प्राप्त करती हैं और इसके विपरीत चलने वाली स्त्रियाँ कुल के लिए मनो-व्यथा के समान होती हैं।'[१]

संस्कृति रक्षक कालिदास

भारतीय संस्कृति के रक्षक महाकवि कालिदास ने पारिवारिक जीवन को सुखी रखने के लिए कितनी सुन्दर पद्धति पर व्यवस्था दी है। इसे यदि भारतीय आदर्श महिलाएँ अपने जीवन के आचरण में लायें तो परिवार के समस्त प्रकार के तनाव, कलह एवं द्वेष स्वतः ही दूर हो जायेंगे और भारतीय परिवार आज दूसरों का अनुकरण करने वाला न बन पाता।

प्राचीन भारतीय शिक्षा के केन्द्रों में कन्याओं को भी इस प्रकार की शिक्षा दी जाती थी और माता-पिता पतिगृह भेजती बार यही उपदेश देते थे :—

'वत्से! तुम कुलीन स्वामी के प्रशंसनीय गृहिणी के पद पर अधिष्ठित होकर उसके वैभव के कारण महान् कार्यों से निरन्तर व्यग्र रहती हुई शीघ्र ही, सूर्य की पूर्व दिशा की तरह पवित्र पुत्र को उत्पन्न करके मेरे वियोग के शोक को नहीं गिनोगी।'[२]

प्रायः पति गृह में आने और मातृस्नेह के जागृत होने पर नारी पति गृह में सुस्थिर हो एकाग्र हो जाती है और पितृगृह को भूलने लगती है। पिता अपनी पुत्री को पतिगृह में भेजकर ही प्रसन्न होता था और उसे उसके घर में कार्यों में व्यग्र देखना चाहता था। पिता के कारण पुत्री अधिक दुखी न रहे। अतः उसे पतिगृह ही भेजना आवश्यक माना गया था।

आठ प्रकार के विवाहों में सामाजिक दृष्टि से गान्धर्व विवाह को भी मान्यता दी गई है किन्तु महाकवि कालिदास ने इसे अच्छा नहीं माना है क्योंकि शीघ्रता से कामजन्य भावों से स्थापित किया हुआ विवाह सदा शंका युक्त बना रहता है। शकुन्तला को दुष्यन्त कैसे भूल जाता है :—

---

१. शुश्रूषस्व गुरुन् कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने
भर्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भोगेष्वनुत्सेकिनी
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः॥ शकुन्तला ४ अंक २० श्लोक

२. अभिजनवतो भर्तुः श्लाघ्ये स्थिता गृहिणीपदे
विभवगुरुभिः कृत्यैरस्य प्रतिक्षणमाकुला।
तनयमचिरात्प्राचीवार्कं प्रसूय च पावनं
मम विरहजां न त्वं वत्से शुचं गणयिष्यति॥ शकुन्तला ४ अंक २१ श्लोक।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'अतः एकान्त में किया गया गान्धर्व विवाह बड़ी अच्छी प्रकार परीक्षा लेकर करना चाहिए। अज्ञात हृदय वाले व्यक्तियों में प्रेमसम्बन्ध की स्थापना इसी प्रकार शत्रुता के रूप में परिणित हो जाती है।[१]

महाकवि कालिदास ने अपने ग्रन्थों में अपने युग का भारतीय संस्कृति और समाज का सही स्वरूप स्पष्ट किया है। समाज यदि अपनी स्वस्थ परम्पराओं का पालन करता है तो सुखी रहता है अन्यथा उसे विविध प्रकार के कष्ट उठाने पड़ते हैं। यज्ञों को भारतीय समाज में पर्यावरण की शुद्धि, वर्षा, अन्न, शीतलता और वन सम्पदा की सम्वृद्धि के लिए आवश्यक माना गया है। यज्ञों से प्रकृति मानव के साथ अपना सामंजस्य सन्तुलित रखती थी जिससे प्राणिमात्र को किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं होता था। शकुन्तला नाटक में महाकवि कालिदास ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये हैं:—

'इन्द्र तुम्हारी प्रजा के लिए पर्याप्त वर्षा करे और तुम भी विस्तृत यज्ञों से इन्द्र को अत्यधिक सन्तुष्ट करो। इस प्रकार सैकड़ों युगों तक लेन-देन (विनिमय) के रूप में दोनों लोकों के उपकार के लिए प्रशंसनीय पारस्परिक कार्यों से तुम दोनों उत्कर्ष प्राप्त करो'[२]

महाकवि कालिदास ने अपनी जन्मभूमि से सम्बन्धित इस अन्तिम विश्व विख्यात रचना में हिमालय के दूसरे छोर उत्तराखण्ड के तराई भावर के कण्वाश्रम का शकुन्तला नाटक में विशद वर्णन किया है। इस अन्तिम नाटक में कवि ने भारतीय संस्कृति के सही स्वरूप का भी विवेचन किया है। इससे ऐसा स्पष्ट होता है कि महाकवि कालिदास और उसकी विदुषी पत्नी के जीवन का अन्तिम भाग उत्तराखण्ड में ही सुख से व्यतीत हुआ है। ईसा की प्रथम शताब्दी में उत्तराखण्ड में सर्वत्र वैदिक संस्कृति का प्रभाव था और सर्वत्र संस्कृत भाषा का प्रसार एवं प्रचार था। सामान्य जनों में कालिदास के नाटकों में प्रयुक्त प्राकृत भी प्रचलित थी। आगे चल कर वैदिक संस्कृत, संस्कृत तथा भारतवर्ष के विभिन्न भूभागों से आने वाले धार्मिक एकता रखने वाले व्यक्तियों के आने से उनकी

---

१. अतः परीक्ष्य कर्तव्यं विशेषात् संगतं रहः।
अज्ञातहृदयेष्वेवं वैरीभवति सौहृदम्॥ शकुन्तला ५ अंक २७ श्लोक।

२. तव भवतु विडौजाः प्राज्यवृष्टिः प्रजासु
त्वमपि विततयज्ञो वज्रिणं प्रीणयालम्।
युगशतपरिवृत्तैरेवमन्योन्यकृत्यै
र्नयतमुभयलोकानुग्रहश्लाघनीयैः। शकुन्तला ७ अंक ३४ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भाषाओं के अनेक शब्द गढ़वाली भाषा में मिलते गये जो आजतक भी प्रयुक्त होते रहते हैं।[१]

कालिदास के जीवन का अन्तिम भाग

महाकवि कालिदास अपने जीवन के अन्तिम भाग में संसार का सभी प्रकार का सुख भोग कर हिमालय के उत्तराखण्ड की ही केदारभूमि में पूर्ण रूप से निश्चिन्त होकर निवास करने लगा था। उस महाकवि की रचनाएँ उत्तराखण्ड में संस्कृत के विद्वानों के पास बहुत दिनों तक हस्तलिखित रूप में सुरक्षित भी रहीं और सामान्य जनता में वे बहुचर्चित रहीं।

उत्तराखण्ड के लोगों में अनपढ़ कालिदास की, साधना के पश्चात् महाकवि कालिदास की और विवाह के पश्चात् महाविदुषी विद्योत्तमा की अनेक प्रकार की कहानियाँ गढ़वाल के लोगों में प्रचलित रही हैं। आज भी लोग उन्हें स्मरण करते हैं।

संस्कृत साहित्य को अध्ययन करने वाले लोगों में उस महाकवि की रचनाएँ विशेष चर्चा का विषय रहती थीं। यहाँ तक कि महाकवि कालिदास की अन्तिम प्रौढ़ रचना रघुवंश से ही लोग अपने बच्चों को भारतीय संस्कृति की रक्षा के लिए संस्कृत की शिक्षा प्रारम्भ करते थे। बहुत लम्बे अन्तराल के पश्चात् प्रकृति के प्रकोप, लोगों में आजीविका के लिए शासन की दूसरी भाषाओं को पढ़ने की ओर रुचि बढ़ने लगी और संस्कृत का प्रचलन निरन्तर कम होता गया। संस्कृत के विद्वान् भी अपनी आजीविका के लिए राजदरबारों, धनवानों द्वारा स्थापित विद्यालयों और बड़े-बड़े नगरों की ओर आकर्षित होने लगे। जिससे पुरानी आश्रम प्रणाली पर चलने वाले आश्रमों पर बुरा प्रभाव पड़ा।

रोजी, रोटी की चिन्ता ने और परिवर्तित परिस्थितियों ने मानव के मन को परिभ्रमित कर दिया। ऐसे समय में ही उत्तराखण्ड के विद्वानों के पास हस्तलिखित पाण्डुलिपियाँ कुछ तो पारखी गुणग्राहियों द्वारा हस्तान्तरित हो गईं, कुछ अपने शिष्य के विद्वानों के बस्तों में रखी-रखी खराब होती गईं और कुछ तो अनभिज्ञता के कारण कुड़ा करकट में फेंकी गईं एवं कुछ उन विद्वानों के मरने के पश्चात् उनके उत्तराधिकारियों ने उन्हें फेंक दिया या उन्हें जला दिया। ऐसा समझा जाता है कि महाकवि कालिदास जैसे जगत् प्रसिद्ध विद्वानों की जो रचनाएँ हस्तलिखित रूप में बचकर राज दरबारों के पुस्तकालयों में चली गई थीं वह सुरक्षित रहकर पाण्डुलिपि संग्रह करने वाले पारखी विद्वानों के द्वारा जोड़-घटाकर अपनी विद्वत्ता भी उनमें दिखाई गई है, जिससे कालिदास के ग्रन्थों में टीकाकारों

---

१. विशेष मेरी गढ़वाली भाषा और उसका साहित्य। विहार राष्ट्रभाषापरिषद् द्वारा प्रकाशित पुस्तक में देखें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ने प्रक्षेप शब्द का प्रयोग किया है। बहुत बाद में छपाई का आविष्कार होने पर ही उन संग्रहित और सुरक्षित रचनाओं का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ है।

इस प्रकार उत्तराखण्ड में महाकवि कालिदास की कृत्तियाँ भी लोगों से दूर होती गईं और गुप्तकाशी का राजा शारदानन्द, विद्योत्तमा तथा महाकवि कालिदास भी वहाँ से भुलाये गये। स्वार्थी लोगों ने समय, अपने प्रभाव, सत्ता और अपने पदों का लाभ उठाकर मनवांछित पद्धति पर प्राचीन भारतीय वैभव पूर्ण इतिहास को गढ़ना प्रारम्भ किया था। जिससे हमारे साहित्य निर्माताओं का जीवन परिचय किंवदन्तियों, भ्रमात्मक धारणाओं और पाश्चात्य लेखकों की विद्वत्ता पर ही आधारित है।

वास्तव में अपने जीवन के अन्तिम भाग में महाकवि कालिदास सब ओर से अपने मन को एकाग्र कर अपने पारिवारिक जीवन में सुखी रहकर केदारखण्ड में ही तप में रम कर वहीं अपनी पूरी आयु भोग कर भगवान् नील लोहित की कृपा से पुनर्जन्म से विमुक्त हो पंचतत्त्वों में मिल गया था। यद्यपि कुछ लेखकों ने कालिदास के अन्तिम जीवन के विषय में अपने मन से तरह-तरह की बातें लिखी हैं किन्तु अपनी अन्तिम रचना शकुन्तला नाटक के अन्त में महाकवि कालिदास ने यह स्वयं स्पष्ट कर दिया है :—ममापि च क्षपयतु नीललोहितः पुनर्भवं परिगतशक्तिरात्मभूः।

कालिदास और उसकी सन्तान

महाकवि कालिदास ने अपनी अनेक रचनाओं में स्पष्ट किया है कि उसकी कोई सन्तान नहीं थी। मेघदूत में मन्दारवृक्ष को यक्षरूपी कवि ने अपनी पत्नी के हाथों द्वारा पुत्रवत् परिपालित माना है किन्तु तब वह अवस्था नव यौवन की थी और अपनी पत्नी का परिचय देती बार उसे तन्वी, श्यामा नाम से सम्बोधित भी किया है। जिससे वह अवस्था १६ वर्ष की हो सकती है। किन्तु शाप की विमुक्ति से पश्चात् और शान्त, एकान्त में निश्चिन्त होकर निवास करने पर रघुवंश महाकाव्य की रचना में राजा दिलीप और सुदक्षिणा को पुत्र प्राप्ति के लिए महाकवि कालिदास ने उसके कुलगुरु वशिष्ठ के आश्रम में साधक बनकर साधना करते हुए तथा उसके साथ ही एक सच्चे आज्ञाकारी सेवक की तरह नन्दिनी की सेवा करते हुए दिखाया है। राजा दिलीप की सच्ची परीक्षा भी महाकवि कालिदास ने हिमालय में ही दिखाई है :—'गंगाप्रपातान्त विरुढ शष्पं गौरीगुरोर्गह्वरमाविवेश:' भारतीय संस्कृति के रक्षक महाकवि ने संस्कारों की पवित्रता पर जहाँ ध्यान रखा है वहीं भारतीय नारी के पावन जीवन को भी बड़ी ही श्रद्धा की दृष्टि से देखा है। नारी में वास्तव में व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के सही निर्माण की अद्भुत शक्ति है। भारतीय नारियों ने ही अपने पावन चरित्र से प्रतिभावान्, सुयोग्य, उपकारी, सुधारक और सच्चे पथ-प्रदर्शन पुत्र देकर भारतीय समाज की बहुत बड़ी सेवा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की है। उन्हीं के बल पर ही राष्ट्र ने संस्कृति, सभ्यता और कला की रक्षा कर हमारे सामने एक गौरवपूर्ण इतिहास रखा है। किसी जाति और राष्ट्र का सच्चा इतिहास नष्ट करके ही वहां की जनता को पराधीन किया जा सकता है। किसी देश को यदि परतन्त्र करना हो तो उसकी भाषा, भेष-भूषा और इतिहास को बदल दो, जिससे वह कुछ दिन में दिशा विहीन, गतिहीन तथा चेतना शून्य हो जाता है और अपने वास्तविक स्वरूप को भूल जाता है। भारतीय सभ्यता, संस्कृति और स्वस्थ परम्पराओं के लिए महाकवि कालिदास ने अपने सद्साहित्य में विस्तृत रूप में वर्णन किया है क्योंकि वह संस्कृति का पोषक और संस्कृत का रक्षक था।

महाकवि कालिदास की कोई सन्तान नहीं थी और उस महाकवि को कुपुत्र सन्तान का दुख नहीं देखना पड़ा। सुपुत्र की प्राप्ति में ठीक ही कहा गया है कि 'एकमेव तमो हन्ति न च तारा गणैरपि' पुत्र हो तो ऐसा हो जो एकमेव चन्द्रमा के समान सभी तारों का प्रकाण क्षीण करने वाला हो।

अपने जीवन के अन्तिम भाग में महाकवि कालिदास ने सांसारिक समस्त सुखों को भोग कर और पूर्ण तृप्त होकर मोक्ष की कामना का अभिज्ञान शाकुन्तल नाटक के अन्त में अपने हृदय के सच्चे भाव इस प्रकार व्यक्त किये हैं :—

'राजा प्रजा के हित के लिए प्रयत्न करे। वेदों के द्वारा प्रकट की गई महिमा वाली वाग्देवी का कोई परित्याग न करे। सर्वशक्तिमान् स्वयंभू शंकर मेरे पुनर्जन्म की निवृत्ति कर दे।'[१]

इस शकुन्तला नाटक के अन्तिम भरत वाक्य श्लोक से स्पष्ट विदित होता है कि महाकवि कालिदास धर्म, अर्थ और काम से पूर्ण तृप्त होकर अपने सन्निकट के आराध्य शिव से चौथे पुरुषार्थ मोक्ष की कामना करता है। अपने कल्याण के साथ जग उपकारक महाकवि ने महान् उदार बनकर राजाओं से प्रजा के हित की भी कामना की है और जनता से भारतीय संस्कृति की सुरक्षा की इच्छा भी की है। वेदों और उनसे प्रकट हुई सरस्वती को भूल कर तो हम अपने सही स्वरूप एवं प्रेरणा को ही भूल जायेंगे। अतः संस्कृति रक्षक कवि ने इसकी भी रक्षा की कामना की हैं। कालिदास ने भारतीय संस्कृति की गौरवगाथा को गाकर देशवासियों को

१—प्रवर्ततां प्रकृतिहिताय पार्थिवः
सरस्वती श्रुतिमहती न हीयताम्।
ममापि च क्षपयतु नीललोहितः
पुनर्भवं परिगतशक्तिरात्मभूः॥
—शकुन्तला ७ अंक ३५ अन्तिम श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सहिष्णु बनाकर जोड़ा है और वास्तविकता अपने पाठकों के समक्ष रखी है। प्रबुद्ध-जनों के लिए संकेत ही सच्चा मार्ग होता है।

कीथ और कालिदास

महाकवि कालिदास ने अपनी साधना और अध्ययन करने के पश्चात् अपने कार्यों के कारण उत्तराखण्ड की जनता के हृदयों में आदरपूर्ण स्थान बना लिया था। उसकी और उसकी विदुषी पत्नी विद्योत्तमा की ख्याति दूर-दूर तक फैल चुकी की। उनकी कविताओं को लोग बड़े ही ध्यानपूर्वक सुनते थे। उस युग के विद्वानों ने इनकी कविताओं को संग्रहित भी किया ही होगा? कालिदास, विद्योत्तमा, गुप्तकाशी और राजा शारदानन्द का नाम लोगों की वाणी में ही नहीं अपितु भोज-पत्रों में भी गुणग्राही कवियों के द्वारा अवश्य लिखा गया होगा। गुप्तकाशी का नाम बहुत बाद में उत्तराखण्ड के दुर्गम पथों के कारण भूलता गया है। उत्तराखण्ड के विद्वान् आजीविका आदि के लिए इस भू-भाग से दूर भी जाते रहें हैं और अपने साथ-साथ अपनी हस्तलिखित पुस्तकें एव परम्परागत रूप में प्राप्त ज्ञान को भी ले ही गये होंगे। उनके द्वारा गुप्तकाशी का नाम भी फैला ही होगा और कुछ लिखित रूप में इस नाम को कुछ उस युग के संस्कृत ने विद्वानों ने गुप्तकाशी के गुप्त शब्द को छोड़ दिया और काशी का नाम उस युग के षोडस जनपदों में प्रसिद्ध होने तथा जल यातायात की सुविधा से कलकत्ता से कानपुर, आगरा, दिल्ली बड़े-बड़े नदी के तटों के नगरों से व्यापारिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक सम्बन्ध होने के कारण ख्याति तो थी ही। उस युग में भारत के प्रायः सभी बढ़े-बड़े नगर व्यापार और धार्मिक दृष्टि से हिमालय से प्रवाहित होने वाली नदियों का एक रूप गंगा के तटों और यमुना आदि से तटों पर ही बसे हैं। अतः काशी मुख्य रूप से प्रसिद्ध थी और इन नगरों के मध्य में पड़ती थी। यह जल यातायात मार्ग अंग्रेजों के आने तक बड़ी ही समृद्ध स्थिति में था। अंग्रेजों के अपने राज्य की स्थापना के लिए रेल परिवहन और मोटर यातायात ने जल यातायात के मार्ग को शनैः-शनैः समाप्त कर दिया।

ऐसी स्थिति में महाकवि कालिदास की जन्मभूमि और उसके श्वसुर राजा शारदानन्द की नगरी गुप्तकाशी का नाम दो भागों में विभक्त हो गया। भारतीय विद्वानों ने काशी को महत्त्व देकर राजा शारदानन्द की काशी का राजा और विद्योत्तमा को उसकी कन्या मानकर इतिहास गढ़ना प्रारम्भ कर दिया। अतः कुछ लोगों की यह धारणा ही प्रचलित हो गई। आज भी कुछ लोगों ने यही धारणा अपने मस्तिष्क में धारण की हुई है जो कि तथ्यों से सर्वथा भिन्न है और विपरीत है।

अंग्रेजी राज्य की स्थापना होने पर भारत में अंग्रेजों ने मजदूरी और कार्यालयों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में केवल भारतीयों को काम करने के लिए उपयुक्त समझा। अन्य बड़े-बड़े पदों पर केवल अंग्रेज ही अधिकारी होते थे। भारतीय जनता को मूर्ख बनाने के लिए जागीरदारों, जमींदारों, राजा-महाराजाओं और कुछ पढ़े-लिखे लोगों को सर, राय-बहादुर, राय साहब, खान साहब, महामहोपाध्याय आदि अलंकरणों से अपने स्वार्थ के लिए प्रभावित किया हुआ था।

अंग्रेज अधिकारियों ने भारत में रहकर अपने स्थानीय क्षेत्रों से उपयोगी सामग्री एकत्र कर अपने देश को भेजना प्रारम्भ कर दिया था। उस युग के भारत के इतिहास लेखक सभी अंग्रेज थे। जिनका वपन और लेखन किया हुआ आज भी हम भारतीयों को भ्रम में डाला हुआ है। लार्ड मेकाले भी इसी के प्रमाण हैं। उसने ही भारतीय भाषाओं के स्थान पर अंग्रेजी को मुख्य स्थान देकर आज भी दासता की भाषा की नींव इस प्रकार दृढ़ की हैं कि स्वतन्त्रता के पश्चात् अब भी अधिक अंग्रेजी छोटे-छोटे बच्चों की शिक्षा का माध्यम बन गई है : पाश्चात्य लेखकों ने भी उसी पक्षपात को अपने ग्रन्थों में नहीं छोड़ा है।

महाकवि कालिदास के मेघदूत के कुछ श्लोकों के आधार पर ही वह उज्जयिनी का माना गया है। अपनी अमर रचनाओं से तो वह विश्व भर में विख्यात हो गया किन्तु जीवन परिचय के विषय में उस पर लिखने का किसी ने साहस ही नहीं किया। जब कि कुमारसम्भव, मेघदूत और शकुन्तला नाटक उसके विषय में स्पष्ट बता रहे हैं। मेघदूत तो महाकवि कालिदास की आत्मकथा के रूप में उसके पारिवारिक जीवन का सही इतिहास बता रहा है।

महाकवि कालिदास के अन्तिम प्रौढ़, पाण्डित्यपूर्ण, रघुवंश काव्य को भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का प्रतीक, रघुवंशीय राजाओं के वैभवपूर्ण इतिहास और आदर्शमय राजाओं के चरित्र का वर्णन करने वाली रचना माना गया है जिसने अधिक लोगों को अपनी ओर आकर्षित किया है। भारतीय विद्वानों ने गुप्तकाशी से काशी को ग्रहण कर लाभ उठाया। तो दूसरी ओर पाश्चात्य संस्कृत साहित्य के इतिहास लेखक डा० ए० बी० कीथ, मैकडाउनल आदि विद्वानों ने महाकवि कालिदास के साथ गुप्तकाशी का 'गुप्त' शब्द और रघुवंश में वर्णित भारतीय संस्कृति के आधार पर ब्राह्मण धर्म को देखकर मनवांछित ढंग पर जो उन्हें अच्छा लगा, उसे अपने संस्कृत साहित्य के इतिहास में उल्लेख कर दिया। वही आज तक भ्रम फैलाने का आधार बना हुआ है।

वास्तव में प्राचीन भारतीय इतिहास में गुप्तकाल को उसकी सर्वतोन्मुखी विकसित स्थिति को देखकर स्वर्णकाल कहा जाता है। विक्रमादित्य उपाधिधारी सम्राट् चन्द्रगुप्त द्वितीय इसी काल में हुआ है। वह पाटलीपुत्र का कुशल शासक धर्मसहिष्णु, भारतीय संस्कृति का प्रबल पक्षधर और विद्वानों का आश्रय दाता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

था।[१] इसी युग में बौद्धधर्म का भी अधिक विकास हुआ है। समुद्रगुप्त की दिग्विजयों को डा० कीथ ने रघुवंश में ही देखा है। समुद्रगुप्त के शासनकाल में प्रयाग प्रशस्ति का लेखक कवि हरिषेण ने कहीं भी डा० कीथ के अनुसार महाकवि कालिदास का उल्लेख ही नहीं किया है। हो सकता है वह कोई दूसरा कालिदास रहा हो किन्तु रघुवंश का रचयिता तो नहीं था। राजा विक्रमादित्य के युग में भी भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति अपने परमोत्कर्ष पर पहुँची हुई थी। यदि राजा विक्रमादित्य के शासनकाल में ब्राह्मण धर्म, भारतीय संस्कृति परम विकास पर न होती तो ये ख्याति प्राप्त धन्वतरि, क्षपणक, अमरसिंह, शंकु, वेतालभट्ट, घटखर्पर, कालिदास, वराहमिहिर, वररुचि ऐसे नवरत्न संस्कृत साहित्य के भण्डार की वृद्धि करने वाले विक्रमादित्य की सभा में ये नवरत्न कैसे होते?[२]

कुमारसम्भव में महाकवि कालिदास ने प्राचीन भारतीय सामाजिक संस्थाओं के आधार पर ही समस्त वर्णन किया है। विवाह संस्कार में अग्नि को सबसे बड़ा साक्षी मानकर विवाह संस्कार की स्थिरता पर विशेष ध्यान दिया है—

'पार्वती ने पुरोहित के कहने पर उस खील के उठे हुए सुगन्धित धुएँ को अपने हाथों की अंजलि से सूंघा।'[३]

उसके पश्चात् पुरोहित ने पार्वती से कहा—हे वत्से! यह अग्नि तुम्हारे विवाह की साक्षी है। आज से तुम सभी प्रकार की शंका को छोड़कर सदा शिव के साथ धर्म से काम करना।[४]

विवाह संस्कार की पवित्रता पर कालिदास ने अपने विचारों को इस प्रकार अपनी अनेक रचनाओं में दिखाया ही है।

रघुवंश महाकवि कालिदास की अन्तिम सर्वोत्कृष्ट रचना है। इसमें उसने इक्ष्वाकुवंश के विविध राजाओं का अपने अनुभवों के आधार पर, प्राचीन भारतीय साहित्य के अध्ययन और अपनी सामाजिक परम्परा के अनुरूप भारतीय संस्कृति एवं साहित्य का विस्तृत विवेचन किया है। कवि अपने समाज का सच्चा प्रतिनिधि होता है पुनः वह अपने समाज की सही स्थिति एवं इतिहास का क्यों

---

१. गुप्तकाल की विशेष जानकारी के लिए मेरी प्राचीन राजवंश और बौद्धधर्म पुस्तक पृष्ठ ३३० से ३६५ पर देखें।

२. धन्वन्तरिक्षपणकामरसिंहशंकुवेतालभट्टकर्परकालिदासाः।
ख्यातो वराहमिहिरो नृपतेः सभायां रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य॥

३. सा लाजधूमांजलिमिष्ट गन्धं गुरूपदेशाद्वदनं निनाय। कुमारसम्भव ९/७९

४. वधूं द्विजः प्राह तवैष वत्से वह्निर्विवाहं प्रति कर्मसाक्षी
शिवेति भर्त्रा सह धर्मचर्या कार्या त्वया मुक्तविचारयेति॥कुमारसम्भव ७/८१

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नहीं वर्णन करेगा। वास्तव में साहित्य ही इतिहास को जानने का सच्चा स्रोत होता है।

महाकवि कालिदास ने अपने युग के प्रचलित ब्राह्मण धर्म का कुमारसम्भव, रघुवंश और शकुन्तला नाटक में सही-सही वर्णन किया है, जिसे डा० ए० बी० कीथ ने अपने संस्कृत साहित्य के इतिहास में गुप्तकाल की वैभव पूर्ण स्थिति और समुद्रगुप्त की दिग्विजय माना है। जो युक्ति संगत प्रतीत नहीं होता है। वह विक्रमादित्य का समकालीन और ईसा से ५७ वर्ष पूर्व हिमालय के उत्तराखंड गढ़-वाल में उत्पन्न हुआ है। वह युग ब्राह्मण संस्कृति का सर्वाङ्ग पूर्ण विकसित युग था। गुप्तकाल को हम भारतीय संस्कृति, सभ्यता और ब्राह्मण धर्म एवं बौद्ध धर्म के पुनर्जागरण का युग अवश्य कह सकते हैं किन्तु महाकवि कालिदास को उससे नहीं जोड़ सकते हैं।

रामभक्ति-वाल्मीकि और कालिदास

मेघदूत के प्रथम श्लोक में भी महाकवि कालिदास ने राम और सीता का पापनाशक नाम अपनी आत्मकथा के प्रारम्भ में ही अपनी श्रद्धामयी भावना से वर्णन किया है। संस्कृत के आदि कवि वाल्मीकि की रामायण और राम के नाम का महत्त्व महाकवि कालिदास अच्छी प्रकार से देख चुका था, समझ चुका था। अतः नाम का जाप करना, उपासना करने के समान ही काव्य के रूप में गुणगान करना भी होता है। बाल्मीकि राम के नाम से पावन होकर ससार में सदा अमर हो गया तो क्या महाकवि कालिदास उससे किसी भी रूप में पीछे रह सकता था।

अपने रघुवंश के प्रथम सर्ग के १, २, ३, ४, श्लोक में सूर्यवंश का वर्णन करने वाले बाल्मीकि को कालिदास ने विशेष स्मरण किया है क्योंकि उन्होंने राम के चरित्र को लिखने के लिए पहले ही द्वार खोल दिये हैं।

महाकवि कालिदास ने राम के नाम का तो लाभ उठाया ही है किन्तु भारतीय समाज को राम के आदर्श जीवन से शिक्षा ग्रहण करने के लिए भी रघुवंश में इस प्रकार के उद्धरण दिये हैं—

'जब राजा दशरथ राम को राज्य दे रहे थे उस समय राम ने आंखों में आंसू भरकर उसे स्वीकार किया था और जब उनसे कहा गया कि वन चले जाओ तब राम ने इस आज्ञा को सहर्ष स्वीकार किया।[1]

राम के साथ ही साथ कालिदास ने भारतीय संस्कृति के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए भरत जैसे भाई का त्याग भी दिखाया है :—

---

१. पिता दत्तां रुदन्रामः प्राङ्महीं प्रत्यपद्यत।
पश्चाद्वनाय गच्छेति तदाज्ञां मुदितोऽग्रहीत्॥ रघुवंश १२ सर्ग ७ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'क्योंकि जिस राज्य को बड़े भाई ने स्वीकार नहीं किया उसे लेना मैं उतना ही बड़ा पाप समझता हूँ जितना बड़े भाई के अविवाहित रहने पर छोटा भाई विवाह कर लेता है।'[१]

प्राचीन भारतीय सामाजिक संस्थाओं में संस्कारों को महत्त्व देते हुए शरीर रूपी वस्त्र को छोड़ने पर राजा अज अपनी प्रिय पत्नी की मृत्यु से दुखी है। उसे महाकवि कालिदास ने ब्राह्मण धर्म और भारतीय संस्कृति के अनुरूप कितना सटीक कहा है :—

'अब आप सब शोक छोड़कर पिण्डदान आदि करके अपनी पत्नी का परलोक सुधारें क्योंकि शास्त्र कहते हैं कि जब कुटुम्बी अधिक रोते हैं तब उससे प्रेतात्मा को कष्ट होता है।'[२]

जिन भारतीय और पाश्चात्य संस्कृत के अध्येताओं ने बलात् महाकवि कालिदास के रघुवंश के कुछ आधारों को प्रस्तुत कर उसे गुप्तकाल का सिद्ध किया है, केवल मात्र उन्हें देखने से ही कवि के सही भाव स्पष्ट नहीं हो सकते हैं। महाकवि कालिदास की प्रतिभा, कवित्व शक्ति, विस्तृत ज्ञान एवं प्राचीन भारतीय इतिहास का सम्यक् परिचय इस महाकाव्य में अच्छी प्रकार से देखा जा सकता है किन्तु उसे गुप्त काल का नहीं माना जा सकता है। अपने युग के वातावरण के अनुरूप आदर्श को ग्रहण करने के लिए रघु के वंश के राजाओं के पावन जीवन को लेकर ही रघुवंश को रचा है न कि गुप्त राजाओं की प्रशस्ति में। यदि कालिदास गुप्त युग में होता तो वह स्पष्ट रूप में गुप्त राजाओं के वंश का पृथक् से परिचय देकर उनका नाम रघु के वंश के राजाओं के नाम के समान क्या नहीं दे सकता था ?

जिस रघुवंश में राजा दिलीप को राजधर्म का सच्चा ज्ञाता बताकर कालिदास ने सही वर्णन किया है, वैसा वह क्या गुप्तवंश का नहीं कर सकता था ?

'अपनी प्रजा को नम्रता, सदाचार की शिक्षा देने से, आपत्तियों से रक्षा करने एवं अन्न-जल से भरण-पोषण करने से राजा दिलीप वास्तव में प्रजा के पिता थे। पिता कहलाने वाले और सब तो जन्म देकर नाममात्र के ही पिता थे।'[३]

मगधराज्य का वर्णन प्रसंगवश राजा दिलीप की रानी सुदक्षिणा के साथ अवश्य आया है क्योंकि वह मगधकुल में उत्पन्न हुई थी। अन्यत्र कहीं भी गुप्तवंश

१. स हिप्रथमजे तस्मिन्नकृतश्रीपरिग्रहे।
परिवेत्तारमात्मानं मेने स्वीकरणद्भुवः॥ रघुवंश १२ सर्ग १६ श्लोक

२. त्यजशोकमनाः कुटुम्बिनीमनु ह्यष्व निवापदत्तिभिः।
स्वजनाश्रु किलाति सन्ततं दहति प्रेतमिति प्रचक्षते॥ रघुवंश ८ सर्ग ८६ श्लोक

३. प्रजानां विनयाधानाद्रक्षणाद्भरणादपि।
स पिता पितरस्तासां केवलं जन्महेतवः॥ रघुवंश १ सर्ग २४ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के राजाओं के नाम, पराक्रम या स्वर्णयुग का कहीं भी वर्णन नहीं है। इसमें खींच-तान, तोड़-मरोड़ की कोई भी सम्भावना नहीं होती। भरत का ऐसा त्यागमय जीवन न दिखाकर किसी गुप्तवंशीय राजा के चरित्र को कालिदास ने क्यों वर्णन नहीं किया?

'जैसे किसी युवा पुरुष की गोद में कोई रूपवती युवती आकर बैठ जाये और वह उससे भोग न करे, तलवार की धार पर चलने के समान चंचल इन्द्रियों को वश में रखने का व्रत ले, वैसे ही भरत ने भी पिता की दी हुई राज्य लक्ष्मी को भोग करने की शक्ति रहने पर भी मेरे कारण उसका भोग न करके कठिन असि-धारा व्रत का पालन किया है।'[१]

मर्यादा पुरुषोत्तम आदर्श राम सीता से भरत के त्याग, भ्रातृप्रेम और अनु-शासन की प्रशंसा करके उसका आदर्श बता रहे हैं। यह वर्णन रघु के वंश के राजाओं का है न कि गुप्त वंश के राजाओं का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में कहीं भी वर्णन नहीं दिखता है। कालिदास का तो वाल्मीकि रामायण के आधार पर अपने पापों को राम-सीता के पवित्र नाम से दूर करना मुख्य उद्देश्य था। १६ वीं शताब्दी में राम के नाम का महत्त्व सन्त तुलसीदास ने भी समझा और भारतीय समाज को भक्ति के द्वारा ही जगाया एवं संगठित किया। वाल्मीकि और कालिदास का प्रभाव तुलसी पर भी देखा गया है।

काशी नहीं अपितु गुप्तकाशी ही कालिदास की सच्ची प्रेरक थी

गुप्तकाशी का नाम बहुत दिनों तक लोगों की स्मृति में बना रहा और जो लोग हिमालय के उत्तराखण्ड केदार की भूमि को नहीं जानते थे उन्होंने गुप्तकाशी से गुप्त शब्द को व्यर्थ समझकर छोड़ दिया। इससे पर्वतीय भू-भाग का महत्त्व कम हुआ और सामान्य जनता उसे इसीलिए भूलती गई और तभी विद्योत्तमा काशी के राजा शारदानन्द की पुत्री मानी गई। दासता के प्रभाव, आजीविका की समस्या और दुर्गम पर्वतीय भूभाग में यातायात की असुविधा के कारण पुरानी प्रगति गतिहीन होकर भुलाई गई है।

शब्द कोषों को लिखने वाले, टीका, टिप्पणी और आलोचना या समीक्षा करने वाले भी कुछ शब्दों का अर्थ न जानने पर उसका अपने ज्ञान एवं अनुभव के आधार पर स्वेच्छा से कुछ का कुछ भी अर्थ लगा देते हैं। गुप्तकाशी का नाम जब हस्त-लिखित या भोजपत्रों के द्वारा लिखी हुई पुस्तकों में किसी को दिखा उसने भी प्रसिद्धि के कारण और रूढ़ि अर्थ के कारण गुप्तकाशी के नाम से गुप्त शब्द को

---

२. पित्रा विसृष्टां मदपेक्षयायः श्रियं युवाप्यङ्कगतामभोक्ता।
इयन्ति वर्षाणि तया सहोग्रमभ्यस्य व्रतमसिधारम्॥
रघुवंश १३ सर्ग ६७ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तो दूर करके एक नया अध्याय जोड़ा है। गुप्तकाशी, उत्तरप्रदेश के उत्तराखण्ड के केदार भूभाग का एक बड़ा प्राचीन धार्मिक स्थान है। यहीं अपने प्राचीन समय में विद्या का बहुत बड़ा केन्द्र था। यह सिद्धपीठ कालीमठ और केदारनाथ के निकट का सुरम्य स्थान था। किसी स्थान के विषय में यदि हम कुछ नहीं जानते तो उसके अस्तित्व को अस्वीकार करने का भी हमें अधिकार नहीं है। गुप्तकाशी का धार्मिक; सांस्कृतिक और शैक्षणिक दृष्टि से अपना एक विशेष महत्त्व था। काशी का महत्त्व है तो गुप्तकाशी का भी केदारखण्ड में कालिदास के जीवन में कम महत्त्व नहीं है। इस नगर पर शिव की दो रूपों में विश्वनाथ और केदारनाथ के कारण विशेष कृपा थी। यह सम्पूर्ण क्षेत्र शिव एवं शक्ति के संयुक्त रूप में देखा जा सकता है।

वर्षों गुप्तकाशी और काशी के नाम की चर्चा विद्वानों में चलती रही किन्तु समय के बदलने पर विकसित क्षेत्र तथा साधनों की सुविधा से काशी ही अधिक प्रचलित हो गई एवं गुप्तकाशी भुलादी गई किन्तु राजा शारदानन्द उत्तराखण्ड के केदार भूभाग का एक प्रतिष्ठित धर्मात्मा राजा था। स्वेच्छा से लेखक जो भी अर्थ लगायें किन्तु महाकवि कालिदास की गुप्तकाशी ही सच्ची प्रेरक थी। विद्योत्तमा एवं राजा शारदानन्द भी इसी गुप्तकाशी के ही थे। उनका मूल स्थान गुप्तकाशी ही था।

विजय और विवाह के पश्चात् मूर्खत्व के कारण पराजय प्राप्त करके, विद्या उपार्जन करने के अनन्तर कहीं भी काशी के किसी भी क्षेत्र का कालिदास ने अपने किसी भी ग्रन्थ में प्रकरण या अप्रकरण के रूप में कहीं वर्णन तो किया होता? कवि अपने युग का प्रतिनिधि एवं अपने सन्निकट के पर्यावरण से सबसे अधिक प्रभावित होता है। अतः यह कभी भी नहीं हो सकता है कि वह उस क्षेत्र को सर्वथा भूल जायेगा। कालिदास हिमालय को क्यों नहीं भूला? अतः यह साधन सम्पन्नता और सुयोग का लाभ उठाने के लिए द्रविड़ प्राणायाम के अतिरिक्त और कुछ नहीं कहा जा सकता है। कालिदास हिमालय और केदारखण्ड के प्रति क्यों अधिक आकर्षित है? कुमारसम्भव और मेघदूत इसके ज्वलन्त उदाहरण है।

कालिदास की सही जन्मभूमि

महाकवि कालिदास की वास्तविक जन्मभूमि, सिद्धि की भूमि, विद्या अध्ययन का स्थान और साधना स्थली हिमालय के उत्तराखण्ड के ही केदार घाटी कालीमठ एवं गुप्तकाशी ही सही सिद्ध होते हैं। महाकवि कालिदास के ग्रन्थ इन सबके प्रबल प्रमाण है। महाकवि के भावों को समझने के लिए उसके ग्रन्थों का गम्भीरता और निष्पक्ष भाव से चिन्तन होना परमावश्यक है। महाकवि कालिदास ने अपनी सही बात कुमारसम्भव में हिमालय तथा उसके सन्निकट के पर्यावरण और शिव-पार्वती के प्रसंग में स्पष्ट वर्णन कर दी है। वैसा सूक्ष्म वर्णन वहां का निवासी ही कर सकता है दूसरा कभी भी इस प्रकार का वर्णन नहीं कर सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वास्तव में महाकवि कालिदास ने कुमारसम्भव और मेघदूत में अपनी जन्म भूमि में प्रवाहित होने वाली मन्दाकिनी का सबसे अधिक वर्णन किया है। यह मन्दाकिनी नदी केदारनाथ धाम से प्रवाहित होती है। अन्यत्र यह कहीं नहीं दिखाई देती है। हिमालय, कैलास, गन्धमातक पर्वत, अलका और गौरीशिखर आदि केदारघाटी के ही हैं। सबसे अधिक केदारखण्ड के भूमाग का महाकवि कालिदास ने अपने कुमारसम्भव और मेघदूत में विस्तृत वर्णन किया है। क्यों किया है? इससे स्पष्ट होता है कि वह हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल का ही निवासी था क्योंकि दूसरे स्थान का निवासी इस प्रकार की सूक्ष्म दृष्टि से उत्तराखण्ड के स्थानों, वनसम्पदा, जीव-जन्तुओं और छिपे हुए रत्नों का वर्णन कभी भी इस रूप में नहीं कर सकता है। इस पर गम्भीरता और पक्षपात को छोड़कर चिन्तन करना आवश्यक है।

कविल्ठा और कालिदास

महाकवि कालिदास ने सरस्वती की साधना और विद्या प्राप्त करने के पश्चात् गुप्तकाशी में विद्योत्तमा के राजमहल में आने पर एवं उन दोनों को प्रसन्न देखकर शारदानन्द उन्हें गुप्तकाशी में ही रखना चाहता था या उनके लिए पृथक् आवास बनाकर उन्हें वहीं अपने सन्निकट रखना चाहता था किन्तु महाकवि कालिदास श्वसुर गृह निवास को स्वर्ग के समान नहीं मानता था[1] अपितु अपने पैतृक परम्परागत गांव कविल्ठा में व्यवहारिक दृष्टि में रहना अधिक उचित समझता था। महाकवि कालिदास के उस ग्राम में रहने से पूर्व उस ग्राम का नाम पहले पुजारी गौं अर्थात् पुजारियों का गांव था बाद में महाकवि कालिदास के कारण इसका नाम कविठान पड़ा अर्थात् कवि का ठान था। जिसका अर्थ कवि का स्थान होता है। इस शब्द से भी यह स्पष्ट होता है कि महाकवि कालिदास इसी ग्राम का निवासी था। आगे चल कर कविठान के स्थान पर गढ़वाली बोली में कविल्ठा प्रचलित हो गया।

अपनी प्रिय पुत्री महाविदुषी विद्योत्तमा और विद्वान् दामाद कालिदास की इच्छा के अनुरूप राजा शारदानन्द ने गुप्तकाशी, कालीमठ के निकट के ही कविल्ठा ग्राम में उस युग की रीति-रिवाजों और प्रचलन को देखकर उनके अनुरूप भवन बना दिया था। उस भवन का ही यक्षरूपी कालिदास ने मेघदूत में विस्तृतरूप में सचित्र वर्णन किया है। राजा शारदानन्द ने अपनी अच्छी आर्थिक स्थिति और महाकवि एवं कवित्री महाविदुषी के सम्मान के रूप में उनकी समस्त सुख सुविधा के लिए आदर्श तथा चित्ताकर्षक भवन बनाकर दे दिया था। अपने निकट सम्बन्ध के साथ ही विद्वत्ता को दृष्टि में रखकर राजा शारदानन्द ने भवन निर्माण में अधिक से अधिक व्यय किया था। सभी दृष्टियों से राजा शारदानन्द समर्थवान्

---

१. श्वसुरगृहनिवासं स्वर्गतुल्यं नराणाम्।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तथा प्रभाव शाली था। अतः उसने अपने निकट सम्बन्ध के साथ ही उन विद्वान्-विदुषी के लिए मुक्त हस्त से दान देकर सांसारिक सुखों की प्राप्ति के सभी साधन एकत्रित कर दिये थे। उन्हीं सुख-सामग्रियों को बार-बार मेघदूत में यक्षरूपी कवि स्मरण करता है और चिन्तित होता रहता है। मानव अपने जीवन में दुख में ही अपने जीवन के सुखमय क्षणों को अधिक स्मरण करता है। उन दिनों को स्मरण करता हुआ ही वह अपने दुख के दिन काट लेता है।

महाकवि कालिदास के जीवन का अन्तिम भाग हिमालय के उत्तराखण्ड की केदारभूमि में ही व्यतीत हुआ है। गुप्तकाशी, कालीमठ और कविल्ठा में ही वह अन्त में अधिक समय तक रहा है। महाकवि कालिदास के मुख से उसकी कविताओं को सुनने एवं उसकी विद्वत्ता से लाभान्वित होने के लिए उत्तराखण्ड के बाहर के उस युग के गुणग्राही विद्वान् निरन्तर आते रहते थे। उत्तराखण्ड में ईसा पूर्व की प्रथम शताब्दी में महाकवि कालिदास, महाविदुषी विद्योत्तमा, राजा शारदानन्द, गुप्तकाशी, कालीमठ, कविल्ठा और केदारखण्ड का नाम अत्यधिक प्रसिद्ध हो चुके थे। उत्तराखण्ड के श्रद्धालु, भक्त और विद्वान् गुप्तकाशी में भगवान् विश्वनाथ एवं वहां के परम कोटि में पहुंचे हुए महात्माओं के दर्शन करने दूर-दूर से आते थे। उस युग के श्रद्धालुजन पदयात्रा करते हुए सिद्धि प्राप्ति के लिए कालीमठ और उसके ही निकट के कवि के घर को देखने के लिए भी आते थे। केदारनाथ की यात्रा कई दृष्टियों से अपना विशेष महत्त्व रखती थी। आज भी उत्तराखण्ड गढ़वाल के शाक्त परम्परा के लोगों के लिए कालीमठ सिद्धपीठ प्रेरणा का स्रोत है। पहले गुप्तकाशी, कालीमठ और कविल्ठा ग्राम से केदारनाथ पैदल यात्रा करने का सुगम मार्ग था।

हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल में महाकवि कालिदास के बाद बहुत शताब्दियों के पश्चात् भी ज्योतिष, कर्मकाण्ड, आयुर्वेद और संस्कृत के इस भूभाग में पारंगत विद्वान् रहते थे। जिनकी परम्परा बहुत दिनों तक बनी रही। यहाँ तक कि ज्योतिष के पारंगत विद्वानों द्वारा यहाँ पंचांग भी बनाए जाते थे और काशी आदि के विद्वान् उनसे ज्योतिष में परामर्श लेते रहते थे एवं ज्योतिषशास्त्र के गणित-फलित में उनके ही निर्णय सही तथा अन्तिम प्रमाण माने जाते थे।

मेरे पिता, ज्योतिर्विद वासबानन्द घिल्डियाल, पितामह ज्योतिर्विद भवानन्द घिल्डियाल, प्रपितामह ज्योतिर्विद खगपति घिल्डियाल और वृद्धपितामह ज्योतिर्विद अम्बादत्त घिल्डियाल पंचांगकर्ता परम शाक्त थे जो कालीमठ सिद्धपीठ से अधिक आकर्षित थे। अतः वे प्रत्येक वर्ष शारदीय और बासन्तीय नवरात्रों में अपने जीवनपर्यन्त धार्मिक दृष्टि से भी केदारक्षेत्र की अधिक यात्रा करते थे। उनकी ही जीर्ण-शीर्ण हस्तलिखित पुस्तकों से ही हमें सन् १९४३ में महाकवि कालिदास

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर लिखने के लिए प्रचुर सामग्री मिल चुकी थी जिसके आधार पर हमने सन् १९८४ में कालिदास और उसका माननीय साहित्य नाम की पुस्तक प्रकाशित कर विद्वज्जनों के समक्ष रखा है। उसे अध्येताओं ने आदर से अपनाया है। उन्हीं आधारों पर हमने यह 'कालिदास की आत्मकथा और मेघदूत' नाम की दूसरी पुस्तक तैयार की है जो प्रबुद्ध पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है।

मैं स्वयं सन् १९३७ से १९४४ तक लाहौर से अवकाश में आकर पदयात्रा करके कालीमठ सिद्धपीठ के दर्शन कर उस स्थान को देख चुका था। मेरी उस स्मृति और वंश परम्परागत रूप में प्राप्त सामग्री ने मुझे कर्तव्य के प्रति अनेक बार जगाया किन्तु मैं समय की प्रतीक्षा में था और उच्च शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् अपनी पत्नी की प्रेरणा एवं सहयोग से ही इस कार्य को अब पूर्ण कर पाया हूं। इस कार्य के सम्पादन में मेरी वर्षों की साहित्य साधना, आराधना, उपासना और सबसे बड़ी प्रेरणा कालीमठ सिद्धपीठ की ही है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

द्वितीय अध्याय

मेघदूत गीतिकाव्य का सही स्वरूप

गीतिकाव्य ही आत्मकथा का मुख्य आधार होता है

संस्कृत साहित्य में आत्मकथा लिखने की कोई परम्परा ही नहीं थी किन्तु गेय पदों में कविता के माध्यम से अपने विचारों को अभिव्यक्त करने की एक विशिष्ट शैली अवश्य थी। ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी में महाकवि कालिदास ने अपने जीवन के दारुण दुखों को व्यक्त करने के लिए वाल्मीकि रामायण के आधार पर मेघदूत गीतिकाव्य की रचना की है। वास्तव में पाश्चात्य और भारतीय संस्कृत के विद्वानों ने काव्यशास्त्र के सिद्धान्तों के अनुरूप महाकवि कालिदास के मेघदूत को गीतिकाव्य का नाम तो दिया है किन्तु समीक्षात्मक दृष्टि से गीतिकाव्य पर कुछ भी स्पष्ट करने का प्रयास नहीं किया। यदि गीतिकाव्य के वास्तविक स्वरूप का महत्त्व स्पष्ट कर दिया होता तो 'महाकवि कालिदास की आत्मकथा और मेघदूत' जैसे वर्ण्य विषयों का रहस्य पाठकों को समझने में तनिक भी कठिनाई न होती तथा सुगमता से विश्वकवि कालिदास का सही परिचय पाठकों को सुगमता से प्राप्त हो सकता था।

महाकवि कालिदास के ग्रन्थों का वर्षों गहन अध्ययन और अन्वेषण करने वाले हमारे परिवार के संस्कृत के विद्वानों से हमें लिखित एवं मौखिक रूप में जो सामग्री प्राप्त हुई है उसी के आधार पर हमने सबल शब्दों तथा सशक्त युक्तियों के द्वारा मेघदूत गीतिकाव्य को कालिदास की आत्मकथा मानकर ही यह उपयुक्त नामकरण संस्कार इस पुस्तक का किया है। संस्कार, शुद्धि, परिमार्जन, परिष्कार, शुद्ध स्वरूप को निखारने और परिशोधन के लिए ही किया जाता है। वास्तव में गीतिकाव्य में कवि अपने हृदय के सच्चे भावों को संगीत के माध्यम से गीत का रूप देकर अपने दुःख को अभिव्यक्त करता है। सचमुच यदि गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाये तो मेघदूत महाकवि कालिदास के अन्तःस्थल की सच्ची व्यथा और आत्मकथा बताने का सही आधार है। गीतिकाव्य और विशेष रूप से मेघदूत गीतिकाव्य कालिदास के हृदय के सच्चे भावों की अभिव्यक्ति है एवं सही अनुभूति है। अपने हृदय की दारुण व्यथा की कथा जो उसके जीवन में घटी है उसे कालिदास ने मेघदूत द्वारा स्पष्ट किया है। गीतिकाव्य ही दुखी व्यक्ति की आत्माभिव्यक्ति का मुख्य माध्यम होता हैं। वैसे गीत आध्यात्मिक और धार्मिक दृष्टि से सच्चे सन्तों एवं ईश्वर भक्तों के सही भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम भी रहा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है। सर्वप्रथम वैदिक साहित्य में वेदमन्त्रों में ऋषियों ने देवशक्ति के प्रति अपने हृदय के सच्चे भावों को व्यक्त करने में गेय पदों का प्रयोग किया है। उसी प्रकार सांसारिक दृष्टि से अपने हृदय की असह्य वेदना को व्यक्त करने के लिए कालिदास जैसे महाकवियों ने गेय पदों का प्रयोग किया है और उसी परम्परा में ही गीति-काव्य का जन्म हुआ है।

गीतिकाव्य प्राय: दुखी कवि के अत्यधिक दारुण हृदय के सच्चे भावों, उसके व्यक्तित्व और उसके वियोगात्मक जीवन की सच्ची हृदयानुभूति की गाथा होती हैं। महाकवि कालिदास ने अपने हृदय के सच्चे दारुण दुख भरे वियोगावस्था के विचारों, अपने क्रियाकलापों एवं अपनी वास्तविक अनुभूतियों को गीतिकाव्य के माध्यम से अपने जीवन से घटित सच्ची घटना आत्मकथा के रूप में मेघदूत में प्रबुद्ध पाठकों के लिए प्रस्तुत की है। मेघदूत गीतिकाव्य में कालिदास ने अपने मन के सच्चे भावों में अपनी सही जीवन की गाथा गाई है एवं अपना उसमें सही परिचय भी दिया है। गीतिकाव्य सदा भाव प्रधान होता है और किसी व्यक्ति को मुख्य पात्र बनाकर किसी घटना विशेष से जोड़ा जाता है। इसमें महाकवि के सच्चे हृदय के भावों की अभिव्यक्ति होती है।

महाकवि कालिदास के हृदय के वियोगात्मक स्थिति के सच्चे भाव मुख्य रूप में संगीत का रूप लेकर आत्मकथा का स्वरूप धारण कर मेघदूत गीतिकाव्य में प्रकट हुये हैं। जब वियोगी कवि के सच्चे भाव और हृदयानुभूति कारुणिक शब्दों द्वारा गीत रूप में स्फुरित हो जाती है, तभी उसके वे भाव गीतिकाव्य के रूप में परिष्कृत हो जाते हैं। मेघदूत गीतिकाव्य महाकवि कालिदास के हृदय के सच्चे वैयक्तिक भावों की अभिव्यक्ति की सही आत्मकथा है।

हमने गीतिकाव्य के महत्व, उद्देश्य और उसके वास्तविक स्वरूप पर चिन्तन एवं मनन के पश्चात् महाकवि कालिदास के हृदय के सच्चे भावों तक पहुंच कर ही मेघदूत गीतिकाव्य को उसकी आत्मकथा का सही नाम दिया है। उसी आधार पर इस पुस्तक का नाम 'कालिदास की आत्मकथा और मेघदूत' रखा है। प्रत्येक व्यक्ति की चिन्तन करने की पद्धति, अभिव्यक्त करने की शैली एवं लेखन शक्ति भिन्न-भिन्न होती है। महाकवि कालिदास के मेघदूत को गीतिकाव्य का नाम देने पर भी अभी तक किसी ने सशक्त शब्दों में एवं स्पष्ट रूप में मेघदूत के वर्ण्य विषय को जानते हुए भी उसे महाकवि कालिदास की आत्मकथा या आत्मकथा का स्रोत कहने का साहस नहीं बनाया। हमने इस दिशा में अपने पूर्वजों द्वारा संचित सामग्री को लिखित और मौखिक रूप में प्राप्त कर तथा स्वयं स्वाध्याय कर एवं अनेक कष्ट सहन कर अन्वेषण की दृष्टि से कालिदास द्वारा वर्णित दुर्गम स्थानों की यात्रा की है। उसी का ही प्रतिफल है कि हम मेघदूत गीतिकाव्य को कालिदास

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की आत्मकथा का स्रोत मानकर सप्रमाण एवं प्रबल युक्तियों के आधार पर 'कालिदास की आत्मकथा और मेघदूत' को प्रकाशित कर रहे हैं।

महाकवि कालिदास ने अपनी वैयक्तिक व्यथा को एक छोटी सी कथा के रूप में स्वयं एक हृदयस्पर्शी स्वर में गाकर अपने पाठकों को उद्वेलित किया है। 'कालिदास ने अपने हृदय के सच्चे मर्मस्पर्शी भावों को मेघदूत गीतिकाव्य के प्रारम्भ में ही प्रथम श्लोक में स्पष्ट संकेत करते हुए अपनी आत्मकथा को इस प्रकार प्रारम्भ किया है :—

कश्चित्कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारात्प्रमत्त:
शापेनास्तङ्गमितमहिमा वर्षभोग्येण भर्तु:।
यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु
स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु॥

अपने कार्य से असावधान अपनी प्रिया के असह्य विरह से एक वर्ष तक भोगे जाने वाले अपने स्वामी के शाप से क्षीण हो गया है प्रभाव जिसका, ऐसा कोई यक्ष सीता के स्नान से पवित्र जल एवं घनी छाया वाले वृक्षों से युक्त रामगिरि आश्रम में निवास कर रहा था।

मेघदूत गीतिकाव्य में महाकवि कालिदास ने कोई यक्ष कहकर यक्ष को ही माध्यम बनाकर अपने पारिवारिक जीवन की दारुण दुखभरी गाथा संगीत के रूप में अभिव्यक्त की है। दारुण दुख का कारण शाप को माना है और उस बेचारे यक्षरूपी कवि को मानवीय दृष्टि से प्रिया के विरह का दुख क्यों भोगना पड़ा? क्योंकि वह नवीन कविता की उमंग और यौवन की तरंग से अपने प्राप्त अधिकार का सही उपयोग न कर सका। यक्ष अपने कर्तव्य का सही परिपालन न करने से और कविरूप में कालिदास शिव-पार्वती के रतिसुख को अपनी प्रथम कविता का वर्ण्य विषय बनाने से रामगिरि आश्रम में एक वर्ष तक कठिन यातना सहन करता रहा।

महाकवि कालिदास ने प्रकरणवश गीतिकाव्य के माध्यम से अपनी भोगी गई शाप की अवधि में दारुण दुखभरे समय को अपने पारिवारिक जीवन पर आधारित एक घटना को गाथा के रूप में अभिव्यक्त किया है। इस गीतिकाव्य के द्वारा कवि अपना, अपनी जन्मभूमि, कर्मभूमि, पत्नी, अपने गांव घर का, मेघ को मार्ग बताने में सजीव तथा सही वर्णन करता है। कालिदास अपने अनुभवों को अभिव्यक्त करने में बड़ी ही सूक्ष्म दृष्टि से कार्य लेता है और अच्छी प्रकार रामगिरि से हिमगिरि केदारभूमि से लगी अलका तक का मार्ग बताने के पश्चात् ही मेघ को मार्ग बताने में सजीव तथा सही वर्णन करता है। कालिदास अपने अनुभवों को अभिव्यक्त करने में बड़ी ही सूक्ष्म दृष्टि से कार्य लेता है और अच्छी प्रकार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रामगिरि से केदार भूमि से लगी अलका तक का मार्ग बताने के पश्चात् ही मेघ को अपना सन्देश देता है :—

शापान्तो मे भुजगशयनादुत्थिते शार्ङ्गपाणौ–
शेषान्मासान् गमय चतुरो लोचने मीलयित्वा ।
पश्चादावां विरहगुणितं तं तमात्माभिलाषं–
निर्वेक्ष्यावः परिणतशरच्चन्द्रिकासु क्षपासु ॥[1]

कालिदास दारुण दुख में भी आशावान् और आस्थावान् बनकर शेष चार मास को भी व्यतीत करने का अपनी प्रिय विरहिणी पत्नी को उपाय बताता है और दारुणदुख सहने की सान्त्वना देता है। यह सब यक्ष का आधार लेकर स्वयं की महाकवि कालिदास की सच्ची आत्मकथा है। कालिदास ने अपने दारुण-दुखानुभूति को मेघदूत गीतिकाव्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। प्रवुद्ध अध्येता और उत्तरमेघ में मूल संस्कृत के श्लोकों के साथ मिलान कर सही समीक्षात्मक रूप में अच्छी प्रकार से महाकवि कालिदास की अनुभूति, अभिव्यक्ति, उपलब्धि को भी उसकी आत्मकथा में देख सकेंगे। महाकवि कालिदास ने अपने जीवन की सच्ची घटना को गीति के रूप में गाकर मेघदूत में अभिव्यक्त किया है।

मेघदूत का काल्पनिक यक्ष तो अपने दारुण दुखों को रोकर ही व्यतीत कर सकता था और पुन: सुखी होकर उन दुखों को भूल भी सकता था किन्तु कवि हृदय रखने वाला, प्राकृतिक सौन्दर्य में बाल्यकाल से स्वतन्त्र रूप में परिभ्रमण करने वाला महाकवि कालिदास कैसे भूल सकता था ? अपितु वह अपनी सच्ची अनुभूतियों को गीतिकाव्य का रूप देकर ही पूर्णरूप से स्वस्थ एवं शान्त हुआ है। महाकवि अपनी कविता के द्वारा अपनी सच्ची आत्मानुभूति से अपने समाज के सहृदयों को भी लाभान्वित करता है और अपने कृतित्व से अपना सही व्यक्तित्व भी दिखाता है। असह्य दारुण दुखों के पश्चात् ही कालिदास की आत्मकथा निखर कर पाठकों के समक्ष आई है। सचमुच महाकवि कालिदास की सच्ची आत्मानुभूति ही मेघदूत गीति काव्य में सही आत्मकथा के रूप में स्पष्ट हो जाती है। महाकवि कालिदास ने मेघदूत गीतिकाव्य के द्वारा अपनी सच्ची दलित, व्यथित, पीड़ित और प्रवासी जीवन की कथा को काव्यशास्त्र के आधार पर अपने साहित्य अध्येताओं के समक्ष समझने के लिए रख दिया है। उसका सही अन्वेषण करना सहृदय पाठक की चिन्तन शक्ति पर निर्भर करता है।

महाकवि कालिदास ने मेघदूत गीतिकाव्य के द्वारा भ्रमात्मक धारणाओं में परिभ्रमित लोगों के लिए अपना जीवन, जन्म भूमि का परिचय, उत्तराखण्ड से रामगिरि आश्रम तक की यात्रा, कर्मभूमि के स्थानों का वर्णन, मार्ग का दिग्दर्शन

---

१. उत्तरमेघ ४९ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और सन्देश देने तक सब कुछ स्पष्ट कर दिया है। हमने द्वितीय और तृतीय अध्याय में महाकवि कालिदास की सही अनुभूति को स्पष्ट करने का पूर्ण प्रयास किया है, जिसे पढ़कर प्रबुद्ध पाठक स्वयं ही वास्तविकता के निकट पहुंच सकेंगे।

गीति काव्य में महाकवि की पूर्ण रूप से आत्मानुभूति और उसके जीवन से घटित सच्ची घटना होती है किन्तु वह अन्य पुरुष के माध्यम से ही होती है। जैसे कि मेघदूत के प्रथम श्लोक में महाकवि ने अपनी व्यथा की कथा प्रारम्भ करते ही 'कश्चित्कान्ता' में अन्य पुरुष के रूप में किसी यक्ष विशेष का सहारा लिया है। इस प्रकार गीतिकाव्य का महत्त्व और सही स्वरूप से कालिदास की आत्म-कथा मेघदूत का सम्बन्ध महाकवि कालिदास की भावनाओं के आधार पर पूर्णरूप से स्पष्ट हो जाता है।

पूर्वमेघ और कालिदास की आत्मकथा

कवि की सच्ची भावनाएं—महाकवि कालिदास ने अपने जीवन की सच्ची मर्मस्पर्शी विरह जनित करुण गाथा को और अपनी जन्मभूमि केदारखण्ड के निकट की सुरम्य यक्षों की नगरी अलकापुरी से जोड़कर अपने हृदय की व्यथा एवं कथा को मेघदूत गीतिकाव्य में मन्द-मन्द गति से चलने वाले मेघ के समान संगीतमय रूप देकर मन्दाक्रान्ता छन्द में अभिव्यक्त किया है। कवि के लिए हिमालय की दुर्गम और ऊतुंग—चोटियों में निरन्तर वास करने वाला, चिरपरिचित मेघ के समान उपकारी सच्चा मित्र और कौन हो सकता था? जो बाल्यकाल का साथी हो, उदार हो? विश्वासी हो, अंगीकृत को परिपालन करने वाला एवं त्याग करने वाला हो। इस प्रकार निस्वार्थी मित्र, अवस्था में छोटा, गुणों में विविध प्रकार के रूप धारण करने वाला, जन्मभूमि में निवास स्थान से परिचित एवं सन्देश देने में पटु, मध्यप्रदेश से केदार घाटी सूदूर उत्तरदिशा अलकापुरी तक पहुंचने में शीघ्रगामी यक्ष के लिए मेघ के अतिरिक्त अन्य कोई हो ही नहीं सकता था। पर्वतों की शृंखलाओं को शीघ्रता, सुगमता, कुशलता और निर्भीकता से मेघ के अतिरिक्त कौन पार कर सकता था?

यक्ष रूपी महाकवि कालिदास स्वयं गुणी, व्यवहार कुशल, नीति निपुण, विद्यावारिधि, खगोल-भूगोल आदि विद्याओं का पूर्ण ज्ञाता और कामजन्य विरह दारुण दुख में सन्तप्त होने पर भी चेतनता से युक्त है। प्रायः दुख में, आपत्ति में मित्र, सगे सम्बन्धी, परिचित भी अपरिचित हो जाते हैं और बुद्धि विपरीत हो जाती है किन्तु यक्ष अपनी साधना से अपनी कामना के लिए अत्यधिक जागरूक है क्योंकि कहीं भी अनर्गल तथा असंगत भाषण नहीं करता है। अपनी विदग्धता, अलंकारिक उपमा द्वारा, सहज भाव से अपने पाण्डित्य का सही परिचय देता है

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दारुण संकट में कहीं भी भ्रमित नहीं होता है अन्यथा सारा कथानक ही बिगड़ सकता था और कार्य की सिद्धि भी न हो पाती।

महाकवि कालिदास काम पीड़ित दारुण दुख में होने पर भी धुआं, प्रकाश, पानी और हवा के द्वारा निर्मित मेघ से सन्देश पहुंचाने की कामना करता है। महाकवि ने अपने वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भौतिक एवं रसायनशास्त्र का मर्मज्ञ होने तथा कामी व्यक्तियों की मनस्थिति का एक सफल मनोवैज्ञानिक होने का भी परिचय दिया है। कवि अपने विचारों को दूसरे में देखकर भी वास्तविकता से दूर नहीं हो सकता है। इस श्लोक से भी महाकवि कालिदास ने मानवीय विचारों का सुन्दर विश्लेषण किया है :—

कवि अपने चैतन्य भाव से स्वयं प्रश्न कर रहा है कि—'कहाँ तो धूयें, प्रकाश जल और वायु चेतना शून्य वस्तुओं के संयोग से बना हुआ मेघ एवं कहाँ चेतना युक्त प्राणियों द्वारा पहुँचाये जाने वाला (रैवार) सन्देश। इतना होने पर भी यक्ष ने काम वासना के मोह से पीड़ित होकर चेतन-अचेतन का ध्यान न रखकर उस मेघ से प्रार्थना की क्योंकि इच्छाओं से पीड़ित (गरजू) व्यक्तियों की चिन्तन शक्ति स्वभावतः नष्ट हो जाती है।'[1]

यहाँ पर महाकवि कालिदास ने अपनी वाग्विदग्धता और पाण्डित्य का अच्छा परिचय दिया है। अपने स्वार्थ में व्यक्ति अपने विवेक को खोकर अयोग्य से भी अपनी स्वार्थ सिद्धि की कामना या याचना करता है। स्वार्थी असक्त और दुखी व्यक्ति की मनस्थिति का सही वर्णन किया है। दुखी व्यक्ति अपनी कार्य सिद्धि के लिए सामने खड़ी चेतन-अचेतन वस्तु से अपने हृदय की सच्ची व्यथा तथा कथा कह ही देता है। वास्तव में व्यक्ति दुख रोकर, कहकर, गाकर या कविता का रूप देकर हल्का हो जाता है। सचमुच में कविता का जन्म दुखी हृदय से ही हुआ है क्योंकि दुखी हृदय की पुकार कविता ही होती है। संस्कृत के आदि कवि बाल्मीकि की कविता क्रौंच पक्षी के वध के दुख से ही जाग्रत हुई थी। संगीत की अभिरुचि, स्वर साधना, ईश्वर का वरदान, प्रकृति या पर्यावरण के सान्निध्य से भी कविता जाग्रत होती है। मेघदूत गीतिकाव्य कालिदास की व्यक्ति और व्यक्तित्व प्रधान रचना है। जो उसके वैवाहिक जीवन के बाद ही कवि द्वारा वर्णित सच्ची रागात्मक कथा है। कभी-कभी सच्ची भावनाओं के बल पर विश्वासी व्यक्ति अचेतन से भी चेतन प्राणि की तरह कार्य सिद्ध करा ही लेता है। स्वप्ने

१. धूमज्योतिः सलिलमरुतां सन्निपातः क्व मेघः
सन्देशार्थाः क्व पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः।
इत्यौत्सुक्यादपरिगणयन् गुह्यकस्तं ययाचे
कामार्त्ता हि प्रकृतिकृपणाश्चेतनाचेतनेषु॥ मेघदूत पूर्वभाग ५ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किसी के पूरे नहीं होते हैं किन्तु अच्छे लोगों की सभी कल्पनायें सिद्ध एवं सफल हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में ही महाकवि कालिदास की दारुण विरह व्यथा युक्त संदेश उसकी पत्नी के पास कातिक मास की हरिप्रवोधिनी एकादशी से पूर्व आकाशवाणी के रूप में पहुँच जाता है। जैसे विश्वासी व्यक्ति के विश्वास से—

'विष्णु भगवान् के शेषनाग से उठने पर मेरे शाप का अन्त हो जायेगा। अतः इन शेष चार मास को भी (भविष्य की आशा में) आँख बंद कर काट लो। इसके पश्चात् तो हम मिल जायेंगे और दारुण विरह के दिनों की सोची हुई अभिलाषाओं को शरद् काल की चांदनी रातों में पूर्ण करेंगे।'[1]

पाप, शाप और ताप ईश्वर के स्मरण, तीर्थवास और पुनीत सीता एवं पार्वती के स्नानों से पवित्र हुए आश्रमों के स्नान करने से तथा उस अवधि के पूरे होने पर ही दूर होते हैं। पाप, ताप, शाप वैसे अपनी ही अवधि पर समाप्त होते हैं किन्तु धार्मिक कृत्यों से धैर्य, कष्ट झेलने का साहस, आशा और बहुत बड़ा सम्बल मिलता है। यही कारण था कि महाकवि कालिदास ने अपनी काली भगवती की सिद्धि से अपने भौगोलिक ज्ञान, और विद्वत्ता से राजा विक्रमादित्य के राज्य में सम्मान पाया, रामगिरि के पवित्र आश्रमों में स्नान तथा वास करके अपने बुरे प्रवास के समय को काटा और अपनी चिन्तातुर साध्वी पतिव्रता और अनन्यरूप से चिन्तन करनेवाली पत्नी के पास अपना सुख का सम्बल देने वाला सन्देश अपने प्रकृति के प्रिय मित्र के द्वारा सम्पूर्ण व्यथा के साथ पहुँचा दिया। आठ मास तक अनन्यमन से एकाकी चिन्तन करने वाली, देवपूजा, मेरे चित्र बनाने, सारिका से प्रश्न करने और विरह में मलिन वसन धारण किये हुए वीणा बजाते देखोगे। यक्षरूपी कवि अपनी व्यथा एवं अपने शुद्ध-बुद्ध स्नेह के सम्बल से मेघ को देखकर शिष्टाचार से उसका स्वागत करता है, परिचय बढ़ाकर उसके वंश की प्रशंसा करता है और अपनी कर्मभूमि से उसे जन्मभूमि में जाने का मार्ग बताने में आधे मेघदूत की रचना कर देता है। उसके पश्चात् पूर्ण विश्वास प्राप्त कर उसे अपनी पत्नी के लिए अपने हृदय के मार्मिक विचारों को सन्देश के रूप में सुनाता है। बेचारा यक्ष रूपी कवि तो रोकर, गाकर और सुनाकर अपनी सही आत्मकथा एक गीतिकाव्य के रूप में गा देता है और प्रबुद्ध पाठक कवियों की प्रतीकात्मक भाषा को समझने वाले सहृद भावुक एवं विद्वान् महाकवि कालिदास के विचारों से सही निष्कर्ष निकाल ही सकते हैं। इन सबके मूल में महाकवि कालिदास के

१. शापान्तो मे भुजगशयनादुत्थिते शार्ङ्गणी
शेषान् मासान् गमय चतुरो लोचने मीलयित्वा।
पश्चादावां विरहगुणितं तं तमात्माभिलाषं
निर्वेक्ष्यावः परिणतशरच्चन्द्रिकासु क्षपासु॥ उत्तरमेघ ४९ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अन्तस्थल के सही भाव छिपे हुए हैं। अपनी भौगोलिक यात्रा, उसका उद्देश्य, उस युग के प्रसिद्ध स्थानों के दर्शन, संस्कृत और संस्कृत के विद्वानों का समादर करने वाले गुणज्ञ राजा विक्रमादित्य के आश्रय में जाना, उसके राज्य के भूभाग, नदियों, पर्वतों एवं उसके वैभव को देखना तथा रामगिरि आश्रम में अपने किए गये शास्त्र मर्यादा के विरुद्ध कुमारसम्भव में जगत् के माता-पिता शिव-पार्वती कि रति सुख का वर्णन से प्राप्त शाप, ताप और पाप का निवारण करने के लिए ही पहुँचता है।

मेघदूत में मेघ के स्वरूप को जानते हुए भी महाकवि कालिदास अपनी आत्मकथा में गाकर अपने दुखों से हल्का तो हो ही जाता है और महाकवि की व्यथा एक काव्य के रूप में परिणित होकर व्यथित मानवों के लिए बहुत बड़े सम्बल का कार्य करती है। जब वियोगी कवि के हृदय के सच्चे भाव शब्दों के द्वारा गीत के रूप में स्फुरित हो जाते हैं तभी वे भाव गीति काव्य में परिवर्तित हो जाते हैं। विविध विद्याओं में पारंगत महाकवि के पाण्डित्य का पूर्ण परिचय भी उसकी आत्मकथा में सुगमता से मिल जाता है। महाकवि अपने युग का सच्चा प्रतिनिधि होता है और वह जनमानस के अनुरूप ही कविता का सृजन करता है।

मेघदूत गीतिकाव्य से भारतीय समाज का वैभव पूर्ण, कला की चरम सीमा पर पहुँचे हुए स्वरूप का, संस्कृत साहित्य की अभिवृद्धि का, विद्वानों के सम्मान, भारतीय नारी की सही स्थिति और राष्ट्र की भावात्मक एकता का जिज्ञासु शोध-कर्ताओं को सच्चा इतिहास मिलता है।

महाकवि कालिदास अपनी प्रतिभा से काव्य रचना में, अपनी जन्मभूमि का परिचय देने में, यशपाने में, अपनी आत्मकथा लिखने में, गुणज्ञ राजा विक्रमादित्य को प्रसन्न करने में, उज्जयिनी के वैभव को बताने में, अपनी प्रेयसी के प्रति अपने सच्चे स्नेह को व्यक्त करने में, अलका के यक्षों के ऐश्वर्यपूर्ण जीवन को स्पष्ट करने में, मन्दाकिनी की घाटी के महत्त्व को दिखाने में और अपने हृदय के सच्चे भावों से अपने स्वामी को प्रसन्न करके शाप से निवृत्त होने में सभी दृष्टियों से पूर्ण सफल तथा अपने समकालीन साहित्य के सृजन में अग्रगण्य रहा है।

मेघदूत पूर्वभाग—अधिकार प्रमत्त का फल

महाकवि कालिदास ने उत्तराखण्ड गढ़वाल कालीमठ में काली की साधना द्वारा सिद्धि प्राप्त की और अपने गांव कविल्ठा में अपनी पत्नी महाविदुषी विद्योत्तमा के साथ निश्चिन्त होकर पारिवारिक सुख में निवास करने लगा। विदुषी पत्नी के सुसंस्कृत वाक्य से सर्वप्रथम हिमालय की भौगोलिक स्थिति का कुमारसम्भव में वर्णन कर शिव-पार्वती के जग उपकारक वैवाहिक सम्बन्ध का वर्णन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कर अपनी नवस्फुरित काव्यकला का एवं अपनी जन्मभूमि का विस्तृत रूप में परिचय दिया है। यही प्रथम काव्य रचना कालिदास की पत्नी विरह दारुण दुख का कारण बनी। जिस आद्याशक्ति मां से कठिन साधना के रूप में वरदान मिला, वहीं कुछ नवयौवन की उमंग में स्पष्ट वर्णन के कारण शास्त्र मर्यादा के उल्लंघन की त्रुटि होने से अभिशाप भी बन बैठती है। प्रथम काव्य कुमारसम्भव की रचना हिमालय के भूभाग उत्तराखण्ड गढ़वाल में अपने जन्म स्थान कवि के स्थान कविल्ठा ग्राम में ही हुई। अपने वैवाहिक जीवन की मधुर स्मृतियों और पारिवारिक सुखद जीवन की सच्ची कथा शिव-पार्वती को हिमालय तथा कैलास का प्रमुख देव समझ कर उनकी जीवन गाथा को कुमारसम्भव महाकाव्य में अभिव्यक्त किया है। देव कार्य के लिए कुमार के जन्म का भी विस्तृत वर्णन है।

माता अपने बच्चे की बाल सुलभ मधुर तोतली बोली को सुनकर भाव विभोर हो जाती है किन्तु बड़े होने पर उसके अनुशासन हीन वाक्यों को सुनकर कठोर दण्ड देने में भी नहीं चुकती है। इसी प्रकार भागवत के छठें स्कन्ध के अनुसार राजा चित्रकेतु शिव-पार्वती के स्नेह को सामान्य जन का स्नेह समझ कर बहुत कुछ कह जाता है और उसे जगज्जननी पार्वती ने शास्त्र मर्यादा का उल्लंघन करते देख पापमय असुर योनि में जन्म लेने का शाप दिया। वही चित्रकेतु बाद में वृत्रासुर बना।[1]

चित्रकेतु ने शिव को पार्वती को गोद में लेकर देखा और पार्वती को जोर-जोर से हँसते हुए कहने लगा—अहो! ये सारे जगत् के धर्म शिक्षक और गुरुदेव हैं? ये समस्त प्राणियों में श्रेष्ठ हैं। इनकी यह दशा है कि भरी सभा में अपनी पत्नी को शरीर से चिपका कर बैठे हैं।[2]

क्या माता पार्वती के नख-शिख का महाकवि कालिदास के द्वारा कुमारसम्भव में जो वर्णन हुआ है उसे भी क्या पार्वती सहन कर सकती थी? अतः उसे कुष्ट रोग और परम प्रिय पत्नी की एक वर्ष की दारुण विरह व्यथा सहन करनी पड़ी। कुमारसम्भव और मेघदूत के पश्चात् महाकवि कालिदास ने रघुवंश महाकाव्य के प्रथम श्लोक में अत्यन्त ही विनीत होकर इस रहस्य को खोला है :—

---

१. अतः पापीयसीं योनिमासुरीं याहि दुर्मते।
यथेहभूयो महतां न कर्ता पुत्र किल्विषम्॥
भागवत ६ स्कन्ध १७ अध्याय १५ श्लोक

२. एष लोकगुरुः साक्षाद्धर्मं वक्ता शरीरिणाम्।
आस्ते मुख्यः सभायां वै मिथुनीभूय भार्यया॥ भागवत ६।१७।६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वाणी और अर्थ जैसे पृथक् होने पर भी एक है, वैसे ही शिव एवं पार्वती कहने के दो रूप हैं पर वे वास्तव में एक ही हैं। अतः वाणी तथा अर्थ को अपनाने के लिए, ठीक समझने के लिए एवं उनका ठीक प्रयोग करने के लिए मैं जगत् के माता-पिता शिव-पार्वती को प्रणाम करता हूँ।[1]

कुमारसम्भव की प्रतिक्रिया शाप के रूप में मेघदूत में देखी गई है। जिसे महाकवि कालिदास ने एक अलकापुरी के विरही यक्ष के रूप में अपनी आत्मकथा में वर्णन किया है। शाप की समाप्ति पर अपना सुखद पारिवारिक जीवन भोगते हुए शिव-पार्वती से रघुवंश में अपने किये गये अपराध की क्षमा मांगी है और राम के नाम को स्मरण कर प्रायश्चित्त किया है। बहुत बाद में १६वीं शताब्दी में सन्त तुलसीदास ने अपने रामचरित मानस में शिव-पार्वती के विवाह का वर्णन तो किया है किन्तु अति संयमित भाषा और अति ही सूक्ष्म रूप में किया है :—

'जगत मातु पितु सम्भु भवानी।
तेहिं सिंगारु न कहउँ बखानी।।'

क्योंकि वह कालिदास के साथ इसका परिणाम भली-भांति देख चुका था और लोकनीति तथा शास्त्र विरुद्ध मानकर अधिक वर्णन नहीं किया। पुराणों का सार लेने वाला तुलसीदास माता-पिता के रति सुख में कुछ भी नहीं बोल पाया।

मेघदूत गीतिकाव्य की कथा यद्यपि एक छोटे से कथानक से प्रारम्भ हुई है और मानव हृदय के पारिवारिक जीवन की एक दारुण दुखद हृदयस्पर्शी कथा एवं व्यथा है। यक्ष रूपी कालिदास अपने भौगोलिक और विविध विषयों का पारंगत विद्वान् होने के कारण अपने शाप, ताप तथा पाप को शास्त्र विधि से आठ मास तक शान्त एवं एकान्त रामगिरि आश्रम में सीता के बनवास के समय स्नान तथा चरण चिह्नों से पवित्र हुए पावन स्थान में व्यतीत करता है। अपने त्रिविध विषयों की विद्वत्ता से राजा विक्रमादित्य के राज दरबार में पूर्ण सम्मान पाता है। उज्जयिनी में राज्याश्रय पाकर राजा को प्रभावित कर उसके राज्य के पर्वतीय भूभाग, नदियों, वनों, आश्रमों और तीर्थों में स्नान एवं वास कर आठ मास में पापों को भोगकर तथा उन्हें समाप्त करता हुआ सुदूर उत्तर दिशा में स्थित अपनी जन्मभूमि में अपनी विरहिणी प्रेयसी की स्मृति में विह्वल हो उठता है और मन ही मन छटपटाता है तथा अपनी हृदय की व्यथा को मेघदूत की कविता में गा उठता

---

१. वागर्थाविव संपृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।। रघुवंश १ सर्ग १ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है। यक्षरूपी कवि अपना सही परिचय देता है और वास्तविक स्थिति इस प्रकार बताता है :—

कालिदास के हृदय के सच्चे भाव और आत्मकथा

अपने कार्य में प्रमाद करने के कारण प्रिया के विरह के महान् दुख एवं एक वर्ष तक अनुभव किये जाने वाले स्वामी के शाप से महत्त्वहीन होकर किसी यक्ष ने सीता के स्नानों से पवित्र हुए रामगिरि आश्रमों में तथा घने छायादार वृक्षों से युक्त स्थान में निवास किया।[1]

अपराधी, अधिकार में प्रमत्त और यौवन में अन्धा तथा बहिरा व्यक्ति अपने समय में किसी को कुछ न समझ कर किसी निर्धारित व्यवस्था को बलात् तोड़कर कैसे फल पाता है। इसे मेघदूत गीतिकाव्य के प्रथम श्लोक में अपनी आत्मकथा और हृदय की सही व्यथा को स्वयं कालिदास ने सुनाया है। सच्चा कवि अपने हृदय की अभिव्यक्ति के लिए कोई सटीक या लोक प्रसिद्ध माध्यम खोजता है। महाकवि कालिदास ने अपने शपित, पराश्रित, वियोगी और प्रवासी जीवन की करुण गाथा किसी अज्ञात या गर्हित कार्यकर्ता यक्ष को लेकर गाई है। महाकवि की अपनी जीवन में सच्ची घटित घटना और समय की शिला पर अंकित आत्मकथा है।

महाकवि कालिदास ने अपनी आत्मकथा को एक सुन्दर कथानक देकर मानव मात्र को सही शिक्षा देने के लिए ही लिखा है। अधिकार, सत्ता, पद, वरदान, प्रतिष्ठा, उच्च वंश में जन्म और सम्पत्ति पाकर कौन व्यक्ति उन्मत्त नहीं हो जाता है? और उन्मत्त होने से उसका विवेक नष्ट हो ही जाता है। ऐसी स्थिति में बड़ा से बड़ा शक्ति शाली, चतुर और बुद्धिमान् व्यक्ति भी प्रभावहीन होकर देव, दानव एवं मानव से कर्तव्यभ्रष्ट होने से दण्ड का भागी हो जाता है। इस प्रकार अपने किये गये कार्यों का फल उसे कठोर यातना के साथ सहना ही पड़ता है। अपराध या तो पूर्ण अवधि तक कष्ट में रहकर भोगना पड़ता है या पुण्य कृत्यों को करके या पवित्र तीर्थों का दर्शन, पावन नदियों के स्नान के प्रायश्चित से ही दूर हो सकता है। ईश्वर के यहां बिना भेदभाव के सभी के साथ न्याय होता है। इसे माया में लिप्त व्यक्ति समझे या न समझे।

यह अधिकार और कर्तव्य का सही निर्वाह न करने वाले प्रमत्त व्यक्ति के

---

१. कश्चित्कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारात्प्रमत्तः
शापेनास्तङ्गमितमहिमा वर्षभोग्येण भर्तुः।
यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु
स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु॥ पूर्वमेघ १ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लिए शापरूपी दण्ड है। जिसे एक निश्चित अवधि तक भोगना ही पड़ेगा। अतः इस श्लोक में यही बात झलकती है कि अधिकार पाकर व्यक्ति को प्रमत्त और नीति का कभी उलंघन नहीं करना चाहिए।

अपने पापों का सच्चे हृदय से प्रायश्चित करने के पश्चात् या क्षमा मांगने पर या अपराध स्वीकार करने पर या कठिन पद यात्रा करने पर व्यक्ति को अपने दारुण दुख को भूलने का कोई सम्बल अवश्य मिल जाता है। कालिदास को रामगिरि आश्रमों में बास करने पर पर्वतीय युवक होने से उस रामगिरि पर्वत पर उसे वर्षाऋतु के प्रारम्भ होते ही क्या दिखाई देता है :—

'वेचारा यक्षरूपी कवि अपनी पत्नी के विरह से इतना कृष हो गया था कि उसके हाथों के सौन्दर्यवर्धक सोने के कड़े गिर गये थे। ऐसी स्थिति में उस कामी यक्ष ने कुछ महीने रामगिरि पर्वत पर व्यतीत किये। आषाढ़ मास के प्रथम दिन उसने उस पहाड़ी की चोटी से लगे हुए मेघ को देखा, जो अपने दांतों के तिरछे प्रहार से मिट्टी उठाते हुए हाथी के समान दिख रहा था।'[१]

कवि पर्वतीय प्रदेश का है और रामगिरि भी पर्वतीय भूभाग में ही है। आषाढ़ के मास से पर्वतों में बादल वर्षा आने की सूचना देने लगते हैं। दूसरी ओर शाप की अवधि की ओर भी संकेत किया जा रहा है। यह धार्मिक मान्यता है कि विष्णु भगवान् आषाढ़ में सोते हैं और कार्तिक मास में हरि प्रबोधिनी एकादशी के दिन उठ जाते हैं।[२]

यक्षरूपी कवि का शाप भी कार्तिक के मास हरि प्रबोधिनी एकादशी के दिन समाप्त हो जायेगा। अपना सन्देश ही मेघ द्वारा भेजना कवि का मुख्य उद्देश्य है।

महाकवि कालिदास जन्म भू स्मारक समिति कविल्ठा के अध्यक्ष-ज्योतिर्विद; शास्त्री चैतराम भट्ट के पास मेघदूत की हस्तलिखित प्रति में 'प्रसर दिवसे' पाठ मिलता है। क्योंकि आठ मास ज्येष्ठ मास में पूरे हो गये हैं और कार्तिकमास की हरिप्रबोधिनी एकादशी ठीक चार मास के बाद पड़ेगी। अतः एक मास का इस प्रकार अन्तर पड़ता है। अतः प्रसर मास से आषाढ़ का तीसरा पक्ष लिया जाता है।

---

१. तस्मिन्नद्री कतिचिदबलाविप्रयुक्तः स कामी
नीत्वा मासान् कनकवलयभ्रंशरिक्तप्रकोष्ठः।
आषाढ़स्य प्रथमदिवसे मेघमाश्लिष्टसानुं
वप्रक्रीड़ापरिणतगजप्रेक्षणीयं ददर्श ॥ पूर्वमेघ २ श्लोक

२. शेते विष्णु सदाषाढ़े कार्तिकेय च प्रबुध्यते।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'डुबते व्यक्ति को तिनके का सहारा' की दृष्टि से रामगिरि पर्वत पर मेघ का दिखाई देना ही यक्षरूपी कवि को एक कार्य पूर्ति का सहारा मिल जाता है। कालिदास का पर्वतीय जीवन सामने आता है और मेघ को देखकर जब अच्छे-अच्छे लोग उल्लसित होने लगते हैं पुनः विरही लोग उसको देखते ही प्रिय के मिलन के लिए क्यों न आतुर होंगे ? मेघ को देखकर यक्षरूपी वियोगी कवि की मनस्थिति भी इसी प्रकार की हो जाती है :—

मानव के जीवन में मेघ का महत्त्व—कुबेर का सेवक वह यक्ष विरह के आंसुओं को रोककर अपनी प्रिया से मिलने की उत्कण्ठा को उत्पन्न करने वाले इस मेघ के समक्ष बड़े साहस से खड़ा होकर सोचता रहा कि वर्षाकाल के मेघ को देखकर तो सुखी व्यक्ति की भी काम-वासना जागृत हो जाती है, पुनः आलिंगन की कामना करने वाले दूरस्थ मेरे जैसे पत्नी वियोगी की क्या स्थिति होगी ?[1]

वर्षा ऋतु को यात्रा एवं शुभकार्यों में बाधक माना जाता है किन्तु किसानों, गर्मी से दुखी लोगों और वियोगी जनों के लिए यह अत्यन्त ही उपकारक है। ३ और ४ श्लोक मिलाकर ही कवि के हृदय के सही उद्गारों का बोध होता है। यक्षरूपी कवि आठ मास व्यतीत होने पर अधिक अधीर होकर सशंकित है कि इतने दिन में मेरी वियोगिनी प्रिया की क्या दशा हो गई होगी ?

आषाढ मास में तो मेघ आकाश पर घिरकर वर्षा ऋतु आने का संदेश, वर्षा प्रेमी चातक, मेढक, मोर, किसान और दूरस्थित विरही जनों को देता है कि श्रावण मास में भयंकर वर्षा आने वाली है। तुम्हारे दिन अब फिरने वाले हैं।

'श्रावण मास को अति सन्निकट आता देख अपनी प्रिया के प्राणों की रक्षा का इच्छुक यक्ष मेघ को दूत, बनाकर अपना कुशल समाचार भेजने की इच्छा से प्रसन्न होकर नवीन कुटज के फूलों में मेघ के लिए अर्घ आदि सामग्री दी और प्रेम भरे शब्दों में स्वागत करते हुए कुशल पूछी।[2]

---

१. तस्य स्थित्वा कथमपि पुरः कौतुकाधानहेतो
रन्तर्वाष्पश्चिरमनुचरो राजराजस्य दध्यौ।
मेघालेके भवति सुखिनोऽप्यन्यथावृत्ति चेतः
कण्ठाश्लेषप्रणयिनि जने किं पुनर्दूरसंस्थे ॥ पूर्वमेघ ३ श्लोक

२. प्रत्यासन्ने नभसि दयिताजीवितालम्बनार्थी,
जीमूतेन स्वकुशलमयीं हारयिष्यन् प्रवृत्तिम्।
स प्रत्यग्रैः कुटजकुसुमैः कल्पितार्घाय तस्मै,
प्रीतः प्रीतिप्रमुखवचनं स्वागतं व्याजहार ॥ पूर्वमेघ ४ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मेघ को सामने देखकर यक्षरूपी कवि को अपनी पत्नी के प्राणों की रक्षा का उपाय सूझा। मेघ को हिमालय की पर्वत माला में दूत के उपयुक्त समझकर ताजे फूलों से उसका स्वागत कर परिचय बढ़ाया। लोक नीति कहती है कि जिससे कार्य लेना होता है वह अपने से छोटा भी क्यों न हो किन्तु उसको पूर्ण रीति से स्वागत करके ही उसकी कुशलता पूछ कर कार्य लेना चाहिए। व्यवहार में धैर्य और प्रीति से ही कार्य बनते हैं। यक्ष तो धनपति कुबेर का निकटस्थ सेवक होने से घमण्डी भी हो सकता है किन्तु मेघ को अपनी आत्मकथा बताने वाला महाकवि कालिदास अधिक व्यवहार कुशल एवं पूर्ण नीति निपुण दिखता है। अपनी दारुण दुख भरी व्यथा को सुनाने के लिए और अपनी पत्नी के पास दूर हिमालय के केदारखण्ड की ऊँची पहाड़ियों में अपना सन्देश भेजने का कितनी कुशलता से उपक्रम बनाता है।

यदि महाकवि कालिदास ने हिमालय के केदारखण्ड में जन्म न लिया होता और अपने बाल्यकाल में उस भूमि में स्वच्छन्द विचरण न किया होता तो वह मेघदूत में मेघ को उत्तर दिशा में अपनी प्रिय जन्मभूमि में जाने के लिए कभी भी इस प्रकार मार्ग निर्देश न करता। इसके साथ ही अपने हृदय के मार्मिक भाव और गोपनीय रहस्यों को कभी भी न खोलता।

प्रायः सामान्य जनो में भी यह देखा जाता है कि वे अपने दारुण और असह्य दुख में एकान्त में गीत के द्वारा अपने दुखों को गाने लग जाते हैं। दुखी हृदय का व्यक्ति अपने सच्चे भावों की अभिव्यक्ति गीत के द्वारा कर ही देता है। हमारे लोक गीतों में भी विरही एवं प्रवासी जनों के हृदय के सच्चे भाव दिखाई देते हैं। महाकवि कालिदास ने अपने हृदय के सच्चे भावों को गीतिकाव्य मेघदूत के द्वारा अपनी सच्ची आत्मकथा को यक्ष को माध्यम बनाकर अभिव्यक्त किया है। अपने हृदय के सच्चे भावों की अभिव्यक्ति गेय पदों के द्वारा ही सम्यक् रूप से की जा सकती है। गीत में ही गायक महाकवि कालिदास ने मेघदूत गीतिकाव्य में अपने प्रवासी और शपित जीवन की मन्दाक्रान्ता छन्द में सुमधुर मन्दगति से हृदय के सच्चे भाव प्रकट कर ही दिए हैं। वास्तव में गीतिकाव्य आत्मकथा की सच्ची अभिव्यक्ति है। दूसरों की दारुण व्यथा को इस प्रकार कभी भी आत्मकथा का रूप नहीं दिया जा सकता है और यदि दिया जाता है तो अन्य पुरुष-कश्चित्-किसी यक्ष विशेष का माध्यम ग्रहण करके ही किया जाता है। जैसा भुक्त भोगी कालिदास ने किया है। आत्मकथा अपने जीवन की सच्ची गाथा को अभिव्यक्त करने का एक सही और उपयुक्त माध्यम है एवं गीतिकाव्य कवि के हृदय के सच्चे भाव हैं।

श्रद्धालु, शपित, प्रवासी, परवश और दुखी व्यक्ति भी अपने आराध्य से आत्म-निवेदन के द्वारा भी अपनी सच्ची दारुण व्यथा सुनाता है। महाकवि कालिदास

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भी उसी के आधार पर अपने आराध्य को प्रसन्न कर एक वर्ष से पूर्व ही शाप से विमुक्ति पा जाता है।

कवि का वैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक रूप—महाकवि कालिदास अपनी विद्वत्ता और अपने विविध विषयों की जानकारी का परिचय देता हुआ वैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सोचता है एवं प्रश्न करता है और स्वयं ही बुद्धिमत्ता पूर्ण पद्धति पर उत्तर भी देता है :—

'कहाँ तो धूम, प्रकाश, जल और वायु इन चेतना शून्य वस्तुओं के मेल से बना हुआ मेघ और कहाँ चतुर एवं समर्थ इन्द्रियों वाले प्राणियों के द्वारा पहुँचाने योग्य संदेश ? फिर भी विरह के मोह के कारण यक्ष ने इस बात पर विचार न कर मेघ से प्रार्थना की क्योंकि काम-वासना से पीड़ित लोगों में ऐसा सोचने की शक्ति नहीं होती है।[1]

कवि ने अपनी आत्मकथा में विरही लोगों की वास्तविक मनस्थिति का विश्लेषण किया है और अपनी बहुमुखी प्रतिभा का इसके साथ ही साथ अच्छा परिचय भी दिया है। कवि अपनी आत्मकथा लिखने में अपनी विद्वत्ता की दृष्टि से बुद्धि से पूर्ण जागरूक है परन्तु शरीर एवं मन से सामान्य जन की तरह अत्यधिक विरह जन्य दुख से दुखी भी है। अन्यथा मध्यप्रदेश के पर्वतीय भूभाग का दर्शन और उज्जैन के अधिपति की राज्य सभा में वाग्विदग्धता से कैसे कार्य करता ? सफल वक्ता और श्रोता दूसरों की चेष्टाओं का अभिनय करता है और देखता है किन्तु अपने वास्तविक स्वरूप को नहीं भूलता है।

वास्तव में सच्चा आत्मकथा लिखने वाला विद्वान् अपनी विद्वत्ता, अनुभव, बहुमुखी प्रतिभा एवं अपनी मानवीय दुर्बलताओं का भी स्पष्ट वर्णन कर ही देता है। अतः महाकवि कालिदास ने मेघदूत गीति काव्य के इस पाँचवें श्लोक में सच्ची आत्मकथा की दृष्टि से कुछ भी आश्चर्य पूर्ण तथा विरोधात्मक या असंगति युक्त विवेचन नहीं किया है। विद्वत्ता और आत्मकथा के रूप में इससे वास्तविकता ग्रहण की जा सकती है। महाकवि कालिदास ने अपनी जन्मभूमि में निवास करने वाली अनेक देवयोनियों का सिद्ध, गन्धर्व, विद्याधर, किन्नर और गुह्य व यक्षों का प्रसंग वश अधिक वर्णन दिया है किन्तु यक्ष एवं गुह्य को एक ही जाति के दो नाम माने हैं।

भिन्न-भिन्न पदार्थों के सन्निपात अर्थात् सम्मिश्रण से किस प्रकार वे एक विशेष रूप ग्रहण कर मानव जाति के लिए कल्याण कारक सिद्ध होते हैं। इसे भी अपने

---

१. धूमज्योतिः सलिलमरुतां सन्निपातः क्व मेघः
सन्देशार्थाः क्व पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः।
इत्यौत्सुक्यादपरिगणयन् गुह्यकस्तं ययाचे
कामार्त्ता हि प्रकृतिकृपणाश्चेतनाचेतनेषु ॥ पूर्वमेघ ५ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भौतिक और रसायन शास्त्र के ज्ञान का सूक्ष्म परिचय देकर महाकवि कालिदास ने अपनी आत्मकथा में अपने चिन्तन का वैशिष्ठ्य भी व्यक्त किया है। मेघदूत में अपनी हृदय की व्यथा को अपने एक नारीव्रत, अपने जीवित होने और शीघ्र शाप से विमुक्ति पाने का सन्देश देते हुए चेतन तथा अचेन के स्वभावों एवं स्वरूप का सही वर्णन करना भी कवि का एक उद्देश्य था। उस युग में कविता एवं महाकाव्य को ही प्रभावोत्पादक माना जाता था। अतः कालिदास ने भी उसका आश्रय लिया है।

अपनी आत्मकथा को लिखते हुए महाकवि कालिदास ने लोक नीति की दृष्टि से अपनी वाक् पटुता से दूसरों को किस प्रकार प्रोत्साहित करके और उनके वंश परम्परागत गुणों की याद दिलाकर प्रशंसा करते हुए उन्हें सच्चाई से विश्वास पात्र बनाकर कैसे कार्य लिया जाता है इसे मेघदूत में इस प्रकार बताया है :—

लोक व्यवहार और कार्य लेने की विधि —'हे मेघ। तुम पुष्परावर्तक नाम विश्वविख्यात मेघों के वंश में उत्पन्न हुए हो, तुम अपनी इच्छा के अनुरूप रूप धारण कर सकते हो और देवराज इन्द्र के प्रधान सेवक हो, यह सब तुमको मैं अच्छी प्रकार से जानता हूं। इसीलिए दुर्भाग्य से अपनी प्रिया एवं बन्धुओं से मैं दूर बिछड़ा हुआ तुम से कुछ प्रार्थना कर रहा हूं क्योंकि गुणवान् — मानव से की गई याचना निष्फल होने पर भी अच्छी है किन्तु निर्गुणी से प्राप्त भिक्षा भी अच्छी नहीं।'[1]

इस श्लोक में यक्षरूपी महाकवि कालिदास ने अपनी आत्मकथा के विषय में मेघ को कितने सही रूपमें कह दिया कि मैं—विधिवशात् दूरबन्धुर्यतोऽहं' दुर्भाग्य से मैं अपनी प्रिया और भाई-बन्धुओं से दूर बिछड़ा हुआ हूं। यक्ष को अपने स्वामी एवं कवि कालिदास को सार्थक वाणी को देने वाले शिव-पार्वती के शाप से प्रिय एवं निकटतम जनों का दूर रहकर दुख भोगना पड़ रहा है। इससे यह स्पष्ट होता है कि वह केदारखण्ड से ही शाप के कारण रामगिरि गया था। मेघ की प्रमुख चार जातियों और वंशावली का भी यक्षरूपी कवि को विस्तृत ज्ञान है। मेघ इच्छा के अनुरूप, रूप भी धारण कर सकता है।

महाकवि कालिदास ने लोक व्यवहार को अपनी आत्मकथा के द्वारा अपने पाठकों को अपने ज्ञान एवं अनुभवों से सटीक युक्तियों के द्वारा उदाहरण देकर समझाया है। वास्तव में स्वाभिमानी व्यक्ति को अपनी वाणी का उपयोग वहीं

---

१. जातं वंशे भुवनविदिते पुष्करावर्तकानां
जानामि त्वां प्रकृतिपुरुषं कामरूपं मघोनः।
तेनार्थित्वं त्वयि विधिवशाद् दूरबन्धुर्गतोऽहं
याच्ञा मोघा वरमधिगुणे नाधमे लब्धकामा ॥ पूर्वमेघ ६ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करना चाहिए जहां वह व्यर्थ न जाए[1] और संकट पड़ने पर भिक्षा किसी उदार गुणज्ञ से ही मांगनी चाहिए क्योंकि मांगने में छोटा बनना पड़ता है, सम्मान खोना पड़ता है, दीन-हीन होना पड़ता है, जो मरने के समान है तथा नीच व्यक्ति भिक्षा देने पर भी प्रदर्शन करता है, सर्वत्र गाता फिरता है और समय आने पर अपमानित भी कर देता है। अतः भिक्षा किसी अच्छे वंश के संस्कारी और उदार व्यक्ति से ही मांगनी चाहिए। जिससे स्वाभिमानी व्यक्ति की प्रतिष्ठा पर आघात न लगे और स्वाभिमान की भी रक्षा हो सके।

याचना करने में कालिदास ने स्वाभिमानी व्यक्ति के मान-अपमान का अत्यधिक ध्यान रखकर कार्यसिद्धि के लिए तथ्यपूर्ण युक्तियां बताई हैं। महापुरुषों की आत्मकथाओं और अनुभवों से लाभ उठाने वाला एवं आचरण करने वाला व्यक्ति कभी भी जीवन में दुखी नहीं रह सकता है। मानव युक्ति, नीति लोक व्यवहार न जानने पर ही तथा कुपात्र से भिक्षा मांगने और कुपात्र को भिक्षा देने के लिए महान् व्यक्तियों की सच्ची आत्मकथाएं पढ़ी जाती हैं और उनकी संगत भी की जाती है। जो संकटों से संघर्ष कर चुका है, गरीबी देख चुका है और स्वाभिमान से जीना जानता है, वही व्यक्ति निस्वार्थ भाव एवं सच्चे हृदय से दूसरों की सेवा तथा सहायता कर सकता है। अपने स्वार्थ में हजारों दूसरों से काम लेना और सहायता करना अच्छी प्रकार से जानते हैं।

सचमुच आत्मकथा अपने दोषों को दूर करने पाप को धोने, अपना सही परिचय देने, सत्यवादी बनने, दूसरों को सत्य पथ प्रदर्शन करने, अपना भविष्य सुधारने और सच्चा मानव बनने के लिए ही लिखी जाती हैं। आत्मकथा एक प्रकार से व्यक्ति के जीवन का एक आदर्श इतिहास होता है जिससे उसके जीवन का सही मूल्यांकन किया जाता है और उसके युग का सही आकलन होता है एवं उसके सही स्वरूप का परिचय मिलता है।

मेघ दुखियों और प्यासों का सहारा है उपकारी पुरुष का उपकार के हेतु सभी उसके गुणों की भूरी-भूरी प्रशंसा करते हैं। व्यवहार कुशल व्यक्ति अपने काम को सोच-समझकर ही कहता है। कालिदास रूपी यक्ष भी अपने कथानक के अनुरूप यक्षों के निवास स्थान अलकापुरी की ओर जाने का मेघ को इस प्रकार संकेत करता है :—

'हे मेघ ! तुम धूप और विरह से तपे हुए प्राणियों को शरण देने वाले अर्थात् आश्रय देकर उनकी रक्षा करने वाले हो, मैं धनपति कुबेर के क्रोध से प्रिया से बिछुड़ा हुआ हूँ। मेरे सन्देश को मेरी पत्नी के पास पहुंचा दो तुम्हें उस यक्षों से सम्पन्न अलका नाम की नगरी में जाना है, जहां के भवन पड़ोस में रहने वाले

---

१. वचस्तत्र प्रयोतव्यं यत्रोक्तं लभते फलम्।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बाहर कैलास के उद्यान में शिव के मस्तक पर वास करने वाले चन्द्रमा की किरणों से सदा स्वच्छ रहते हैं।'[१] यश, पुण्य और स्वच्छता की प्रतीक श्वेत वस्तु हैं। सफेदी भी उसका रूप है। यक्षरूपी कवि ने अपने मन की सच्ची बात, अपनी जन्म भूमि का एक ऐतिहासिक क्रम से परिचय देकर अपनी आत्मकथा को लिखा है। अपने यौवन काल के संस्मरणों को कवि बड़ी ही सचाई से अपनी आत्मकथा के रूप में अभिव्यक्त करता है अलका यक्ष की नगरी है और महाकवि का घर केदारखण्ड की पहाड़ियों से सटा हुआ अति निकट का भूभाग है। यहां आज भी गांवों में यक्षों के जाखरूपी घर हैं। जैसा कि महाकवि कालिदास के गांव कविल्ठा में भी है।

पानी-प्यासे, सन्तप्त, किसान और स्वाभिमानी व्यक्ति के जीवन के लिए अत्मावश्यक माना गया है। पानी के विना सब कुछ सुना है। अतः कवि ने पयोद शब्द का प्रयोग किया है और उसके उपकारी स्वभाव का वर्णन कर उससे अपनी व्यथा कहकर सन्देश को पहुंचाने के लिए गन्तव्य स्थान बताया है। इसके साथ अपने स्वाभिमान को रखते हुए यक्षेश्वर की नगरी अलका, कैलास और शिव के नाम को बताकर अपनी भी प्रतिष्ठितों के साथ प्रतिष्ठा के लिए परिचय दिया है।

कवि अपना परिचय शिव के निवास स्थान कैलास और उस युग की प्रसिद्ध नगरी अलका के निकट के भूभाग का होने के कारण अलका से ही अपना उसके विख्यात और विशाल होने से अपना भी निकट होने का सम्बन्ध दिखाता हैं। प्रायः ऐसा देखा जाता है कि व्यक्ति अपना परिचय देती बार अपने निकट के सुप्रसिद्ध स्थान का ही विशद वर्णन कर कहने लगता है कि मै अमुक स्थान का हुं। क्योंकि उस प्रसिद्ध स्थान के निकट ही उसका निवास स्थान हैं। प्रायः लोक व्यवहार में ऐसा देखा जाता है जैसे—जिला गढ़वाल को अधिक लोग नहीं जानते। अतः चारों गढ़वाल का आदमी अपना परिचय देता है कि मैं हिमालय उत्तराखण्ड या बद्रीनाथ, केदारनाथ या गंगोत्री-यमुनोत्री का रहने वाला हूँ। इस पर भी कोई नहीं समझ पाता तो अपना परिचय देता है जहाँ से गंगा जी आ रही हैं, मैं वहीं का रहने वाला हूँ। कोई काशी के निकट के स्थान का रहने वाला व्यक्ति भी अपना परिचय देती बार कहता है कि मैं काशी का रहने वाला हूँ ? क्योंकि उसके स्थान से काशी निकट और प्रसिद्ध है। अतः सानिध्य और ख्याति का

---

१. संतप्तानां त्वमसि शरणं तत्पयोद प्रियायाः
सन्देशं मे हर धनपविक्रोधविश्लेषितस्य।
गतव्या ते वसतिरलका नाम यक्षेश्वराणां
बाह्योद्यानस्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधौतहर्म्या ॥ पूर्वमेघ ७ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सम्बन्ध दिखाने के लिए भी ऐसा प्रयोग किया जाता है। यक्षरूपी कवि ने भी इसी पद्धति से अपना परिचय दिया है।

महाकवि कालिदास इतनी भूमिका अपनी अलका नगरी की ओर जाने का संकेत कर शाप के कारण रामगिरि आश्रम में बिछुड़ कर रहने का कारण बताया है। यह वियोगजन्य दुख की ही गाथा और कथा नहीं अपितु सच्ची आत्मकथा भी है। कवि ने अपनी ही सही स्थिति व्यक्त नहीं की है अपितु अपनी नारी की भी सही स्थिति बताकर अपना वास्तविक परिचय भी दिया है। पहले मेघ के वंश का परिचय और उकके उपकारी स्वरूप का वर्णन कर शिव की कृपा से सौम्य है जो नगरी उस नगरी में ही तुम्हें मेरा सन्देश लेके जाना है। कालिदास का ग्राम कविल्ठा शिव और शक्ति की कृपा से ही वैभवपूर्ण भी था।

मेघ उपकारी तो है ही किन्तु आकाश में उसके उमड़ने पर प्रवासी जनों की पत्नियाँ उसे बड़ी ही उत्कण्ठा से देखेंगी। प्रायः उस युग में सभी प्रवासी वर्षा के आरम्भ होते ही अपने घर आ जाते थे। केवल पराधीन व्यक्ति ही स्वच्छन्दता से नहीं आ सकता था। इससे कालिदास की शाप की अवधि और विक्रमादित्य की राजसभा में आजीविका में लगे रहने का भी सही संकेत मिलता है :—

'हे मेघ! जब तुम आकाश में चढ़ जाओगे, ऐसी स्थिति में विदेश गये हुए लोगों की पत्नियों को अपने-अपने पतियों के घर लौट आने का विश्वास हो जायेगा और वे निश्चिन्त होकर अपने खुले हुए बालों को ऊपर उठाकर तुम्हें निहारेंगी क्योंकि तुम्हारी घनघोर घटा के आने पर अपनी विरहिनी भार्या की कौन उपेक्षा करेगा? जब तक मेरे समान किसी की आजीविका दूसरों के अधीन न हो।'[1]

शाप ग्रस्त और पराधीन जीवन का कवि ने सही वर्णन किया है। 'पराधीन सपने सुख नाहीं'। व्यापार को इसीलिए नौकरी से अच्छा माना गया है—क्योंकि साल में एक बार वर्षाकाल में धन एकत्रित कर प्रवासी व्यक्ति अपने घर तो जा हो सकता है किन्तु नौकरी में लगा हुआ पराधीन व्यक्ति कैसे जा सकता है? जब तक आश्रयदाता स्वामी की इच्छा न हो। आज के वैज्ञानिक युग में भी हवा के विपरीत होने पर हवाई जहाज चलने बन्द हो जाते हैं किन्तु कवि मेघ की शुभ यात्रा का वर्णन कर रहा है कि तुम्हारी यात्रा में वायु अनुकूल, मोर आदि पक्षियों का बोलना और बगुलों की स्त्रियों का कतार बनाकर तुम्हारे पास आना। ये तुम्हारी यात्रा के शुभ सूचक हैं :—

१—त्वामारूढं पवनपदवीमुद्गृहीतालकान्ताः,
प्रेक्षिष्यन्ते पथिकवनिताः प्रत्ययादाश्वसन्त्यः।
कः सन्नद्धे विरहविधुरां त्वय्युपेक्षेत जायां
न स्यादन्योऽप्यहमिव जनो यः पराधीनवृत्तिः॥ पूर्वमेघ ८ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'यात्रा के समय वायु तुम्हारे अनुकूल होकर धीरे-धीरे तुम्हें आगे बढ़ा रहा है, प्रसन्न हुआ चातक तुम्हारे बाईं ओर मधुर शब्द बोल रहा है और गर्भाधान का समय जानकर आकाश में पंक्ति बनाकर उड़ती हुई बगुलों की स्त्रियाँ पास आयेंगी।'[१]

भौगोलिक, शकुन शास्त्र, ज्योतिषशास्त्र और प्राकृतिक परिस्थिति का महाकवि कालिदास को अच्छा ज्ञान था। प्रकृति की गोद में पला हुआ कवि ही इतना सूक्ष्म विवेचन कर सकता हैं और ऋतुओं की स्थिति के विषय में भी भली-भाँति जानता है। तभी वह मेघ की यात्रा का मुहूर्त निकालकर ही उसे हवा को अनुकूल जानकर ही भेजता हैं।

महाकवि कालिदास ने एक छोटे से गीतिकाव्य को अपने जीवन से जोड़कर और अपने अनुभवों के आधार पर ही अपनी आत्मकथा के रूप में मेघदूत गीतिकाव्य की रचना की है। इस गीतिकाव्य की कथावस्तु से प्रत्येक पाठक प्रभावित हुआ है और मानव की सही मनोवृत्तियों का विश्लेषण करने पर सभी ने महाकवि की भूरी-भूरी प्रशंसा की है किन्तु उस विश्वकवि की आत्मकथा की दृष्टि एवं जन्मभूमि के प्रति स्नेह को बहुत कम लोगों ने देखा है अन्यथा जन्मभूमि की भ्रमात्मक और काल्पनिक धारणाएँ स्वतः ही समाप्त हो जाती। कवि ने मेघदूत गीतिकाव्य के प्रारम्भ में ही अपने विरही जीवन की सही घटनाएँ व्यक्त कर सुरम्य स्वरों में गाई हैं। वह अपने सन्देश को अपनी जन्मभूमि में अपनी चिन्तित दुखी और विरहिणी पत्नी के पास शीघ्रता से भेजने के लिए आतुर है। स्वयं कवि अपने हृदय की मर्मस्पर्शी भावनाओं को व्यक्त करता है और ही युक्ति संगत समाधान भी बताता है। व्यक्ति को व्यवहार कुशल बनाने के भी अनेक प्रसंग दिखाते हैं।

आशा ही दुख का सही सम्बल होता है——प्रेमियों के हृदय के सही भावों और विरहिणी की मनस्थिति का भी सटीक वर्णन इस प्रकार किया है :—

'हे मेघ! यदि तुम कहीं रुके बिना मेरी नगरी अलका में पहुंचोगे तो जीवित पतिव्रता भाभी को तुम शाप की अवधि के दिन गिनते हुए अवश्य देखोगे क्योंकि नारियों का हृदय फूल के समान कोमल, प्रायः शीघ्र टूटने वाला और प्रेम

१—मन्दं मन्दं नुदति पवनश्चानुकूलो यथा त्वां
वामश्चायं नदति मधुरं चातकस्ते सगन्धः।
गर्भाधानक्षणपरिचयान्नूनमाबद्धमालाः,
सेविष्यन्ते नयनसुभगं खे भवन्तं बलाकाः॥ पूर्वमेघ ९ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से परिपूर्ण रहता है। बियोग के समय आशारूपी बन्धन ही उन्हें रोके रहता है।'[1]

दुखी व्यक्ति यदि दुख में धैर्य से कार्य ले तो उसके कठिन से कठिन कार्य भी भी बन जाते हैं। कवि ने सन्देश देने वाले को जब अच्छी प्रकार से देख लिया एवं समझ लिया तभी उससे अपना घनिष्ट सम्बन्ध भी स्थापित किया है। छोटा भाई बनाने से आज्ञा पालन, उत्साह से कार्य होने और अक्षरशः सन्देश सुनाने की आशा बलवती हो जाती है। छोटा भाई प्रेम, सम्मान और प्रोत्साहन पाकर शीघ्रता, सौम्यता एवं शालीनता से कार्य का सम्पादन अच्छी प्रकार करके दिखाता है। प्रायः विश्वासी निकटतम प्रिय जन ही कार्य सिद्धि में अधिक उपयोगी होते हैं। मानव के जीवन में आशा ही सबसे बड़ा सम्बल होता है जिसमें संघर्ष करता हुआ व्यक्ति हताश नहीं होता है। यक्षरूपी कवि को अपनी पत्नी की मनस्थिति का अच्छा ज्ञान है और शाप की अवधि को गिनना ही उनका सबसे बड़ा सहारा है, क्योंकि सुखद भविष्य की आशा से ही मानव दुख के दिन काट लेता है। यक्ष को अपनी पत्नी के आचरण पर अत्यधिक विश्वास है और उसकी प्राण रक्षा की भी उसे अधिक चिन्ता है। तभी वह शीघ्रगामी मेघ को इस कार्य के लिए उपयुक्त समझ कर उसे बड़े ही शिष्टाचार, अनुनय एवं विनय से तैयार करता है।

यात्रा में मार्ग का ज्ञान, थकने पर विश्राम स्थलों का ध्यान, भूख लगने पर भोजन का प्रबन्ध और सुखद यात्रा के लिए अच्छे-साथी का होना आवश्यक माना गया है क्योंकि किसी अच्छे संग से दूर की दुर्गम यात्रा भी कठिन प्रतीत नहीं होती है। अपनी आत्मकथा में बड़ी ही सूक्ष्म दृष्टि से अपनी जन्मभूमि के स्थानों का कालिदास ने अपनी पूर्व अनुभूतियों के आधार पर स्पष्ट वर्णन किया है। जिन लोगों ने धार्मिक यात्री, जिज्ञासु और भ्रमणार्थी बनकर हरिद्वार, ऋषिकेश, देवप्रयाग, कीर्तिनगर, श्रीनगर, रुद्रप्रयाग, अगस्तमुनि, गुप्तकाशी, कालीमठ, कविल्ठा, गौरीकुण्ड और केदारनाथ तक केदारखण्ड के दर्शन किये हैं, उन्हें मेघदूत, कुमारसम्भव एवं रघुवंश के बहुत सारे सर्गों का वर्णन सही प्रतीत होगा। महाकवि कालिदास ने यक्ष का कथानक लेकर अपने जीवन से घटित घटना को उससे जोड़कर उसे गीतिकाव्य का रूप देकर अपनी बहुमुखी प्रतिभा से मानव जीवन की शाश्वत घटने वाली घटनाओं को मर्मस्पर्शी काव्य के सौन्दर्यमय चमत्कृत रूप में अभिव्यक्त किया है। यह सब हिमालय के उत्तराखण्ड की केदारघाटी के दृश्यों को देखकर ही सही समझ में आ सकता है।

---

१ —तां चावश्यं दिवसगणनातत्परामेकपत्नी
मव्यापन्नामविहतगतिर्द्रक्ष्यसि भ्रातृजायाम्।
आशाबन्धः कुसुमसदृशं प्रायशो ह्यङ्गनानां
सद्यः पाति प्रणयि हृदयं विप्रयोगे रुणद्धि।। पूर्वमेघ १० श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ लेखकों का विचार ऐसा भी है कि मेघदूत सर्वथा कल्पना-प्रसूत ही है किन्तु यह नहीं माना है कि यह शाप, ताप और पाप जन्य महाकवि कालिदास की आपबीती सही घटना आत्मकथा के रूप में है। आज तो अब कई चिन्तन शील प्रबुद्ध विद्वान् यह स्वीकार करने लगे हैं कि वास्तव में मेघदूत कालिदास के जीवन से घटित घटना अवश्य हो सकती है। जिसे सही रूप में हमने कालिदास की आत्मकथा कह कर यह वर्णन किया है। वर्षाकाल में मेघ के गर्जन से कई चीजें उत्पन्न होती हैं। पुनः बरसने पर तो कहना ही क्या :—

'हे मेघ तुम्हारी जिस गर्जन से शीलोंध्र (च्यूं सफेद-सफेद छतरी के रूप में कुकर मुत्ते) उग जाते हैं, तुम्हारी कानों को सुख देने वाली गर्जन को सुनकर मानसरोवर को जाने के लिए उत्सुक एवं कलेवा के लिए मृणाल के टुकड़ों को ले जाने वाले राजहंस आकाश में कैलास पर्वत तक तुम्हारा साथ देंगे।'[1]

मेघ की गर्जन एक ओर कुकरमुत्ते को जन्म देती है तो दूसरी ओर वर्षा आने का कर्ण मधुर स्वर से राजहंसों को मानसरोवर जाने की सूचना भी देती है। क्योंकि वर्षाकाल में मानसरोवर को छोड़कर सर्वत्र पानी गंदा हो जाता है। अतः मेरी अलकानगरी तक तुम्हारे ये राजहंस भी साथी रहेंगे। यक्षरूपी महाकवि का भौगोलिक और प्राकृतिक ज्ञान कितना विस्तृत है और सही है। कवि का अपनी जन्मभूमि के प्रति तथा अपनी पत्नी के प्रति कितना आकर्षण है। यदि उसके हृदय में आकर्षण न होता और जन्मभूमि का विस्तृत परिचय न देना होता तो अपनी आत्मकथा के रूप में इस प्रकार का कभी भी कवि वर्णन न कर पाता।

मानव के हृदय की सच्ची मित्रता का भी कालिदास ने मेघ और रामगिरि पर्वत के साथ अच्छा सम्बन्ध जोड़ा है। कवि के सही विचारों का इस श्लोक में स्पष्ट वर्णन मिलता है कि वह मध्यप्रदेश का निवासी नहीं है क्योंकि वह अपनी प्रेयसी के पास सन्देश अलकापुरी भेज रहा है क्यों ? जो नगरी हिमालय के ऊतुंग-शिखर केदारखंड में ही है। कवि स्वयं अपनी विरह व्यथा को गरम आंसुओं के एवं सच्चे स्नेह को अभिव्यक्त कर रहा है और कृतज्ञतावश मित्र को मिलकर विदा मंगवा रहा है :—

'जिस रामगिरि आश्रमों की पर्वत श्रृंखला विश्वबन्ध राम के चरणों से पवित्र हो गई है, ऐसे इस ऊतुंग पर्वत से अलकापुरी जाते हुए विदा तो ले लो क्योंकि

---

१. कर्तुं यच्च प्रभवति महीमुच्छिलीन्ध्रातपत्रां
तच्छ्रुत्वा ते श्रवणसुभगं गर्जितं मानसोत्काः।
आकैलासाद्बिसकिसलयच्छेदपाथेयवन्तः
संपत्स्यन्ते नभसि भवतो राजहंसाः सहायाः॥ पूर्वमेघ ११ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रत्येक वर्षा ऋतु में इससे मिलने पर चिर विरह रूपी तुम्हारे गरम-गरम आंसू निकलते हैं उससे उसके प्रति तुम्हारा स्नेह प्रकट होता है।'[1]

कालिदास की जन्मभूमि – हिमालय के ऊतुंग शिखरों का निवासी कवि कालिदास अपनी आत्मकथा में अपना परिचय कितनी स्पष्टता से दे रहा है कि हे मेघ ! सर्वप्रथम मैं तुम्हें सन्देश देने से पूर्व अपनी जन्मभूमि में जाने का मार्ग बताता हूँ जिससे तुम्हें दिशा विभ्रम न हो और दूर की यात्रा में तुम थक न जाओ। अतः विश्राम करते-करते जाना और जल बरसाने से दुर्बल होने पर पर्वतीय पवित्र नदियों का स्वच्छ एवं रोगनाशक जल पीकर तुम स्वस्थ होकर आगे चलना। मार्ग निर्देशन के पश्चात् ही मैं तुम्हें अपना सन्देश सुनाऊंगा। मध्यप्रदेश के मालवा, विदिशा, अवन्ती या विशाला या उज्जयिनी, दशार्ण नगरियों और रामगिरि, आम्रकूट, विन्ध्यगिरि, देवगिरि पर्वत एवं रेवा, नर्मदा, वेत्रवती, निर्विन्ध्या, गन्धवती, गम्भीरा, चर्मण्वती नदियों का मेघदूत में अधिक वर्णन होने तथा विक्रमादित्य के आश्रय में महाकवि कालिदास के रहने से प्रायः स्वतन्त्रता से पूर्व कालिदास पर किसी भी रूप में लिखने वाले विद्वानों ने कालिदास को मालवा, अवन्ती और उज्जयिनी का मेघदूत के वर्णन के आधार पर वहाँ का ही निवासी माना है।

कुमारसम्भव, मेघदूत और शकुन्तला नाटक के अध्ययन के पश्चात् स्वतन्त्रता के बाद के लेखकों ने कालिदास को हिमालय का निवासी स्वीकार किया है और जिन लोगों ने महाकवि कालिदास द्वारा वर्णित स्थानों को देखा है वे उसे अब उत्तराखण्ड गढ़वाल का निवासी मानने लगे हैं। मेघदूत के सबसे अधिक श्लोकों में कालिदास की आत्मकथा का वर्णन है जिसमें वह रामगिरि आश्रमों में क्यों गया ? और वहीं अधिक समय तक क्यों निवास करता रहा ? मेघ को देखते ही उसे अपनी पत्नी के प्रति अपने कर्तव्य का ज्ञान, पत्नी का ध्यान होने लगा और वह मेघ से परिचय बढ़ाकर अपनी जन्म भूमि का मार्ग संदेश पहुँचाने के लिए क्यों बताने लगा ? सबसे अधिक वर्णन जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया गया है यही अपनी जन्म भूमि का सच्चा परिचय है। यातना भोगने, शाप से मुक्त होने, नदियों, पर्वतों, तीर्थस्थानों के दर्शन करने के पश्चात् ही महाकवि १ वर्ष से पूर्व कर्मभूमि उज्जयिनी के महाकाल, कुरुक्षेत्र, कनखल, हरिद्वार एवं ऋषिकेश, देवप्रयाग, श्रीनगर, रुद्रप्रयाग, गुप्तकाशी, कालीमठ होता हुआ शिव के पावन चरणों

१. आपृच्छस्व प्रियसखममुं तुङ्गमालिङ्गय् शैलं
वन्द्यैः पुंसां रघुपतिपदैरङ्कितं मेखलासु।
काले काले भवति भवतो यस्य संयोगमेत्य
स्नेहव्यक्तिश्चिरविरहजं मुंचतो वाष्पमुष्णम्॥ पूर्वमेघ १२ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की प्रदक्षिणा कराकर कविल्ठा ग्राम जन्मभूमि में पहुँचा देता है। ये शिव के चरण चिह्न की शिला कालीमठ और कविल्ठा के सामने की चोटी पर काली शिला के नाम से आज भी विख्यात है।

महाकवि कालिदास ने शिव और शक्ति का अपने काव्यों एवं नाटकों में अधिक वर्णन अवश्य किया है किन्तु वह बहुदेवतावाद का भी पक्षधर था। अपनी आत्मकथा का सही वर्णन करने वाले मेघदूत काव्य के प्रथम श्लोक में ही अपनी कथा तथा व्यथा और शाप से दूर होने का कारण पवित्र रामगिरि आश्रम को ही मान रहा है। १२वें श्लोक में मेघ को भी उस पवित्र पर्वत के प्रेम पूर्वक आलिंगन का लाभ बताता है। रघुपति के चरण चिह्नों से पवित्र है जो पर्वत उसे कालिदास ने अधिक महत्त्व दिया है और उसके चरणों के दर्शन से स्वयं पूर्वार्जित शक्ति पा गया तथा मेघ को भी अपनी दुःखी पत्नी के पास सन्देश पहुँचने की अचेतन होने पर भी चेतन प्राणी की तरह शक्ति दिला कर ही अपने उद्देश्य में पूर्ण सफल हो जाता है। रघुवंश महाकाव्य में महाकवि कालिदास ने अपनी रामभक्ति भी विस्तृत रूप में दिखाई है। वह ईश्वर की एक ही शक्ति को अनेक रूपों में मानता था। राम तो शिव के भी आराध्यदेव थे पुनः कालिदास के कैसे नहीं हो सकते थे ?

'मंगल भवन अमंगल हारी।
उमा सहित जेहि जपत पुरारी॥ (तुलसी—रामचरितमानस)

हिमालय के केदारखण्ड का निवासी महाकवि कालिदास अपनी आत्मकथा में सन्देशवाहक, छोटे भाई मेघ को सीता के स्नानों से पवित्र हुए आश्रमों के स्नान, दर्शन, वास एवं राम के चरणों से रामगिरि का समस्त भूभाग पवित्र मान कर ही शाप से मुक्त होता है और मेघ को सच्चा सन्देशवाहक बनवा देता है। इसीलिए आस्थावान् लोगों ने कहा है—'मूकं करोति वाचालं पंगु लंघयते गिरिम्।' 'मूक होय वाचाल पंगु गिरि चढ़े अंधे को सब कुछ दरसाई।' राम की कृपा से एवं नाम से जब समुद्र में पत्थर तैर सकते हैं तो कालिदास का मेघ राम की कृपा से सन्देश नहीं पहुँचा सकता है ? वास्तव में श्रद्धा और विश्वास ही सच्चे फल के देने वाले होते हैं।

गन्तव्य स्थान का मार्ग :—सन्देश से पूर्व कालिदास रूपी यक्ष अपनी आत्मकथा में गन्तव्य स्थान में जाने का मार्ग बताता है। मेघ को पर्वत चोटियों पर विश्राम कराता हुआ, जल बरसाता हुआ एवं नदियों का स्वास्थ्यवर्धक जल पीकर ही जाने का विवेचन किया है :—

'हे मेघ ! पहले मैं तुम्हें यात्रा करने योग्य मार्ग बताता हूँ। सुनो ! जिस मार्ग से चलते-चलते थकने पर उत्तराखण्ड के पर्वतों की चोटियों पर विश्राम

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करते हुए तथा अनेक स्थानों पर पानी बरसाने से दुर्बल हुए तुम नदियों से हलका स्वच्छ पानी लेकर चलोगे। इसके पश्चात् कानों को आनन्द देने वाला मेरा सन्देश सुनोगे।'[1]

कवि अपनी आत्मकथा में कहाँ का गन्तव्य स्थान बता रहा है? अपनी कर्मभूमि के पर्वतों और नदियों का लाभ लेकर कुरुक्षेत्र के आगे उत्तराखण्ड की पर्वत श्रेणियों, अनेक पवित्र नदियों का जल पीकर एवं जल बरसा कर सुखद सन्देश को पहुँचाने का अपनी आत्मकथा द्वारा सुन्दर उपक्रम करता है। महाकवि कालिदास को मेघ को उत्तर दिशा या उत्तराखण्ड का मार्ग बताने में सबसे अधिक रुचि क्यों है? उत्तर दिशा का ही यह बार-बार स्मरण क्यों करता है? उत्तराखण्ड गढ़वाल के निवासी के अतिरिक्त कोई भी अन्य व्यक्ति केदारखण्ड की चोटियों से सटी अलकापुरी, शिव के पवित्र स्थान कैलास, पार्वती के पिता हिमालय के औषधिप्रस्थनगर और गौरी शिखर का इतना सजीव चित्र इतने सूक्ष्म निरीक्षण के साथ कभी भी वर्णन नहीं करता है। उज्जयिनी के भूभाग का तो देखकर या वहाँ रहकर कवि ने वर्णन भी किया है किन्तु उत्तराखण्ड का वर्णन कैसे जाना? क्योंकि उत्तराखण्ड की केदारभूमि में वहाँ वह बाल्यकाल से प्रकृति के दर्शन के साथ उन स्थानों को भी देखता रहा है।

उड़ते हुए मेघ को पर्वत समझ कर सिद्धों की नारियाँ तुम्हारी ओर इस प्रकार से देखेंगी :—

'किसी पहाड़ की चोटी को क्या वायु उड़ा कर ले जा रहा है? ऐसा सोच कर सिद्धों की सीधी और भोली-भाली स्त्रियाँ ऊपर को मुख करके अत्यन्त आश्चर्य से तुम्हारे उत्साह को देखेंगी। रस वाले निचुल बेंतों से युक्त इस रामगिरि से दिशाओं के हाथियों के सूड़ों की मार से बचते हुए तुम उत्तर दिशा की ओर मुख करके आकाश में उड़ जाओ।'[2]

इस श्लोक में कालिदास ने सिद्धों का भी वर्णन किया है इन्हें देवभूमि गढ़वाल में देवयोनि में गिना जाता है। पिशाच गुह्यकः, सिद्ध, भूत इन्हें देवयोनि

---

१. मार्गं तावच्छृणु कथयतस्त्वत्प्रयाणानुरूपं
सन्देशं मे तदनु जलद श्रोष्यसि श्रोत्रपेयम्।
खिन्नः खिन्नः शिखरिषु पदं न्यस्य गन्तासि यत्र
क्षीणः क्षीणः परिलघु पयः स्रोतसां चोपभुज्य॥ पूर्वमेघ १३ श्लोक

२. अद्रेः शृङ्गं हरति पवनः किंस्विदित्युन्मुखीभि–
र्दृष्टोत्साहश्चकितचकितं मुग्धसिद्धाङ्गनाभिः।
स्थानादस्मात्सरसनिचुलादुत्पतोदङ्मुखः खं
दिङ्नागानां पथि हरिहरन् स्थूलहस्तावलेपान्॥ पूर्वमेघ १४ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में गिना जाता है।[1] वास्तव में उत्तराखण्ड की देवभूमि में पूर्व वर्णित अनेक देवयोनि में गिनी जाने वाली जातियाँ निवास करती रही हैं। जिनके अस्तित्व को कालिदास ने अपने ग्रन्थों में मान्यता दी है। ये देवजातियाँ किसी पर प्रसन्न होकर उसे सिद्धि भी दे देती हैं। गढ़वाल में कई लोगों को पिशाचिनी, गुह्यनि, भूतनि या भूत सिद्ध आदि सिद्धि के रूप में मिलते हैं और उन्हें कार्य सिद्धि के रूप में कुछ चमत्कार भी दिखा देते हैं। जिससे ऐसे लोग अपनी इन सिद्धियों से अपने जीवन में अनेक लाभ उठाते रहते हैं किन्तु जीवन के अन्तिम भाग में शारीरिक अनेक कष्ट पाते देखे गये हैं।

इनमें गुह्यक और सिद्ध ही श्रेष्ठ माने जाते हैं। यक्षों को गुह्यक भी कहा जाता है। भूत, पिशाच मानव को हानि भी पहुँचाते हैं किन्तु जो विशेष मन्त्र ज्ञाता होते हैं वे इन्हें वश में करके इनसे अनेक कार्य भी करा लेते हैं। इनके उत्तराखण्ड में अनेक उदाहरण मिलते हैं और भूतों की अनेक कहानियाँ आज भी लोगों के जीवन से जुड़ी हैं।

प्रायः यह भी देखा जाता है कि अतृप्त, अपमृत्यु, विष देकर और प्राणघात के द्वारा मरे लोग भूत योनि में जन्म लेकर अपना बदला लेते हैं। भूत अतृप्त व्यक्ति की भटकती आत्मा है। भागवत के माहात्म्य में धुन्धकारी को प्रेतयोनि में देखा गया है।[2]

निचुल और दिङ्नागाचार्य—इस श्लोक में दो शब्द अधिक शंका एवं चर्चा के विषय बने हुए हैं। निचुल और दिङ्नागाचार्य। सर्वप्रथम महाकवि कालिदास की भावनाओं के अनुकूल इसमें 'संयोगो विप्रयोगाश्च साहचर्यं विरोधिता' से भी विचार करना चाहिए। कवि का उद्देश्य रामगिरि आश्रम से मेघ को उत्तराखण्ड-केदारखण्ड के पर्वतों के निकट अलका में भेजना है। यह रामगिरि पर्वत पर सरस निचुल का वर्णन है। निचुल बेंत का एक प्रकार का पौधा माना गया है किन्तु टीकाकारों और कीथ जैसे लोगों ने निचुल नामक कवि को कालिदास का मित्र माना है। जबकि प्रसंग से यह अर्थ श्लोक के साथ ठीक नहीं बैठता है। कहाँ निचुल नाम रामगिरि आश्रमों में पाया जाने वाला पौधा है और कहाँ उसे व्यक्ति विशेष से जोड़ा गया है। जो युक्ति संगत नहीं है। दूसरी ओर दिङ्नाचार्य का अर्थ दिशाओं के हाथी से ही लिया गया है क्योंकि प्रायः गज मेघ को देखकर अपनी सूँड़ इधर-उधर पटकते हैं। मेघ को देखकर दिशाओं के हाथी भी ऐसा कर सकते हैं। अतः कालिदास मेघ को सतर्क कर रहा है कि दिङ्नागों से

---

१. 'पिशाचो गुह्यकः सिद्धो भूतोऽमी देवयोनयः।' अमरकोष

२. विशेष अध्ययन के लिए हमारी 'श्रीमद्भागवत और उसका बहुमुखी विकसित समाज' पुस्तक के पृष्ठ ४९ पर देखें —

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
दिशाओं के हाथियों से सावधान होकर उत्तर दिशा में जाना, किन्तु कुछ टीकाकारों ने बहुत बाद के निचुल और बौद्धधर्म में न्यायशास्त्र के प्रवर्तक और प्रमाण समुच्चय के लेखक दिङ्नागाचार्य जो बहुत बाद के हैं उससे तुलना की है जो उचित प्रतीत नहीं होती।[1]

कभी-कभी टीकाकार और भाष्यकार अपनी विद्वत्ता के कारण किसी श्लेषयुक्त शब्द पर अधिक लिख देते हैं। जिससे एक पक्षीय अध्ययन करने वाले लोग उसी भ्रम फैलाने वाले अर्थ में प्रयुक्त कर बैठते हैं। यहां दिशाओं के इन आठ १—ऐरावत, २—पुण्डरीक, ३—वामन, ४—कुमुद, ५—अंजन, ६—पुष्पदन्त, ७—सार्वभौम, ८—सुप्रतीक दिग्गजों को माना गया है। न कि बौद्ध दिङ्नागाचार्य को। दिशाओं के दिङ्नाग तो मेघ को क्षति पहुँचा सकते हैं किन्तु दिङ्नागाचार्य मेघ के मार्ग में क्या बाधा पहुँचा सकता है? महाकवि कालिदास से बौद्ध विचारक दिङ्नागाचार्य बहुत बाद में उत्पन्न हुआ है। अतः दिशाओं के दिङ्नागों को ही यहां लिखा गया है न कि बौद्ध न्याय के प्रवर्तक दिङ्नागाचार्य को।

यक्षरूपी कवि मेघ के आकाश में चलने पर उसके शरीर की कैसी शोभा हो जायेगी, इसका वर्णन कर रहा है :—

'अनेक रंगों वाली मणियों की किरणें आपस में मिल जांये, ऐसा देखने योग्य यह इन्द्र धनुष सामने बाम्बी (पर्वत शिखर) की चोटी से निकल रहा है। इस इन्द्र धनुष से तुम्हारा सांवला शरीर अत्यधिक शोभा को प्राप्त होगा जैसे कि मोर पंख लगा लेने से गोप वेषधारी कृष्ण का श्याम रूप चमक उठता था।'[2]

मानव के जीवन में अन्न का सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान है, अन्न कृषि पर निर्भर है और कृषि वर्षा पर ही आधारित है। किसान का मुख्य आधार पानी बरसाने वाला मेघ है। उसे तो खेतों में काम करनेवाली ग्रामीण महिलाएँ बड़ी ही उत्सुकता से देखती हैं। माल देश की कृषक बधुओं की मेघ के प्रति स्वाभावित दृष्टि को कवि ने इस प्रकार स्पष्ट किया है :—

'कृषक का कृषि करने का सम्पूर्ण फल तुम्हीं पर निर्भर करता है ऐसा समझ कर किसी प्रकार का आंख मटकाना आदि न जानती हुई भी भोली-भाली गाँव के किसानों की बहुएँ प्रेमभरी दृष्टि से तुम्हें देखेंगी। अतः तत्काल हल जोतने से

१—विशेष अध्ययन के लिए—मेरी प्राचीन राजवंश और बौद्ध पुस्तक को देखें पृष्ठ ३६४

२—रत्नच्छायाव्यतिकर इव प्रेक्ष्यमेतत्पुरस्ता-
द्वल्मीकाग्रात्प्रभवति धनुः खण्डमाखण्डलस्य।
येन श्यामं वपुरतितरां कान्तिमापत्स्यते ते
वर्हेणेव स्फुरितरुचिना गोपवेषस्य विष्णोः॥ पूर्वमेघ १५ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उभरी हुई मिट्टी की गन्ध वाले 'माल' नाम के क्षेत्र पर घूमकर पश्चिम की ओर मुड़ो, वहां बरसने से कुछ हलके होकर पुनः तीव्र गति से उत्तर दिशा की ही ओर चलो।'[१]

महाकवि कालिदास को उत्तर दिशा से अधिक प्रेम है क्यों? क्योंकि उत्तर दिशा में उत्तराखण्ड, केदार भूमि और अलकापुरी है। जो कि उसकी जन्मभूमि है जहाँ उसकी प्रेयसी है। जन्मभूमि के प्रति यह कवि का विशेष अनुराग है।

आम्रकूट पर्वत और उपकारी पुरुषों का वर्णन—महाकवि कालिदास ने अपने पाठकों को लोकनीति को बताया है। अच्छे लोग दूसरों का उपकार करते ही हैं। बुरा से बुरा व्यक्ति भी अपने आश्रय में आये हुए को सम्मान देता ही है फिर भले लोगों की तो बात ही क्या :—

'मूसलाधार वर्षा से वनाग्नि को शान्त करके तुम आगे बढ़ोगे तो रास्ते की थकावट से थका हुआ देखकर तुम्हे आम्रकूट पर्वत अपने शिखर पर विश्राम के लिए आश्रय देगा। नीच व्यक्ति भी अपने मित्र को आश्रय के लिए आया देखकर उसके द्वारा किये गये उपकारों का ध्यान रखकर उन्हें नहीं भूलेगा, पुनः आम्रकूट जैसे महान् की बात ही क्या।[२]

यक्षरूपी कवि ने अपनी आत्मकथा में अपनी जन्म भूमि का परिचय देती बार मेघ को वहाँ जाने का मार्ग और मार्ग में संतप्त, दुखी, भयभीत एवं इच्छुक आशावान् लोगों की आशाओं को पूर्ण करता हुआ विश्राम करते हुए जाने का मार्ग पड़ाव आदि का रामगिरि आश्रम से अलकापुरी तक का कितना सटीक और सजीव वर्णन किया है। यह सब महाकवि कालिदास ने पर्वतीय क्षेत्रका निवासी एवं मध्यप्रदेश के क्षेत्र में साधना, यश तथा अर्थ उपार्जन कर अपनी कर्मस्थली का भी अच्छा गुणगान किया है। यह कवि की अपनी कृतज्ञतायापन करने की एक अनूठी शैली है। कालिदास की आत्मकथा का जितना सही रूप मेघदूत गीति काव्य द्वारा अवगत होता है, उतना दूसरे किसी अन्य ग्रन्थ से नहीं, अन्य ग्रंथों में महाकवि कालिदास का काव्य सौष्टव, प्रौढ़ता और उत्तरोत्तर प्राजंल्यरूप अवश्य

१—त्वय्यायत्तं कृषिफलमिति भ्रूविलासानभिज्ञैः
प्रीतिस्निग्धैर्जनपदवधूलोचनैः पीयमानः।
सद्यः सीरोत्कषणसुरभि क्षेत्रमारुह्य मालं
किञ्चित्पश्चात् व्रज लघुगतिर्भूय एवोत्तरेण॥ पूर्वमेघ १६ श्लोक

२. त्वामासारप्रशमितवनोपप्लवं साधु मूर्ध्ना
वक्ष्मत्यध्वश्रमपरिगतं सानुमानाम्रकूटः।
न क्षुद्रोऽपि प्रथमसुकृतापेक्षया संश्रयाय
प्राप्ते मित्रे भवति विमुखः किं पुनर्यस्तथोच्चैः॥ पूर्वमेघ १७ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दिखता है किन्तु इतने क्रमबद्ध रूप में कवि की सच्ची अनुभूति दृष्टिगत नहीं होती है। हां अपनी जन्मभूमि के सुरम्य स्थानों के संस्मरण उसकी रचनाओं में यत्र-तत्र सर्वत्र अच्छी प्रकार से दिखाई देते हैं।[1]

महाकवि कालिदास ने मेघदूत में मध्यप्रदेश के भूभाग, वनों, नदियों और प्राकृतिक सुषमा का बड़ी ही सूक्ष्म दृष्टि से स्वाभाविक वर्णन किया है। प्रकृति प्रेमी कालिदास ने हिमालय में क्या नहीं देखा? किन्तु कृषि प्रधान क्षेत्र के किसानों की भावनाओं का भी अच्छा वर्णन किया है। किसानों की वधुएँ भी कृषि कार्य में किस प्रकार सहायक होती हैं और हल लग जाने के पश्चात् सभी अच्छी कृषि के लिए मेघ से पानी की प्रेमभरी दृष्टि से आशा करती हैं। कवि बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न भावुक और अपनी मानवीय मनोवृत्तियों के कारण कुछ अतृप्त भी है। जिससे मानवीय भावों से अपना भी एकीकरण करके स्पष्ट रूप में अभिव्यक्त कर ही देता है। मध्यप्रदेश में अधिक दिन तक विरही रूप में निवास करने और यत्र-तत्र नारी रूप एवं चेष्टाओं को भी निहारता रहता है :—

'स्त्रियों के सिर के बालों के समान काले रूप वाले तुम जब आम्रकूट पर्वत के शिखर पर चढ़ोगे तक चारों ओर से पके हुए जंगली आमों के वृक्षों से ढके होने के कारण चमकीला पीला-पीला रंग का वह पर्वत, पृथ्वी के स्तन की तरह अवश्य ही अत्यधिक शोभा को प्राप्त होगा। जिसे देखने देवता और उनकी दम्पत्तियाँ भी आयेंगे।'[2]

मध्यप्रदेश के भूभाग का वर्णन—महाकवि कालिदास ने मध्यप्रदेश के वनों में निवास करने वाली आदिवासी जनजातियों का भी अच्छा वर्णन किया है। मेघ को हल्के होने तथा नर्वदा के दर्शन करने के विषय में कहा है :—

'जिस आम्रकूट पर्वत की झाड़ियों में किरातादि बनवासियों की स्त्रियों ने आनन्द लिया है, ऐसे उस पर्वत पर कुछ देर रुक कर, पानी बरसा देने के कारण तुम हल्के होने से शीघ्रगामी होकर आगे नर्वदा नदी को देखोगे, जो विन्ध्यगिरि

---

१. विस्तृत अध्ययन के लिए हमारी 'कालिदास और उसका मानवीय साहित्य' पुस्तक देखें।

२. छन्नोपान्तः परिणतफलद्योतिभिः काननाम्रै-
स्त्वय्यारूढे शिखरमचलः स्निग्धवेणीसवर्णे।
नूनं यास्यत्यमरमिथुनप्रेक्षणीयामवस्थां
मध्ये श्यामः स्तन इव भुवः शेषविस्तारपाण्डुः। पूर्वमेघ १८ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के पत्थरों से ऊँची-नीची तलहटियों में फैली हुई ऐसी लगती है जैसे हाथी के शरीर में भस्म की रेखाओं से खण्ड जैसे बन गये हों।'[१]

स्वाभाविक रूप में मेघ पानी बरसा कर हल्का हो जाता है। अत: यक्षरूपी कवि उसे अपनी प्रेयसी के पास जाने का मार्ग बताता हुआ नर्मदा का पवित्र जल पीने का आग्रह कर रहा है. इससे नर्मदा के जल का महत्त्व और यात्री के लिए जैसे पाथेय (नाश्ता) आवश्यक है वैसे ही मेघ के लिए भी जल ले लेना आवश्यक है क्यों कि हल्के, शक्ति हीन एवं धन-हीन को सभी दिशा विहीन कर देते हैं। शक्ति युक्त या बलवान् को शीघ्रता से कोई पथभ्रष्ट नहीं कर सकता है। नर्मदा का पानी जामुन और हाथियों के मद से शक्ति दायक भी हो गया होगा :—

'आम्रकूट पर्वत पर बरस जाने से तुम खाली होने पर कड़वे स्वाद वाले वनगजों के मदजल से सुगन्धित जामुन की झाड़ियों से रोका गया है जल जिसका ऐसी रेवा के जल को लेकर चलना। हे मेघ! क्योंकि जल भर लेने से तुम भार युक्त हो जाओगे पुन: तुम्हें हवा इधर-उधर नहीं हटा सकेगी। प्राय: प्रत्येक खाली वस्तु हल्की और भरी हुई भारी हो जाती है।'[२]

हे मेघ। पपीहे तुम्हें मार्ग बताने का काम करेंगे—

'अधखिले केसरों से कुछ हरे एवं कुछ धूसर रंग के कदम्ब को और नदियों या तालाबों के किनारे-किनारे प्रथम बार जिनमें कलियाँ दिख रही हैं ऐसी कन्दलियों को देखकर एवं वन की आग से जलाये हुए जंगलों में पानी पड़ने से उत्पन्न अच्छी गन्ध को सूंघ कर पपीहे जल बरसाने वाले तुम्हें मार्ग की सूचना देंगे।'[३]

हे मेघ! तेरी गर्जन ने सिद्ध लोग भी तेरी प्रशंसा करेंगे :—

'पानी की बरसती हुई बूंदों को मुख से पकड़ लेने में चतुर चातकों को पंक्ति

---

१. स्थित्वा तस्मिन्वनचरवधूभुक्तकुञ्जे मुहूर्तं
तोयोत्सर्गद्रुततरगतिस्तत्परं वर्त्म तीर्णः।
रेवां द्रक्ष्यस्युपलविषमे विन्ध्यपादे विशीर्णां
भक्तिच्छेदैरिव विरचितां भूतिमंगे गजस्य॥ पूर्वमेघ १९ श्लोक

२. तस्यास्तिक्तैर्वनगजमदैर्वासितं वान्तवृष्टि-
र्जम्बूकुंजप्रतिहतरयं तोयमादाय गच्छेः।
अन्तः सारं घन! तुलयितु नानिलः शक्ष्यति त्वां
रिक्तः सर्वो भवति हि लघुः पूर्णता गौरवाय॥ पूर्वमेघ २० श्लोक

३. नीपं दृष्ट्वा हरितकपिशं केसरैरर्द्धरूढै
राविर्भूतप्रथममुकुलाः कन्दलीश्चानुकच्छम्।
दग्धारण्येष्वधिकसुरभिं गन्धमाघ्राय चोर्व्याः
सारङ्गास्ते जललवमुचः सूचयिष्यन्ति मार्गम्॥ पूर्वमेघ २१ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बनाकर चलते हुए देखकर बगुलों को अंगुली से गिनते हुए सिद्ध लोग उस समय तुम्हें धन्यवाद देंगे, जबकि तुम्हारी गर्जन से डरी हुई उनकी प्रियायें सहसा आलिंगन करने लगेंगी।'[१]

वर्षाकाल में प्रकृति सभी ओर से अत्यधिक रमणीय लगती है। इस ऋतु में वनों में तरह-तरह के पुष्प भी विकसित हो जाते हैं। जिनसे पथिक उन्हें देख एवं उनकी सुगन्ध से बरवश आकर्षित हो जाते हैं। अत: अपने संदेश को अलकापुरी पहुँचाने के लिए यक्ष रूपी कालिदास अधिक उत्सुक है किन्तु मेघ के मनोरंजन में भी वह बाधा नहीं पहुँचा चाहता है। अतः सफाई देने के लिए ऐसा कह देता है :—

'हे मित्र! यद्यपि मेरे कार्य के लिए तुम शीघ्र अलकापुरी पहुँचना चाहोगे परन्तु फूलों की गन्ध से परिपूर्ण पर्वत शिखरों पर विश्राम करते हुए तुम्हें कुछ विलम्ब हो ही जायेगा ऐसा मेरा विचार है। आंसू भरे हुए मोर अपनी केका (मधुर वाणी) से तुम्हारा स्वागत करेंगे उसे स्वीकार कर ही तुम शीघ्र आगे बढ़ने का प्रयत्न करना।'[२]

महाकवि कालिदास ने अपनी शाप की अवधि में उज्जयिनी सम्राट् विक्रमादित्य का समस्त पर्वतीय भूभाग अत्यन्त ही सूक्ष्म दृष्टि से निरीक्षण कर अपनी अनुभूतियों से केवल मेघदूत में ही वर्णन किया है। अन्यत्र किसी दूसरी रचना में उज्जयिनी का वर्णन नहीं किया है। प्रकृति के कवि ने प्रकृति को बाल्यकाल से ही अति सन्निकट बैठकर निहारा है :—

दशार्ण देश का वर्णन—'जब तुम दशार्ण देश के निकट पहुँचोगे तो वहाँ केतकी पुष्पों से बने हुए बगीचों के घेरे, कलियों के कुछ-कुछ खिल जाने से पीले-पीले दिखाई देने लगेंगे। कौवे आदि पक्षियों के घोंसलों से ग्राम के पेड़ (ग्राम चैत्य) भरने लगेंगे। वनों के वे भाग जिनमें जामुन के पेड़ हैं, वे अपने फलों से पक जाने से काले दिखेंगे और वहाँ कुछ दिन हंस भी रुकेंगे।[3]

---

१. अम्भोबिन्दुग्रहणचतुरांश्चातकान् वीक्षमाणाः
श्रेणीभूताः परिगणनया निर्दिशन्तो बलाकाः।
त्वामासाद्य स्तनितसमये मानयिष्यन्ति सिद्धाः
सोत्कम्पानि प्रियसहचरीसंभ्रमालिङ्गितानि॥ पूर्वमेघ २२ श्लोक

२. उत्पश्यामि द्रुतमपि सखे मत्प्रियार्थं यियासोः
कालक्षेपं ककुभसुरभौ पर्वते पर्वते ते।
शुक्लापाङ्गैः सजलनयनैः स्वागतीकृत्य केकाः
प्रत्युद्यातः कथमपि भवान् गन्तुमाशु व्यवस्येत्॥ पूर्वमेघ २३ श्लोक

३. पाण्डुच्छायोपवनवृतयः केतकैः सूचिभिन्नैः
नीडारम्भैर्गृहबलिभुजामाकुलग्रामचैत्याः।
त्वय्यासन्ने परिणतफलश्यामजम्बूवनान्ताः
सम्पत्स्यन्ते कतिपयदिनस्थायिहंसा दशार्णाः॥ पूर्वमेघ २४ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यक्षरूपी महाकवि ने मार्ग निर्देशन में भौगोलिक स्थिति का बहुत ही सूक्ष्म और सही निरुपण करके अपनी मनस्थिति का अच्छी परिचय दिया है। रामगिरि से केदारखण्ड तक का मार्ग महाकवि कालिदास को अच्छी प्रकार से मालूम है। बड़ी ही कुशलता से वह अपनी कर्मभूमि में शाप की अवधि समाप्त होने का तथा अपनी जन्मभूमि में शीघ्र ही पहुँचने की सूचना मेघ को दे रहा है।

उपमा का धनी और काव्य कला का सिद्धहस्त कालिदास अपने मानवीय मनकी एक वर्ष की रोकी हुई तरङ्गों को प्रकृति के साथ जोड़कर अभिव्यक्त कर ही देता है :—

'दिशाओं में प्रसिद्ध विदिशा दशार्णों की राजधानी है वहाँ पहुँच कर तुम्हें शीघ्र ही कामुकता का फल मिल जायेंगे क्योंकि जैसे कोई कामी भौंहे चढ़ाती हुई नायिका के अधर को चूम लेता है वैसे ही किनारे पर गरजने से सुन्दर वेत्रवती नदी के मीठे और चंचल तरंगवाले जल का पान करोगे।[1]

महाकवि कालिदास ने अपने प्रवासी जीवन में भी अपने यौवन की तरंगों और अपनी कविता की उमंगों में अपने हृदय के विचारों की अभिव्यक्ति करने में किसी भी प्रकार की कमी नहीं रखी :—

7631

'वहाँ विदिशा के निकट विश्राम के लिए नीचे वाले पर्वत पर ठहर जाना, जो पूर्णरूप से खिले हुए कदम्ब के फूलों से ऐसा लगेगा, मानों तुम्हारे स्पर्श से रोमांचित हो गया हो और वेश्याओं के साथ रतिक्रीड़ा में प्रयोग होने वाले अंग-रागादि की महक से जिसकी गुफाएं वहां के नागरिकों के यौवनाधिक्य को प्रकट कर रही होगी।'[2]

अपने मन की भावनाओं को मेघको प्रदर्शित कर मार्ग में चलते हुए उसने नवयुवतियों से भी परिचय करते हुए मन को बहलाने का उपाय भी बताया है—

'हे मेघ ! विन्ध्यगिरि पर विश्राम करके उद्यानों को सींचने के लिए बनी हुई कृत्रिम कूलों के किनारे उगी हुई जूही की कलियों को हलकी बूंदें बरसा कर सींचते हुए तुम, फूल तोड़ने वाली युवतियाँ बार-बार अपने कपोलों का पसीना पोंछन में

---

१. तेषां दिक्षु प्रथितविदिशालक्षणां राजधानीं
गत्वा सद्यः फलमविकलं कामुकत्वस्य लब्धा।
तीरापान्तस्तनितसुभगं पास्यसि स्वादु यस्मा-
त्सभ्रूभंगं मुखमिव पयो वेत्रवत्याश्चलोर्मि ॥ पूर्वमेघ २५ श्लोक

२. नीचैराख्यं गिरिमधिवसेस्तत्र विश्रामहेतो
स्त्वत्संपर्कात्पुलकितमिव प्रौढ़पुष्पैः कदम्बैः।
यः पण्यस्त्रीरतिपरिमलोद्गारिभिर्नागराणा
मुद्दामानि प्रथयति शिलावेश्मभिर्यौवनानि ॥ पूर्वमेघ २६ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हाथों की गरमी से मुरझा गये हैं कर्णोत्पल जिनके, उनके मुखों पर छाया करते हुए क्षणभर उनसे परिचय करके ही आगे बढ़ना।'[१]

महाकवि कालिदास ने मेघ को स्पष्ट रूप में कहा है कि यद्यपि उत्तराखंड में जाते हुए भी तुम्हें यह मार्ग टेढा पड़ेगा किन्तु तुम वैभवपूर्ण, सुन्दर युवतियों से युक्त महाकाल से सेवित और मेरे आश्रयदाता की सुन्दरतम उज्जयिनी नगरी को अवश्य देखना क्योंकि आंखों का सही सच्चा लाभ है। तुम्हारी यात्रा भी महाकाल के दर्शन से सफल हो जायेगी :—

उदयन और बासवदत्ता का वर्णन—वत्सराज उदयन और प्रद्योत की पुत्री बासवदत्ता के अपहरण की कथा, विशाल नगरी उज्जयिनी के वैभव से उसे स्वर्गलोक के एक खण्ड के समान कालिदास ने वर्णन कर मेघ को टेढ़ा मार्ग होने पर भी उसकी अनेक विशेषताओं के कारण उसे देखने के लिए विशेष आग्रह किया है वह नगरी सम्पूर्ण सांसारिक वैभव युक्त महाकाल एवं अपने आश्रयदाता विक्रमादित्य के कारण उसे विशेष दर्शनीय माना है :—

'जहां के गांवों में आज भी वृद्ध जन उदयन की कथाओं को विस्तृत रूप में कहा करते हैं, ऐसी अवन्ति में पहुंचकर तुम उस उज्जयिनी की ओर चलो जिसे मैं पहले भी कह चुका हूं। धनधान्य रत्नादि से भरी वह नगरी पुण्य क्षीण होने वाले लोग स्वर्ग से भूमि में आने पर अपने शेष पुण्यों का उपभोग करने के लिए स्वर्ग का ही एक दीप्तिमान् खण्ड भूमि पर ले आये हैं।'[२]

इससे उज्जयिनी का पूर्व इतिहास, सर्वतोमुखी विकसित स्थिति, धार्मिक दृष्टि से महाकाल का महत्त्व और सच्चे प्रजापालक न्यायकर्ता विक्रमादित्य के शासन का सही स्वरूप बताना था। मेघदूत तो महाकवि कालिदास की आत्मकथा और विरहजन्य प्रवासी जीवन की ही सच्ची गाथा है। अपने आश्रयदाता के राज्य की समृद्धिपूर्ण भौगोलिक सच्ची स्थिति की यह एक अभिव्यक्ति भी थी। उज्जयिनी जन्मभूमि नहीं अपितु कर्मभूमि होने से अपनी प्रवास जीवन की गाथा में प्रकरणवश उसके वैभव का भी विस्तृत वर्णन कर दिया है। मेघदूत में रामगिरि

---

१. विश्रान्तः सन् व्रज नवनदीतीरजातानि सिंचन्
उद्यानानां नवजलकणैर्यूथिकाजालकानि।
गण्डस्वेदापनयनरुजाक्लान्तकर्णोत्पलानां
छायादानात् क्षणपरिचितः पुष्पलावीमुखानाम्॥ पूर्वमेघ २७ श्लोक

२. प्राप्यावन्तीनुदयनकथाकोविदग्रामवृद्धान्
पूर्वोद्दिष्टामनुसर पुरीं श्रीविशालां विशालाम्।
स्वल्पीभूते सुचरितफले स्वर्गिणां गां गतानां
शेषैः पुण्यैर्हृतमिव दिवः कान्तिमत्खण्डमेकम्॥ पूर्वमेघ ३१ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से लेकर उज्जयिनी के वैभव तक के कुछ श्लोकों को देखकर ही पाठकों को एक प्रकार का महाकवि कालिदास को उज्जयिनी का सिद्ध करने का व्यामोह हो जाता है। जबकि इस गीति काव्य का मुख्य उद्देश्य शापग्रसित, प्रभावहीन, प्रिया विहीन, यश एवं धन पाना और पुण्य भूमि में निवास कर प्रायश्चित करना है। शाप की अवधि सन्निकट आई देखकर यक्षरूपी कवि को वर्षाऋतु की सूचना देने वाले मेघ को देखकर अपने सन्निकट के वातावरण में कवि की कविता अपनी साधना में सुप्त भावों को प्रचण्ड उद्दीप्त रूप में स्वाभाविक रूपमें अभिव्यक्त करने लगती है। प्रेमसी की मधुर कल्पना मेघ को ही अपनी समस्त कामनाओं का साधक मानकर उसे अपने जीवन की सच्ची गाथा सुनाने के लिए शीघ्रता से अपनी जन्मभूमि जाने का अपनी पूर्व भौगोलिक यात्रा उज्जयिनी आने की स्मृति से हिमालय के उत्तराखण्ड तपोभूमि गढ़वाल में जाने का आंखों देखा मार्ग बताने लगता है।

अपनी व्यथापूर्ण कथा को प्रारम्भ करते ही कवि अपने को मेघ की तरह कहीं दुख से हल्का और कहीं पूर्व घटित घटनाओं की स्मृति के दुखों से भारी बन जाता है। कालिदास जिस प्रकार स्वयं पर्वत शृंखलाओं को पार करता हुआ रामगिरि आश्रमों में आया था। उसी प्रकार मेघ को भी दिशा निर्देश करके आशा के आधार पर अपनी जन्मभूमि भेज रहा है। सच्चा विश्वास सदा फलदायक होता है, आत्मकथा कहते-कहते—दारुण विरह की व्यथा भी शान्त हो जाती और शाप भी स्वतः दूर हो जाता है। विश्वास, धैर्य साधना और पवित्र स्थान का वास समस्त ताप-पाप और शाप को दूरकर देती हैं। अच्छी भावना, साधना और कामना वैसी ही सिद्धि देता है जैसी साधक सोचता है।

पूर्वमेघ के ३१ श्लोक से ४३ श्लोक तक ही पूर्वमेघ के मात्र १३ श्लोकों में ही उज्जयिनी का वर्णन मिलता है। इस प्रसंग को देखकर भी कुछ विद्वान् अन्य मुख्य प्रसंगों को छोड़कर कालिदास को उज्जयिनी का ही समझ बैठते हैं। कालिदास ने अपने मेघदूत में अपनी आत्मकथा यक्ष के रूप में वर्णन कर विद्वानों के समक्ष अपनी जन्मभूमि के भूभाग का भी विस्तृत सही वर्णन किया है। हिमालय के भूभाग का सूक्ष्म रूप में सबसे अधिक वर्णन 'कुमारसम्भव' में हुआ है। महाकवि कालिदास ने हिमालय के उत्तराखण्ड का निवासी होने के ही कारण अपने प्रथम महाकाव्य में हिमालय, कैलास, केदारखण्ड, पर्वतपुत्री पार्वती की साधनास्थली, गौरी पर्वत, गौरी कुण्ड और नागाधिराज हिमालय की राजधानी औषधिप्रस्थ नगर का सबसे अधिक विस्तृत वर्णन किया है। अतः इन प्रमाणों के आधार पर वह हिमालय के केदारखण्ड का ही निवासी सिद्ध होता है। मेघदूत के जब केवल १३ श्लोक ही महाकवि कालिदास को उज्जयिनी का निवासी सिद्ध करते हैं तो सम्पूर्ण कुमारसम्भव, मेघदूत का अधिक भाग और शकुन्तला नाटक अन्तिम रचना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तो उसे हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल का ही बताते हैं। क्योंकि उस कवि ने उस भूभाग की सामाजिक और धार्मिक परम्पराओं, रीति-रिवाजों एवं प्रथाओं का अपनी रचनाओं में अधिक वर्णन किया है। अधिक युक्तियों, साक्ष्यों और इस क्षेत्र के भूभागों का आँखों देखा वर्णन ही इस बात की पुष्टि करता है कि कालिदास हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल का ही निवासी था। शकुन्तला नाटक में राजा दुष्यन्त के यहाँ शकुन्तला के साथ गये तपस्वी बालकों का इस प्रकार परिचय दिया गया है :—'महाराज की जय हो। हिमालय की तराई में रहने वाले कुछ तपस्वी लोग कण्व का सन्देश लेकर स्त्रियों के साथ आये हुए हैं। अब देव जैसा उचित समझें वैसा करें।'[1]

मेघदूत महाकवि कालिदास की दारुण दुःख युक्त व्यथापूर्ण आत्मकथा है। कुमारसम्भव महाकवि की यौवनकाल की उद्दीप भावनाओं और नवीन कविता की स्फुरित उमंगों का प्रतिफल है। जगज्जननी के नख-शिख के सौन्दर्य का एवं जगत् के माता-पिता के रतिसुख का वर्णन ही शाप तथा अभिशाप का कारण बन रामगिरि के स्नान, ध्यान और एकान्त वास से ही शाप की निवृत्ति हुई है। केदारखण्ड की सिद्धपीठ कालीमठ ने ही कालिदास को उसकी साधना से सिद्धि देकर विश्वविख्यात महाकवि कालिदास बनाया है। कविता और मानवीय मनोभावों का सही विश्लेषण करने के कारण महाकवि कालिदास क्षेत्र विशेष का नहीं मानवीय विचारों की संचित भावनाओं के कारण भारत का ही नहीं अपितु विश्व का प्रतिनिधित्व करने वाला कवि है। जन्म स्थान की अनभिज्ञता व्यक्त करके, मिथ्या कल्पनाओं का सहारा लेने और पक्षपातपूर्ण दुराग्रह के कारण वस्तुस्थिति से अवगत कराने के लिए हमने कालिदास की भावनाओं और हृदय की कामनाओं के तथा उसके ग्रन्थों के आधार पर ही उसे उस तपस्थली का सिद्ध किया है, जहाँ का उसने अपने ग्रन्थों में सबसे अधिक वर्णन किया है। महाकवि कालिदास ने अपनी सच्ची आत्मकथा मेघदूत में स्पष्ट कर दी है। उसे पक्षपात, पूर्वाग्रह एवं पूर्व परिप्रेक्ष्य को दूर कर ही देखा जा सकता है। स्वतन्त्रता के पश्चात् अनेक भारतीय सत्य निरूपण करने वाले एवं महाकवि कालिदास के ग्रन्थों का सही अन्वेषण करने वाले विद्वानों ने उसे हिमालय के भूभाग का विस्तृत वर्णन करने वाला वह कवि उत्तराखण्ड के किसी स्थान विशेष का निवासी भी अवश्य रहा होगा? वह स्थान केदारनाथ और सिद्धपीठ कालीमठ के बीच का भाग कविल्ठा ग्राम है।[2]

---

१. (उपगम्य) जयतु जयतु देवः। एते खलु हिमगिरेरुपत्यकारण्यवासिनः कण्व सन्देशमादाय स्त्रीकास्तपस्विनः सम्प्राप्ताः। श्रुत्वा देवः प्रमाणम्।

शकुन्तला ५ अंक ५वें श्लोक के बाद का गद्यांश।

२. विस्तृत अध्ययन के लिए हमारी प्रसिद्ध पुस्तक कालिदास और उसका मानवीय साहित्य। देखें।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वक्रमार्ग होने पर भी उत्तराखण्ड की यात्रा में उज्जयिनी अवश्य जाना—यद्यपि उत्तरदिशा-उत्तराखण्ड की ओर जाते हुए तुमको यह मार्ग टेढ़ा पड़ेगा, किन्तु फिर भी तुम उज्जयिनी के महलों की अटारियों के अनुराग से विमुख मत होना क्योंकि रेखा जैसी बिजली के चमकने से चकाचौंध हुई एवं पुरांगनाओं के चंचल कटाक्षों से यदि तुमने न खेला तो तुम आंखों के सुख से वंचित हो गये।'[१]

इस श्लोक में महाकवि कालिदास ने अपनी जन्मभूमि का सही परिचय देते हुए स्पष्ट किया है कि उत्तराखण्ड को जाने में तुम्हें यद्यपि मार्ग टेढ़ा अवश्य पड़ेगा किन्तु उज्जयिनी को देखकर अपने जीवन को सफल अवश्य बना लेना। क्योंकि वह कवि की कर्मभूमि, आश्रयभूमि और वैभवपूर्ण नगरी है। अपने हृदय की सही बात कवि ने इसमें स्पष्ट कर ही दी। इसे समझने में अनुमान और कल्पना की आवश्यकता ही नहीं। कुछ विद्वानों ने अवन्ती को ही उज्जयिनी माना है।

अपनी कर्मभूमि से जन्मभूमि में जाने के मार्ग में जो भी स्थान, वन, नदी और पर्वत पड़े हैं, उनका महाकवि कालिदास ने मेघ को बड़ी ही सूक्ष्म दृष्टि से विस्तृत रूप में वर्णन किया है। उज्जयिनी का निवासी मध्यप्रदेश के भूभाग का आंखों देखा वर्णन तो कर सकता है किन्तु उत्तरप्रदेश की केदारखण्ड के भूमि का का ऐसा सजीव वर्णन कभी भी नहीं कर सकता है। भौगोलिक अध्ययन मात्र से भी ऐसा वर्णन नहीं हो सकता है। अपितु अलकापुरी के निकट का निवासी ही ऐसा आंखों देखा और बाल्यकाल में घूमा हुआ व्यक्ति ही ऐसा सजीव सच्चा वर्णन कर सकता है।

स्त्रियों के प्रणय प्रदर्शन पर भी कवि ने मेघ को बहुत ही अच्छे ढंग पर निर्विन्ध्या को दिखाया है :—

'जैसे कोई' नायिका अपने प्रिय से प्रणय याचना करने के लिए करधनी से शब्द करती है, उन्मत्त होकर चलती है, अपने नाभि आदि गोप्य अंगों का प्रदर्शन करती है, उसी प्रकार उज्जयिनी जाते हुए मार्ग में निर्विन्ध्या भी तुम्हें अपना प्रणयी समझेगी और कुजते हुए वगुले आदि की पंक्तिरुप उसको करधनी वक्रगति

---

१. वक्रः पन्था यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां
सौधोत्संगप्रणयविमुखो मा स्म भूरुज्जयिन्याः।
विद्युद्दामस्फुरणचकितैस्तत्र पौराङ्गनानां
लोलापाङ्गैर्यदि न रमसे लोचनैर्वञ्चितोऽसि ॥ पूर्वमेघ २८ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से चलना उसका उन्माद, जलावर्त ही उसकी नाभि समझकर तुम उसका जल ग्रहण करना क्योंकि स्त्रियों का निभ्रम ही प्रणयवचन होता है।'[१]

नदियों की स्वाभाविक गति में भी कवि ने अपनी वियोगावस्था को देखा है। वियोगी, विरही कवि को सर्वत्र अपनी ही जैसी भावनाएँ दिखती है :—

'हे भाग्यवान् मेघ ! उस निर्विन्ध्जा को पार करके तुम्हें वही उसका भी जल लटकती चोटी सा कम हो गया है। किनारे के वृक्षों से झड़े हुए पीले पत्तों से उसकी शोभा भी कम हो गई है। अपनी वियोगावस्था से वह दिखा रही है कि अपने प्रिय के वियोग में उसकी यह दशा हो गई है।'[२]

अपने और अपनी पत्नी के दारुण विरह को महाकवि कालिदास प्रकृति में भी देखता जा रहा है। प्रिय जन के वियोग में कैसी स्थिति हो जाती है। कवि अपने विरह के दुख को समस्त प्राकृतिक वस्तुओं में भी देख रहा है।

उज्जयिनी का वैभव—शिप्रा नदी अपने तटवर्ती उज्जयिनी नगर के निवासियों के सभी प्रकार के श्रम को दूर कर देती है। प्रायः कुछ लोग अपनी सम्पत्ति का उपयोग और उपभोग अपने लिए ही करके संसार का सुख भोगते हैं। चारों पदार्थ, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ही मानव जीवन के मूल आधार हैं। अच्छे माध्यमों से श्रम द्वारा मनुष्य धन एकत्रित करता है। अच्छे माध्यमों को ही धर्म की संज्ञा दी गई है क्योंकि दूसरों को दुःख न देकर जो अर्थ एकत्रित किया जाता है, वही सच्चा आत्मिक सुख देने वाला होता है। धन उपभोग के लिए अर्थात् मन की कामनाओं की पूर्ति के लिए ही संग्रह एवं व्यय किया जाता है। धन का उपयोग धन को कमाने के लिए किया जाता है और अधिक उपभोग करने के पश्चात् ही व्यक्ति में मोक्ष प्राप्ति की भावनाएँ उत्पन्न होती हैं। उसी प्रकार उज्जयिनी के वैभव पूर्ण लोग सांसारिक सुखों में किस प्रकार लीन हैं इसे इन १३ श्लोगों में अच्छी प्रकार से वर्णन किया है :—

'जिस उज्जयिनी में प्रातः काल सारसों की ऊँची और मद से मधुर ध्वनि को और भी ध्वनित करता हुआ, विकसित कमलों की मनोहर सुगन्ध से भरा

---

१. वीचिक्षोमस्तनितविहगश्रेणिकांचीगुणाया:
संसर्पन्त्या स्खलित सुभगं दर्शितावर्तनाभेः।
निर्विन्ध्यायाः पथि भव रसाभ्यन्तरः सन्निपत्य
स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु ॥ पूर्वमेघ २९ श्लोक

२. वेणीभूतप्रतनुसलिला तामतीतस्य सिन्धुः
पाण्डुच्छाया तटरुहतरुभ्रंशिभिः शीर्णपर्णैः।
सौभाग्यं ते सुभग विरहावस्थया व्यञ्जयन्ती
कार्श्यं येन त्यजति विधिना स त्वमैवोपपाद्यः पूर्वमेघ ३० श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तथा शरीर के अंगों को अत्यधिक आनन्द लेने वाली शिप्रा नदी की हवा, मनाने के लिए मीठी-मीठी बातें करने वाले प्रेमी की तरह स्त्रियों के सम्भोग के श्रम को दूर कर देती हैं।'[1]

सम्पन्न व्यक्ति ही संसार के सभी प्रकार के सुखों को सुख से भोग सकता है और संसार के वैभव से व्यापार कर अर्थ भी उपार्जन कर सकता है। महाकवि कालिदास ने विक्रमादित्य की नगरी की सम्पन्नता, व्यापारिक स्थिति, धार्मिक स्थिति और विद्या के महत्त्व को अच्छी प्रकार से दिखाया है। व्यापार में ही लक्ष्मी का निवास होता है। अतः उज्जयिनी को एक व्यापारिक केन्द्र के रूप में भी दिखाया गया है :—

'जिस उज्जयिनी में दुकानों पर बिकने के लिए सजाये हुए, बीच में लटकते हुए बहुमूल्य रत्नों वाले हारों, करोड़ों शंखों और सीपियों, ऊपर को अंकुरों की तरह उठाती हुई किरणों वाले ऐसे घास के से हरे-हरे रंग के मकरत मणियों एवं मूँगे के टुकड़ों को देखकर ऐसा विदित होता है कि रत्नाकर समुद्र में अब केवल जल ही रह गया होगा क्योंकि उसके सब रत्न तो यहाँ आ गये हैं।'[2]

कालिदास के युग में उज्जयिनी में वत्सराज उदयन और प्रद्योत की पुत्री वासवदत्ता के नाम की बहुत चर्चा थी। उज्जयिनी के लोग अपने यहाँ आये हुए आगन्तुकों का इनकी कथा सुना कर मनोरंजन कराते थे। महाकवि कालिदास ने प्रद्योत के वैभव और वत्सराज उदयन के पराक्रम के महत्त्व को इस श्लोक में व्यक्त किया है। जिसे उज्जयिनी की गुणग्राही जनता बहुत दिनों तक याद रखती हुई अपने घर में आये हुए आगन्तुकों को भी सुना कर उनका मनोविनोद करती थी :—

'जिस उज्जयिनी में रहने वाले लोग अपने यहाँ बाहर से आये आगन्तुकों को, यहाँ पर उदयन ने वासवदत्ता को हर लिया था, यहाँ पर राजा प्रद्योत का सुनहरे

---

१. दीर्घीकुर्वन् पटु मदकलं कूजितं सारसानां
प्रत्यूषेषु स्फुटितकमलामोदमैत्रीकषायः।
यत्र स्त्रीणां हरति सुरतग्लानिमङ्गानुकूलः
शिप्रावातः प्रियतम इव प्रार्थनाचाटुकारः॥ पूर्वमेघ ३२ श्लोक

२. हारांस्तारांस्तरलगुटिकान् कोटिशः शंखशुक्तीः
शष्पश्यामान् मरकतमणीनुन्मयूखप्ररोहान्।
दृष्ट्वा यस्यां विपणिरचितान् विद्रुमाणां च भङ्गान्
संलक्ष्यन्ते सलिलनिधयस्तोयमात्रावशेषाः॥ पूर्वमेघ ३३ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ताड़ों का उद्यान था, यहाँ पर नलगिरि नाम का हाथी मदमत्त हो गया था आदि बातें बताकर उनका मनोरंजन करते हैं।'[1]

उज्जयिनी की अश्वशक्ति' गजशक्ति और सैन्यशक्ति की भी यहाँ पर प्रशंसा की गई है। यह सब उज्जयिनी के शासक की शक्ति का परिचय दिया है :—

'जिस उज्जयिनी में श्यामवर्ण के घोड़े सूर्य के घोड़ों से होड़ करते हैं, पर्वतों जैसे ऊँचे हाथी अपने गण्डस्थलों से ऐसे मद बरसाते हैं जैसे तुम जल बरसाते हो। वहां के सैनिक युद्ध में रावण का सामना भी कर लेते हैं और उनके शरीर में तलवारों के घाव इतने अधिक हैं कि उनसे उनके आभूषणों की कान्ति भी मन्द पड़ जाती है।'[2]

सौन्दर्य प्रसाधन की सामग्री से कामोद्दीपन वृद्धि के लिए भी उज्जयिनी में अनेक उपाय किये जाते थे। विकसित आर्थिक स्थिति से विभिन्न प्रकार की कलाओं तथा अनेक आविष्कारों का भी जन्म हुआ है। मनोरंजन के द्वारा भी व्यक्ति अपनी यात्रा थकावट और दुखों को भी दूर कर लेता है :—

'केशों को सुगन्धित करने के लिए जो धूप जलाई गई है उसके झरीखों से निकलते हुए धुएँ से तुम्हारा आकार बढ़ने लगेगा, भाई चारे के स्नेह से पालतू मोर तुम्हें देखकर नाचेंगे, इस प्रकार फूलों की सुगन्ध से भरी एवं सुन्दरियों के चलने से महावर के पैरों के चिह्न जिनमें हो गये हैं ऐसी उज्जयिनी की विशाल अट्टारियों की शोभा देखते हुए तुम मार्ग की थकावट मिटाना।'[3]

शिव के महाकाल रूप का भी कालिदास से उज्जयिनी में मन कामना पूर्ण करने में मेघ को अच्छा स्वरूप दिखाया हैं :—

१—प्रद्योतस्य प्रियदुहितरं वत्सराजोऽत्र जह्रे
हैमं तालद्रुमवनमभूदत्र तस्यैव राज्ञः।
अत्रोद्भ्रान्तः किल नलगिरिः स्तम्भमुत्पाट्य दर्पा-
दित्यागन्तून् रमयति जनो यत्र बन्धूनभिज्ञः ॥ पूर्वमेघ ३४ श्लोक

२—पत्रश्यामा दिनकरहयस्पर्धिनो यत्र वाहाः
शैलोदग्रास्त्वमिव करिणो वृष्टिमन्तः प्रभेदात्।
योधाग्रण्यः प्रतिदशमुखं संयुगे तस्थिवांसः
प्रत्यादिष्टाभरणरुचयश्चन्द्रहासव्रणाङ्कैः ॥ पूर्वमेघ ३५ श्लोक

३—जालोद्गीर्णैरुपचितवपुः केशसंस्कारधूपै-
र्बन्धुप्रीत्या भवनशिखिभिर्दत्तनृत्योपहारः।
हर्म्येष्वस्याः कुसुमसुरभिष्वध्वखेदं नयेथाः
लक्ष्मीं पश्यन् ललितवनितापादरागाङ्कितेषु ॥ पूर्वमेघ ३६ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'अपने प्रभु नीलकण्ठ के गले जैसी कान्ति वाले तुमको गण लोग आदर से देखेंगे। तब तुम त्रिभुवन गुरु शिव के उस पवित्र धाम महाकाल को जाना जहां के उद्यानों में, कमल किंजल्क से परिपूर्ण गन्धवती नदी के जल में जल क्रीड़ा करती हुई युवतियों के अंगवास से अति ही सुगन्धित वायु बहता रहता है।'[१]

महाकवि कालिदास ने कैलास, हिमालय और केदारखण्ड में शिव के प्रति अपनी भक्ति को व्यक्त किया ही है उसी प्रकार उज्जयिनी में महाकाल के स्वरूप में भी मेघ को अपनी अनन्य भक्ति दिखाई है :—

'हे मेघ! यदि तुम सन्ध्या समय के अतिरिक्त किसी दूसरे समय में भी महाकाल के पास पहुँचो तो सूर्यास्त होने तक वहीं ठहरना क्योंकि सन्ध्या की पूजा में तुम्हारी गम्भीर गर्जनाएँ नगाड़ों का काम देंगी और महाकाल के प्रसाद से तुम्हें उन गर्जनाओं का सम्पूर्ण फल प्राप्त होगा।'[२]

महाकवि कालिदास के उज्जयिनी के महाकाल के मन्दिर में सायंकाल की पूजा के समय देवदासियों द्वारा नृत्य, संगीत और चँवर डुलाना इस बात का द्योतक है कि उस युग में भी देवदासी प्रथा अधिक रूप में प्रचलित थी। इसी प्रथा में बहुत बाद में अनेक प्रकार की त्रुटियाँ भी देखी गई हैं। ये देवदासियाँ अपनी संगीत साधना से ही ईश्वर की उपासना में भी परम सुख पाती थीं :—

रात्रि की पूजा के समय उस महाकाल के मन्दिर में नाचते हुए जिनके पैरों की गति के साथ किंकिणियाँ झनक रही हैं और रत्नों की कान्ति से शोभायमान डण्डों वाले चँवरों को कलापूर्ण ढंग पर डुलाते हुए जिनके हाथ थक गये हैं, ऐसी वेश्याएँ तुम्हारे बरसाये प्रथम जल बिन्दुओं से नख क्षतों का दाह शान्त होने से प्रसन्न होकर तुम्हें अपने तिरछे नयनों से देखेंगी।'[३]

१—भर्तुः कण्ठच्छविरिति गणैः सादरं वीक्ष्यमाणः
पुण्यं यायास्त्रिभुवनगुरोर्धाम चण्डीश्वरस्य।
धूतोद्यानं कुवलयरजोगन्धिभिर्गन्धवत्या-
स्तोयक्रीडानिरतयुवतिस्नानतिक्तैर्मरुद्भिः॥ पूर्वमेघ ३७ श्लोक

२—अप्यन्यस्मिञ्जलधर महाकालमासाद्य काले
स्थातव्यं ते नयनविषयं यावदत्येति भानुः।
कुर्वन् सन्ध्यावलिपटहतां शूलिनः श्लाघनीया-
मामन्द्राणां फलमविकलं लप्स्यसे गर्जितानाम्॥ पूर्वमेघ ३८ श्लोक

३—पादन्यासैः क्वणितरसनास्तत्र लीलावधूतै-
रत्नच्छायाखचितवलिभिश्चामरैः क्लान्तहस्ताः।
वेश्यास्त्वत्तो नखपदसुखान् प्राप्य वर्षाग्रबिन्दून्
आमोक्ष्यन्ते त्वयि मधुकरश्रेणिदीर्घान् कटाक्षान्॥ पूर्वमेघ ३९ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कालिदास ने यक्ष के रूप में शिव के ताण्डव नृत्य में मेघ को अपनी सहज भक्ति का परिचय इस प्रकार दिया है :—

'सन्ध्या की पूजा के पश्चात् जब शिव ताण्डव आरम्भ करते हुए वृक्षों के समान अपनी ऊँची भुजाओं को ऊपर उठायेंगे, तब तुम जवा कुसुम जैसी लाल-लाल सान्ध्य शोभा धारण कर वृत्ताकार होकर उनकी भुजाओं में घिर जाना। भय दूर हो जाने से पार्वती शान्त नेत्रों से तुम्हारी ओर देखेंगी और तुम शिव की तत्काल मारे हुए गजासुर के चूते हुए चर्म को ओढ़ने की इच्छा को पूरी कर देना।'[1]

मेघ सभी को प्रिय है—मेघ किसानों का, विरहियों का सहायक है तो अन्धकार में प्रेमिकाओं को अपनी विद्युत से मार्ग दिखाने का भी कार्य करता है :—

'उस उज्जयिनी में रात को अपने प्रेमियों के घरों को जाती हुई रमणियों को घने अंधकार से राजमार्ग के ढक जाने पर कुछ भी न दिख पड़ेगा, अतः तुम कसौटी पर ही चमकती हुई स्वर्ण रेखा के समान बिजली की रेखा चमका कर उन्हें मार्ग दिखा देना, किन्तु गरजना और बरसना मत क्योंकि वे भीरु होती हैं।'[3]

उज्जयिनी नगरी में बहुत बड़े विशाल भवन हैं जिनमें रात्रि को कबूतर भी निवास करते थे। यक्षरूपी कवि ने मेघ को रात्रि में वहीं निवास करने और पुनः प्रातःकाल ही मित्र के स्वीकार किये हुए कार्य को पूर्ण करने के लिए प्रस्थान कर देना ऐसा निर्देश दिया :—

'बहुत समय तक मार्ग दिखाने के कारण चमकती हुई तुम्हारी बिजली रूपी स्त्री थक जायेगी, अतः वहां किसी महल की शान्त छत पर उस रात को बिताकर सूर्योदय होते ही अवशेष मार्ग को पूरा करने चल देना क्योंकि मित्रों के कार्य

३—पश्चादुच्चैर्भुजतरुवनं मण्डलेनाभिलीनः
सान्ध्यं तेजः प्रतिनवजपापुष्परक्तं दधानः।
नृत्यारम्भे हर पशुपतेरार्द्रनागाजिनेच्छां
शान्तोद्वेगस्तिमितनयनं दृष्टभक्तिर्भवान्याः॥ पूर्वमेघ ४० श्लोक

४—गच्छन्तीनां रमणवसतिं योषितां यत्र नक्तं
रुद्धालोके नरपतिपथे सूचिभेद्यैस्तमोभिः।
सौदामन्या कनकनिकषस्निग्धया दर्शयोर्वीं
तोयोत्सर्गस्तनितमुखरो मा स्म भूर्विक्लवास्ताः॥ पूर्वमेघ ४१ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को सिद्ध करने का भार जिन्होंने अपने ऊपर ले लिया है वे उसमें शिथिलता नहीं आने देते हैं।[१]

कर्तव्य का बोध कराता हुआ कवि सूर्यादि के दैनिक कृत्य को भी चमत्कार पूर्ण रूप से संयोग श्रृंगार के रूप में देख रहा है कवि मेघ को उज्जयिनी के वर्णन के साथ ही जन्मभूमि जाने के लिए भी कर्त्तव्य का बोध करा रहा है। यद्यपि कवि ने सम्पूर्ण मेघदूत में अपने जीवन को वियोग श्रृंगार के रूप में ही दिखाया है :—

'अन्य अपनी रात विताने वाले प्रेमियों को भी सूर्योदय के पश्चात् उन विरहिणी नायिकाओं के आंसू पोंछने होते हैं जो उनकी प्रतीक्षा में बेचैन हैं। अतः तुम शीघ्र ही सूर्य के मार्ग से हट जाना क्योंकि सूर्य भी रात कहीं विताकर प्रातः काल पद्मिनी के कमलरूपी आंखों के आंसू पोंछने आ रहा है। यदि तुम उसकी हाथरूपी किरणों को रोकोगे तो तुम पर क्रुद्ध हो जायगा।[२]

वियोग में विरही कवि कालिदास अपने दुखों को कल्पना जगत् में घूमकर भूलना चाहता है और प्रकृति के सुख में रहकर अपनी शाप की अवधि समाप्त कर देना चाहता है। नायिकाओं के कई भेदों का भी कवि ने वर्णन किया है :—

'किसी गम्भीरा नायिका के पवित्र चित्त में जिस प्रकार सुन्दर नायक का प्रतिबिम्ब बैठ जाता है, उसी प्रकार इसी गम्भीरा नाम की नदी के निर्मल जल में तुम्हारी स्वाभाविक छाया प्रवेश कर जायेगी। अतः जैसे हृदय स्थिर नायक कुमुद के समान खिले हुए नयनों के चंचल कटाक्षों को व्यर्थ नहीं जाने देता है, वैसे ही तुम भी इन मछलियों की शुभ्र तथा चंचल उछालों को व्यर्थ न जाने देना।'[३]

महाकवि कालिदास स्वभावित रुप में विस्तृत फैली हुई गम्भीरा नदी को

---

१. तां कस्याञ्चिद्भवनवलभौ सुप्तपारावतायां
नीत्वा रात्रिं चिरविलसनात् खिन्नविद्युत्कलत्रः।
दृष्टे सूर्ये पुनरपि भवान् वाहयेदध्वशेषं
मन्दायन्ते न खलु सुहृदामभ्युपेतार्थकृत्याः॥ पूर्वमेघ ४२ श्लोक

२. तस्मिन् काले नयनसलिलं योषितां खण्डितानां
शान्तिं नेयं प्रणयिभिरतो वर्त्म भानोस्त्यजाशु।
प्रालेयास्त्रं कमलवदनात् सोऽपि हर्तुं नलिन्याः
प्रत्यावृत्तस्त्वयि कररुधि स्यादनल्पाभ्यसूयः॥ पूर्वमेघ ४३ श्लोक

३. गम्भीरायाः पयसि सरितश्चेतसीव प्रसन्ने
छायात्माऽपि प्रकृतिसुभगो लप्स्यते ते प्रवेशम्।
तस्मादस्याः कुमुदविशदान्यर्हसि त्वं न धैर्या-
न्मोघीकर्तुं चटुलशफरोद्वर्तनप्रेक्षितानि॥ पूर्वमेघ ४४ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नायिका का रूप देकर अपने पत्नी वियोग में भी मेघ को नायक बनाकर आलिंगन सुख अनुभव कर रहा है :—

'गम्भीरा नदी बेंतकी मृदु शाखाओं को अपनी हाथरूपी तरंगों से छू रही है और तट को जिसने विस्तृत कर दिया है ऐसी नदी रूपी नायिका के नील वस्त्रको हटाकर सुरति सुख भोगना। कौन ऐसा व्यक्ति होगा जो सुरति सुख का सुयोग देख या अनुभव कर ऐसी स्थिति में उस नायिका को छोड़ सके ?'[१]

कालिदास की स्कन्ध के प्रति श्रद्धा—कालिदास ने मेघदूत में मध्यप्रदेश के विस्तृत भूभाग का आंखों देखा वर्णन किया है और इस क्षेत्र के पर्वतों नदियों एवं देवस्थानों का अच्छा वर्णन किया है। अपनी वियोगावस्था का दुख एवं अपने हृदय की उद्दीप्त कामनाओं को प्रकृति के अनेक स्वाभाविक रूपों में दिखाया है। वियोगावस्था में मन के भाव अपने प्रिय के प्रति अधिक स्फुरित होकर मुखरित होते हैं और उसकी स्मृति में अनेक परिकल्पनाएं होती रहती हैं। अपनी जन्मभूमि में मेघ को भेजने की एक छोटी सी घटना को कवि ने अपनी दुख गाथा में विस्तृत बनाकर किस प्रकार गाया है। जिससे यह एक सुन्दर गीतिकाव्य के रूप में प्रसिद्ध हो गया। शिव की शक्ति से देव उपकारक कुमार स्कन्ध का जन्म कुमारसम्भव में दिखाया है किन्तु देवगिरि में उसके मन्दिर को दिखाकर उसको वर्षा के द्वारा स्नान कराना भी कालिदास ने मेघ के द्वारा आवश्यक माना है :—

'तुम्हारे बरसने पर भाप निकलती हुई भूमि की सुगन्ध से सूड़ों के छिद्रों से सुन्दर ध्वनि करते हुए हाथी जिसका उपभोग कर रहे हैं और जंगली गुलरों को पकाने वाला शीतल वायु तुम्हारे नीचे-नीचे रहेगा जबकि तुम देवगिरि की ओर जाना चाहोगे।'[२]

कवि ने इस श्लोक में शिव की शक्ति से स्कन्द की उत्पत्ति को बताया है और अपनी शिवभक्ति को दिखाया है :—

'उस देवगिरि में नित्यवास करने वाले कार्तिकेय को पुष्पमेघ बनकर तुम स्वर्ग गंगा के जल कणों से भीगे हुए पुष्पों की मूसलाधार वर्षा करके स्नान कराना

---

१. तस्याः किञ्चित्करधृतमिव प्राप्तवानीरशाखं
नीत्वा नीलं सलिलवसनं मुक्तरोधोनितम्बम्।
प्रस्थानं ते कथमपि सखे लम्बमानस्य भावि
ज्ञातास्वादो विवृतजघनां को विहातुं समर्थः ।। पूर्वमेघ ४५ श्लोक

२. त्वन्निष्यन्दोच्छ्वसितवसुधागन्धसम्पर्करम्यः
स्रोतोरन्ध्रध्वनितसुभगं दन्तिभिः पीयमानः।
नीचैर्वास्यत्युपजिगमिषोर्देवपूर्वं गिरिं ते
शीतो वायुः परिणमयिता काननोदुम्बराणाम् ।। पूर्वमेघ ४६ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्योंकि वह स्कन्धरूप तेज सूर्य से भी प्रचंड है, जिससे भगवान् शिव ने देवसेना की रक्षा के लिए अग्नि के मुख में स्थापित किया था।'[१]

'पुष्पों से अभिषेक करने के पश्चात् तुम गर्जनाओं से, जो देवगिरि से टकराकर और भी बड़ी हो गई हों, कार्तिकेय के उस मोर को नचाया जिसके मंगलाकार चमकती रेखाओं वाले, स्वयं गिरे हुए पंखों को पार्वती पुत्र स्नेह के कारण अपने उस कान में लगाती हैं जिसमें कुवलय दल रखे जाते हैं।'[२]

राजा रन्तिदेव की कीर्ति की प्रतीक चर्मण्वती का जल भी झुककर ग्रहण करने के विषय में मेघ को यक्षरूपी कवि दिशा दिखाते हुए वर्णन कर रहा :—

सरकण्डों के वन में उत्पन्न स्कन्द की अराधना करके तुम आगे बढ़ोगे तो उनकी स्तुति को गाने आये हुए सिद्ध-स्त्री, पुरुष वर्षा होने के भय से स्वयं तुम्हारे मार्ग से हट जायेंगे। तब सहस्त्रों गोमेध यज्ञों में गौओं के बलिदान से उत्पन्न और पृथ्वी पर नदीरूप में परिणित हुई राजा रन्तिदेव की कीर्ति चर्मण्वती के प्रति सम्मान प्रकट करने की इच्छा से जल ग्रहण कर लेना।'[३]

प्रकृति का कवि और उपमा का धनी कालिदास—कृष्ण वर्ण (रंग) को चोरी करने वाले मेघको कवि कह रहा है और चर्मण्वती की छोटी धारा को पृथ्वी की एक लड़ी वाली मुक्ताहार मान रहा है :—

'कृष्ण के समान श्यामवर्ण वाले तुम जब पानी पीने के लिए नदी पर झुकोगे तब प्रकाश में चलने वाले सिद्ध-गन्धर्वादि सब ओर से दृष्टि हटाकर उस चर्मण्वती के प्रभाव को, जो अत्यन्त विस्तृत रूप में फैली होने पर भी दूर से पतला ही

---

१. तत्र स्कन्दं नियतवसतिं पुष्पमेघीकृतात्मा
पुष्पासारैः स्नपयतु भवान् व्योमगंगाजलार्द्रैः।
रक्षाहेतोर्नवशशिभृता वासवीनां चमूना—
मत्यादित्यं हुतवहमुखे संभृतं तद्धि तेजः॥ पूर्वमेघ ४७ श्लोक

२. ज्योतिर्लेखावलयि गलितं यस्य बर्हं भवानी
पुत्रप्रेम्णा कुवलयदलप्रापि कर्णे करोति।
धौतापांगं हरशशिरुचा पावकेस्तं मयूरं
पश्चादद्रिग्रहणगुरुभिर्गर्जितैर्नर्तयेथाः॥ पूर्वमेघ ४८ श्लोक

३. आराध्यैनं शरवणभवं देवमुल्लङ्घिताध्वा
सिद्धद्वन्द्वैर्जलकणभियाद् वीणिभिस्त्यक्तमार्गः।
व्यालम्बेथाः सुरभितनयालम्भजां मानयिष्यन्
स्रोतोमूर्त्याः सुरभितनयाम्भजां मानयिष्यन्
स्रोतोमूर्त्या भुवि परिणतां रन्तिदेवस्य कीर्तिम्॥ पूर्वमेघ ४९ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दीख रहा है, पृथ्वी के एक लड़ी वाले मुक्ताहार की तरह देखेंगे जिसके बीच में बड़ा सा नीलम लगा हो।'[1]

उस युग में स्त्री-पुरुषों का विभिन्न प्रकार के आभूषणों के प्रति अधिक आकर्षण था और वे अनेक रत्नों का उपयोग भी करते थे। चर्मण्वती को मुक्ताहार की एक लड़ी में नीलम को सौन्दर्यवर्धक के रूप में बीच में दिखाया है। कवि चर्मण्वती को पार करके पुनः मेघ को दशपुर का मार्ग बता रहा है :—

'चर्मण्वती को पार करके तुम दशपुर के मार्ग को जाना जहां कि आंखों को मटराने की कला में चतुर, पलक ऊपर उठाने में काली, लाल एवं सफेद रंग मिश्रित, विचित्र शोभा युक्त, कुन्द के सफेद फूल के साथ हिलते हुए काले भौंरे के समान, दशपुर की युवतियों की कौतूहलपूर्ण दृष्टि तुम पर पड़ेगी।'[2]

कालिदास ने दशपुर से ब्रह्मावर्त और वहां से कुरुक्षेत्र जाने का मेघ को मार्ग बताया है क्योंकि उनका मुख्य लक्ष्य जन्मभूमि के परिचय के साथ शीघ्र वहां चिन्तित पत्नी के पास सन्देश पहुंचाना है :—

'दशपुर से आगे जाकर तुम ब्रह्मावर्त प्रदेश को अपनी छाया से ढकते हुए क्षत्रियों के निधन सूचक कुरुक्षेत्र में पहुंचना, जहां गाण्डीवधारी अर्जुन ने अपने तेज बाणों को बरसा कर क्षत्रियों के सिरों को इस प्रकार काट गिराया था जैसे तुम मूसलधार बरसकर कमलों को नष्ट करते हो।'[3]

सरस्वती नदी के जल से बलराम ब्रह्म हत्या से छूट था। अतः उसके जल से तुम्हारा भी अन्तकरण पवित्र हो जायेगा। यहां कवि अपने शाप की मुक्ति पवित्र नदियों के जल से होना स्पष्ट कर रहा है :—

---

१. त्वय्यादातुं जलमवनते शार्ङ्गिणो वर्णचौरे
तस्याः सिन्धोः पृथुमपि तनुं दूरभावात्प्रवाहम्।
प्रेक्षिष्यन्ते गगनगतयो नूनमावर्ज्य दृष्टी—
रेकं मुक्तागुणमिव भुवः स्थूलमध्येन्द्रनीलम्॥ पूर्वमेघ ५० श्लोक

२. तामुत्तीर्य व्रज परिचितभ्रूलताविभ्रमाणां
पक्ष्मोत्क्षेपादुपरिविलसत्कृष्णशारप्रभाणाम्।
कुन्दक्षेपानुगमधुकरश्रीमुषामात्मबिम्बं
पात्रीकुर्वन् दशपुरवधूनेत्रकौतूहलानाम्॥ पूर्वमेघ ५१ श्लोक

३. ब्रह्मावर्तं जनपदमथच्छायया गाहमानः
क्षेत्रं क्षत्रप्रधनपिशुनं कौरवं तद् भजेथाः।
राजन्यानां शितशरशतैर्यत्र गाण्डीवधन्वा
धारापातैस्त्वमिव कमलान्यभ्यवर्षन्मुखानि॥ पूर्वमेघ ५२ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कौरव-पाण्डव दोनों हमारे भाई हैं, अतः युद्ध में किसी का वध नहीं करूंगा' यह प्रतिज्ञा कर युद्ध से विमुख हुए हलधर बलराम ने अत्यन्त प्रिय लगने वाली और रेवती के नयनों जैसे गुणों वाली मदिरा को छोड़कर जिन जलों का पान किया था हे सौम्य ! उस सरस्वती के जल का तुम भी पान करके अन्तःकरण से शुद्ध हो जाओगे केवल मात्र देखने में ही तुम काले रह जाओगे।'[१]

पूर्व वर्णित श्लोकों में कालिदास ने नदियों के स्नान को ब्रह्महत्या आदि पापों से छूटकारा माना है। उसी प्रकार, आधार एवं विश्वास पर कवि भी अपने शाप पाप-ताप को दूर करने के लिए कुरुक्षेत्र से इस मध्य प्रदेश के भूभाग में आया था।

जिस मार्ग से यक्षरूपी कालिदास पदयात्रा करता हुआ रामगिरि आश्रमों में पवित्र होने, शापमुक्त होने पर यश प्राप्त करने आया था उसी मार्ग से वह मेघ को अपनी जन्मभूमि में पत्नी के पास संदेश भेज रहा है :—

कालिदास का उत्तराखण्ड के प्रति आकर्षण

हिमालय से निकलने वाली अनेक नदियाँ दक्ष प्रजापति के कनखल सम भूमि पतित पावनी गंगा के नाम को धारण कर लेती हैं। अलकापुरी से आने वाली अलकनन्दा आदि अनेक नदियाँ हैं रुद्रप्रयाग में केदार और कालीमठ से आने वाली मन्दाकिनी आदि गंगा में देवप्रयाग में भागीरथी और अलकनन्दा के संगम से एक पापनाशिनी गंगा के रूप में ऋषिकेश, हरिद्वार होती हुई कनखल में अपना स्नान और सिंचाई की दृष्टि से जनकल्याणकारी रूप धारण करती है। उसे ही महाकवि कालिदास अपनी जन्मभूमि का मार्ग बताते हुए कनखल तक पहुँचा देता है :—

'कुरुक्षेत्र से आगे बढ़कर कनखल के पास हिमालय से उतरती हुई उस जाह्नवी को जाना, जिसने राजा सगर के पुत्रों को सीढ़ियों में चढ़ाकर स्वर्ग पहुँचा दिया और जो पार्वती की चढ़ी हुई भ्रकुटी की चिन्ता न करके उन्हें अपने फेन से हँसती हुई सी तरंगरूपी हाथों से चन्द्रमा को छूती हुई शिव के मस्तक पर शोभायमान है।'[२]

---

४. हित्वा हालामभिमतरसां रेवतीलोचनाङ्कां
बन्धुप्रीत्या समरविमुखो लाङ्गली याः सिषेवे।
कृत्वा तासामधिगममपां सौम्य सारस्वतीना-
मन्तः शुद्धस्त्वमपि भविता वर्णमात्रेण कृष्णः ॥ पूर्वमेघ ५३ श्लोक

१ —तस्माद् गच्छेरनुकनखलं शैलराजावतीर्णां
जह्नोः कन्यां सगरतनयस्वर्गसोपानपङ्क्तिम्।
गौरीवक्त्रभ्रुकुटिरचनां या विहस्येव फेनैः
शम्भोः केशग्रहणमकरोदिन्दुलग्नोर्मिहस्ता॥ पूर्वमेघ ५४ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यद्यपि गंगा-यमुना का संगम प्रयाग में है और महाकवि कालिदास की जन्म-भूमि में तो देवप्रयाग, रुद्रप्रयाग, कर्णप्रयाग, नन्दप्रयाग, विष्णुप्रयाग आदि कई प्रयाग हैं किन्तु मेघ के काले रंग को यमुना का रंग मानकर कनखल में गंगा का श्वेत जल दोनों के मेल को प्रयाग की कल्पना में ले लिया है :—

'ऐरावत हाथी की तरह पिछले भाग को आकाश में रख अगले भाग को नीचे लटकाते हुए यदि तुम उस गंगा के स्वच्छ स्फटिक जैसे जल को पीना चाहोगे तो सहसा सफेद पानी में फैलती हुई तुम्हारी काली छाया से वहीं पर गंगा-यमुना से मिलती हुई सी मनोहर प्रतीत होगी।'[1]

महाकवि कालिदास ने रामगिरि से कनखल तक का मार्ग एक भौगोलिक क्रम से वर्णन किया है और उसके पश्चात् मेघ को शीघ्रता से बर्फ से श्वेत फैले हुए हिमालय में पहुंचा कर काले एवं सफेद का मेल किस प्रकार जोड़ा। हिमालय के कस्तूरी मृगों का वर्णन तथा वहां की अनेक विशेषताओं का वर्णन वहां के निवासी के अतिरिक्त इतनी सूक्ष्म दृष्टि से कालिदास के समान और कौन कर सकता है ? :—

'कस्तूरी मृगों के बैठने से जिस हिमालय की शिलाएँ सुगन्धित हो गई हैं और वह गंगा जहां से निकलती है ऐसे श्वेत हिमालय पर पहुँच कर मार्ग की थकावट दूर करने के लिए किसी चोटी पर जब तुम बैठोगे तब शिव के सफेद बैल द्वारा ऊपर उछाले गये कीचड़ जैसे लगोगे।'[2]

महाकवि कालिदास ने अपने जीवन की अनुभूतियों और जन्मभूमि का एक क्रमबद्ध इतिहास मेघदूत में अपनी सच्ची आत्मकथा के रूप में स्पष्ट किया है। यक्ष और अलका का कथानक लेकर एक नया रूप देकर उसे अध्येताओं के समक्ष रखा है। इसे कालिदास के साहित्य का गहन अध्ययन करने वाले पाठक ही समझ सकते हैं।

हिमालय की केदारभूमि—उत्तराखण्ड में चीड़ और देवदारु के अधिक पेड़ होते हैं—देवदारु अधिक सुगन्धयुक्त होता है एवं शीतल हवा देता है। गर्मियों में

1—तस्याः पातुं सुरगज इव व्योम्नि पूर्वार्धलम्बी
त्वं चेदच्छस्फटिकविशद तर्कयेस्तिर्यगम्भः।
संसर्पन्त्या सपदि भवतः स्रोतसिच्छाययाऽसौ
स्यादस्थानोपगतयमुनासंगमेवाभिरामा॥ पूर्वमेघ ५५ श्लोक

2—आसीनानां सुरभितशिलं नाभिगन्धैर्मृगाणां
तस्या एव प्रभवमचलं प्राप्य गौरं तुषारैः।
वक्ष्यस्यध्वश्रमविनयने तस्य शृङ्गे निषण्णः
शोभां शुभ्रत्रिनयनवृषोत्खातपङ्कोपमेयाम्॥ पूर्वमेघ ५६ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कभी-कभी वृक्षों की टकराहट से वनाग्नि उत्पन्न हो जाती है और चमरा गायों की पूँछें झुलसने लगती हैं। ऐसी स्थिति में मेघ का पानी बरसाना हितकारी होता है :—

'हवा चलने से चीड़ के पेड़ों के टकराने से वनाग्नि उत्पन्न होगी और उसकी चिनगारियों से चँवरी गायों की पूँछें झुलसने लगेंगी, ऐसी स्थिति में तुम मुसलधार पानी बरसाकर उसे पूरी तरह बुझा देना क्योंकि पीड़ितों की पीड़ा को दूर करना महान् लोगों की समृद्धि का फल है।'[1]

शक्ति देने वाली कस्तूरी, शिलाजीत और चँवरी गायें भी महाकवि कालिदास की जन्मभूमि हिमालय उत्तराखण्ड के भूभाग में अधिक रूप में पाये जाते हैं। कवि अपनी जन्मभूमि की अनेक विशेषताएँ बताता है।

हिमालय में विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तु भी हैं और कई भयावह भी होते हैं अतः ऐसे बुरों को दण्ड भी दिया जाये तो बुरा नहीं माना जाता :—

'हे मेघ ! तुम्हारी गर्जना सुनकर अपने विनाश के लिए शरभों के समूह तुम्हें लांघकर आगे बढ़ने की इच्छा करें तो तुम जोर से ओले बरसा कर उन्हें नष्ट-भ्रष्ट कर देना। व्यर्थ के कार्यों को करने वाले सदा तिरस्कार के पात्र होते हैं।'[2]

प्राप्त कर ली है अपने कार्य में सिद्धि जिन्होंने ऐसे सिद्ध लोग कालीमठ सिद्धपीठ की ऊँची चोटी पर एवं महाकवि कालिदास के कविल्ठा ग्राम के सामने जिसे काली शिला भी कहते हैं। उस शिला पर भगवान् शंकर के चरण चिह्न हैं जिनकी सिद्ध लोग पूजा करते हैं।

महाकवि कालिदास ने रामगिरि में राम के चरण चिह्नों का और अपनी जन्मभूमि की निकट की ऊँची चोटी पर शिव के चरण चिह्नों का वर्णन कर अपनी कर्मभूमि एवं जन्मभूमि का महत्व स्पष्ट करते हुए अपनी आत्मकथा लिखी है। शिव और राम के एकत्व का भी सूक्ष्म निरूपण कर अभेद स्पष्ट किया है। सन्त तुलसीदास ने भी महाकवि कालिदास से प्रभावित होकर अपने रामचरित मानस नामक महाकाव्य में इसे इस प्रकार स्पष्ट किया है :—

१—तं चेद्वायौ सरति सरलस्कन्धसंघट्टजन्मा
बाधेतोल्काक्षपितचमरीबालभारो दवाग्निः।
अर्हस्येनं शमयितुमलं वारिधारासहस्रै-
रापन्नार्तिप्रशमनफला संपदो ह्यूत्तमानाम्॥ पूर्वमेघ ५७ श्लोक

२—ये संरम्भोत्पतनरभसाः स्वाङ्गभङ्गाय तस्मिन्-
मुक्ताध्वानं सपदि शरभा लङ्घयेयुर्भवन्तम्।
तान् कुर्वीथास्तुमुलकरकावृष्टिपाताबकीर्णान्
के वा न स्युः परिभवपदं निष्फलारम्भयत्नाः॥ पूर्वमेघ ५८ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सिव पद कमल जिन्हहि रति नाहीं। रामहिं ते सपनेहुं न सोहाहीं ॥
विनु छल बिस्वनाथ पद नेहू। राम भगत कर लच्छन एहू ॥[१]

काली शिला—महाकवि कालिदास ने ५९ श्लोक में शिव के चरण चिह्नों का जिस शिला पर वर्णन किया है, वह शिला केदारखण्ड के कालीमठ सिद्धपीठ और कविल्ठा ग्राम के निकट है। सिद्ध निरन्तर उसकी पूजा करते हैं और श्रद्धालु भक्त उसके दर्शन से पाप रहित होकर मुक्त हो जाते हैं कवि मेघ को उन चरण चिह्नों के दर्शन करने का भी विशेष आग्रह कर रहा है :—

('हिमालय के केदारखण्ड-कालीमठ और कविल्ठा ग्राम के निकट) वहाँ एक शिला में भगवान् शंकर का चरण चिह्न स्पष्ट दिखाई देता है, जिसकी सिद्ध लोग निरन्तर पूजा करते हैं एवं जिसका दर्शन होने पर भक्तजन मरने पर पाप रहित होकर स्थाई रूप से शिव के पार्षद हो जाते हैं। तुम भी उसकी भक्ति पूर्वक झुककर प्रदक्षिणा करना।'[२]

वास्तव में जिन लोगों ने पहले पद यात्रा और आज मोटर यात्रा करके हिमालय के बद्रीनाथ, केदारखण्ड और गुप्तकाशी से कालीमठ सिद्धपीठ एवं कविल्ठा ग्राम को देखा है, उन्हें महाकवि कालिदास द्वारा वर्णित शिला पर अंकित चरण चिह्नों को पहचानने में शंका तथा कठिनाई नहीं होगी। कालीमठ मन्दिर की ऊँची चोटी पर और महाकवि कालिदास के गाँव कविल्ठा के सामने नदी को पार करने पर कठिनाई से चढ़ने वाली पहाड़ी पर उस शिला के दर्शन होते हैं। कालिदास ने उस शिला का महत्त्व स्पष्ट किया है कि सिद्ध उसकी पूजा करते हैं और उसके दर्शनों से शिव के पार्षद होने का सौभाग्य प्राप्त होता है। अतः हे मेघ! जब तू मेरी जन्मभूमि में मेरे बताये हुए मार्ग से मेरा सन्देश देते जा रहा है तो तू भी उस शिला की प्रदक्षिणा करके अपने जीवन को सफल और भविष्य को क्यों नहीं सुधार लेता है ?

वह शिला कालीमठ मन्दिर से काफी चढ़ाई पर दुर्गम और निर्जन स्थान पर है, सहसा वहाँ जाने का कोई साहस नहीं करता है दूर से देख भले ही लेता है। ऊँची चोटी पर होने से मेघ के लिए वह सुगम है तथा मेघ को कवि कहता है 'जानामि त्वां प्रकृतिपुरुषं कामरूप्यं मघोन' और इसके साथ ही साथ 'द्रक्ष्यसि भ्रातृजायाम्' मेघ के साथ अपने गुप्त सन्देश भेजने के लिए छोटे भाई का सम्बन्ध

१—रामचरितमानस बालकाण्ड १०३ दोहा ३ चौपाई

२—तत्र व्यक्तं दृषदि चरणन्यासमर्धेन्दुमौलेः
शश्वत्सिद्धैरुपचितबलिं भक्तिनम्रः परीयाः।
यस्मिन् दृष्टे करणविगमादूर्ध्वमुद्धूतपापाः
संकल्पन्ते स्थिरगणपदप्राप्तये श्रद्धधानाः ॥ पूर्वमेघ ५९ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जोड़ता है। कृतज्ञता के कारण अपने उपकार का बदला उसे अनेक तीर्थों के दर्शनों से आनन्दित तो करता ही हैं किन्तु अपनी जन्मभूमि में शिव चरण चिह्नों की परिक्रमा कर शिव के गण होने का पुण्य भी प्राप्त कराता है। उपकार के रूप में मेघ रूपी छोटे भाई को बन्धनों से भी मुक्त कराता है तथा स्वयं भी मुक्त होता है। श्रद्धालु जनों में उस क्षेत्र की उस शिव चरण चिह्नों से अंकित शिला के प्रति भी अनुराग उत्पन्न करना था। ऐसे सिद्ध पुरुषों से पूजित स्थानों का कालिदास को अच्छा ज्ञान था।

वास्तव में उस शिला का महत्त्व अनेक दर्शन करने वाले सिद्ध जनों ने अपनी अनुभूति के द्वारा सही बताया है। सिद्धि कठिनाई से साधना करने पर ही होती है और सिद्धि करने वाला साधक सफलता मिलने पर स्वयं सिद्ध बन जाता है। महाकवि कालिदास ने मेघदूत और कुमारसम्भव में सिद्ध जाति के लोगों का अधिक वर्णन किया है। सम्भवतः वे साधना करके सिद्धि प्राप्त करने वाले यही सिद्ध लोग रहे होंगे। कुछ लोगों ने उस शिला के सान्निध्य में निरन्तर एक मास रहने पर भी इच्छानुसार सिद्धि प्राप्त होने की परम्पराओं का उल्लेख किया है। कालीमठ की काली और उसकी दुर्गम चोटी पर की यह शिला दोनों श्रद्धालु जनों को सचमुच सिद्धि प्रदान कर देती है। महाकवि कालिदास ने मेघदूत के प्रारम्भ में अपने शापित जीवन और मध्य में उज्जयिनी के वैभव एवं अन्त में अपनी आत्मकथा लिखकर कालीमठ की काली और शिव चरणों से अंकित काली शिला का महत्त्व अपने पाठकों के समक्ष रखा है। विश्वास ही सही रूप में फल देने वाला होता है। एक ही चीज पात्र की दृष्टि से अपना भिन्न भिन्न फल दिखाती है। बाल्यकाल का मन्दमति बालक प्रकृति में विचरण करने वाला सिद्धपीठ कालीमठ की काली की निष्ठापूर्वक आराधना करने से ही जिह्वा में सरस्वती को प्राप्त कर अपनी अमूल्य रचनाओं के द्वारा विश्व विख्यात हो गया और कवियों के कुल का गुरु बन गया। यह सब सिद्ध स्थलों में साधना करने वाले साधकों की सिद्धि का ही फल है। यह भी अनेक जन्मों की ही संसिद्धि है।[1]

यही साधक ही सिद्ध कोटि में आ जाते हैं। तभी इन सिद्धों का कालिदास ने अपने ग्रन्थों में अधिक वर्णन करके स्मरण किया है।

कुछ विद्वानों ने पूर्वमेघ के इस ५९ 'तत्र व्यक्तं हृषदि चरणन्यासः' श्लोक का सम्बन्ध हरिद्वार में हरि की पोड़ी से भी जोड़ा है। श्री विलसन ने भी उन शिव चरण चिह्नों को हरिद्वार से ही सम्बन्धित माना है। जहाँ मार्ग निर्देशन में गंगा का वर्णन कनलख में किया गया है क्या कवि हरिद्वार का भी वर्णन करते

१—अनेक जन्म संसिद्धि ततो याति परांगतिम्। गीता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
हुए उसे वहीं पर नहीं बता सकता था ? अपने जन्मभूमि के निकट के भूभाग से उसे क्यों जोड़ता ? अतः यह युक्ति संगत और प्रसंग के अनुरूप प्रतीत नहीं होता है । यह पाश्चात्य विद्वान् की मनवांछित परिकल्पना है ।

वास्तव में निष्पक्ष भाव से देखा जाए तो महाकवि कालिदास के विचारों का गहन अध्ययन, उसकी भावनाओं का महत्त्व, परिस्थितियों का चिन्तन और कुमारसम्भव एवं मेघदूत में वर्णित स्थानों को देखकर ही सही स्थिति समझ में आ सकती है। महाकवि कालिदास द्वारा वर्णित स्थानों का जिज्ञासु बनकर परिभ्रमण करने वाला तथा महाकवि की भावनाओं को सूक्ष्म दृष्टि से समझने वाला और उनका समादर करने वाला ही सही निष्कर्ष पर पहुँच सकता है। कल्पना और दूसरों के पक्षपात पूर्ण लिखे पर कैसे विश्वास किया जाए ? पाश्चात्य संस्कृत के विद्वानों ने उन दुर्गम स्थानों में जाकर तो कुछ नहीं देखा है । यदि देखा भी है तो जहां तक यातायात के साधन उपलब्ध हुए हैं। विलसन महोदय ने हरिद्वार की हर की पौड़ी पर चरणचिह्न देखकर ही इस श्लोक को उससे जोड़ दिया हो। या हरिद्वार में हर की पौड़ी पर चरण चिह्न देखकर उन्हें ही शिव चरण चिह्न मान लिया हो।

विगत कई वर्षों से अधिक अन्वेषण और उत्तरप्रदेश गढ़वाल के अनेक विद्वानों ने अपनी विभिन्न पुस्तकों में महाकवि कालिदास को हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल केदारखण्ड कालीमठ के निकट के कविल्ठा ग्राम का निवासी सिद्ध किया है। अब प्रत्येक वर्ष इस ग्राम में ही महाकवि कालिदास जन्म भूस्मारक समिति द्वारा बड़े ही उत्साह से भारत भर के विद्वानों को आमन्त्रित कर यह समारोह मनाया जाता है। किसी प्रकार यदि कोई जिज्ञासु विद्वान् समिति की भूल से छूट गये हों और वे महाकवि के ग्रन्थों के आधार पर केदारखण्ड के स्थानों को देखना चाहें तो वे अध्यक्ष या महामन्त्री महाकवि कालिदास जन्म भू स्मारक समिति कालिदास ग्राम कविल्ठा, गुप्तकाशी, कालीमठ, कोटमा, चमोली, गढ़वाल (उत्तर प्रदेश) को पत्र लिखे। जिससे सही तथ्य विचार-विमर्श के बाद प्रकाश में आयेंगे और भ्रमात्मक धारणायें दूर होंगी। हमने कवि शिरोमणि कालिदास के समस्त ग्रन्थों का वर्षों गहन अध्ययन करके एवं उसके वर्णित भूभाग का सूक्ष्म दृष्टि से जिज्ञासु बनकर परिभ्रमण करने के ही पश्चात् 'कालिदास और उसका मानवीय साहित्य' एवं 'कालिदास की आत्मकथा तथा मेघदूत' इन दो पुस्तकों में सही तथ्यों को दिखाने का प्रयास किया है। गहन अध्ययन, प्राप्त प्रचुर सामग्री तथा अपनी आँखों से देखे हुए स्थानों का परिशीलन करने पर ही यह सब लिखा है। आज का युग वैज्ञानिक है और इसमें यातायात की पूर्ण सुविधाएँ तथा व्यक्ति के पास धन भी पर्याप्त है एवं आज भ्रमण की भावनायें भी हम लोगों में विकसित होती जा रही हैं। अतः

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संस्कृत साहित्य से और विशेषकर महाकवि कालिदास के साहित्य से रुचि रखने वाले तथा महाकवि की आत्मकथा का सही लाभ लेने वाले विद्वानों को पूर्वाग्रह छोड़कर नवीन अवधारणाओं की सही स्थापना करनी चाहिए।

इस महाकवि कालिदास की आत्मकथा और मेघदूत के अन्त में उत्तराखण्ड गढ़वाल के तीर्थों का महत्व में हरिद्वार, ऋषिकेश और देहरादून से मार्गदर्शन के लिए विस्तृत विवरण भी दिया हुआ है।

केदारखण्ड और उसके निकट का भूभाग—शिव का ताण्डव नृत्य प्रसिद्ध है जिससे व्याकरण के १४ सूत्र और अनेक ६४ कलाओं का जन्म हुआ है। रावण ने शिवताण्डव स्त्रोत से ही शिव को प्रसन्न कर वरदान पाया था। वांसों में हवा भरने से मधुर शब्द हो रहे हैं तुम्हारे गर्जन से वाद्ययन्त्र की पूर्ति हो जायेगी और शिव के नृत्य के लिए साज-सज्जा तैयार हो जायेगी :—

'जिस हिमालय में वांसों के छिद्रों में हवा भरने से मधुर शब्द हो रहा है, किन्नरियां समवेत स्वर से त्रिपुर विजय के गीत गा रही है, वहीं यदि गुफाओं में प्रति ध्वनित तुम्हारी गर्जना मृतंग की ध्वनि का काम कर दे तो शिव से ताण्डव के लिए सारा संगीत का साज एकत्रित हो जायेगा।'[1]

मेघदूत और कुमारसम्भव के अधिक श्लोकों में हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल के भूभाग का अधिक वर्णन हुआ है। इस सभी के आधार पर पूर्ण रूप से महाकवि कालिदास केदारखण्ड का ही निवासी सिद्ध होता है। १९४७ के पचात् कालिदास पर लिखने वाले लोगों ने एक स्वर और एक मत से अब कालिदास को हिमालय का निवासी मान लिया है कालिदास के समस्त ग्रन्थ इसके प्रमाण हैं। महाकवि कालिदास को उत्तर दिशा या उत्तराखण्ड ही अधिक प्रिय क्यों है?

'हिमालय के किनारों के आस-पास विभिन्न प्रकार की सुन्दर वस्तुओं और प्राकृतिक दृश्यों को देखकर तुम उस क्रौंच पर्वत के रन्ध्र (छेद) से जो कि परशुराम के पराक्रम का प्रत्यक्ष प्रमाण है तथा बरसात में हंस जिसके द्वारा मानसरोवर को जाते हैं, तिरछे और लम्बे होकर उत्तर दिशा की ओर चलना। उस समय राजा बलि को बांधने के लिए तैयार विष्णु के श्याम पैर की तरह तिरछे और लम्बे तुम अच्छे दिखोगे।'[2]

---

१. शब्दायन्ते मधुरमनिलैः कीचकाः पूर्यमाणाः
संरक्ताभिस्त्रिपुरविजयो गीयते किन्नरीभिः।
निर्ह्रादस्ते मुरज इव चेत्कन्दरेषु ध्वनिः स्यात्
सङ्गीतार्थो ननु पशुपतेस्तत्र भावी समग्रः॥ पूर्वमेघ ६० श्लोक

२. प्रालेयाद्रेरुपतटमतिक्रम्य तांस्तान्विशेषान्
हंसद्वारं भृगुपतियशोवर्त्म यत्क्रौंचरन्ध्रम्।
तेनोदीचीं दिशमनुसरेस्तिर्यगायामशोभी
श्यामः पादो बलिनियमनाभ्युद्यतस्येव विष्णोः॥ पूर्वमेघ ६१ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'क्रौंच पर्वत के रन्ध्र से निकलकर आकाश में ऊपर उठते हुए तुम उस कैलास में पहुँचना, जिसके जोड़-जोड़ रावण के हाथों से ऊपर उठाकर हिलाने से ढीले पड़ गये हैं, जो अधिक ऊँचा और स्वच्छ है कि देवांगनाएँ उसमें अपना मुख देखा करती हैं एवं जो अपनी ऊँची-ऊँची सफेद चोटियों से आकाश को छूता हुआ ऐसा लगता है कि मानो शिव के प्रतिदिन के हंसी के ढेर जमा होते जा रहे हैं।'[१]

हिमालय, अलकापुरी, क्रौंचरध्र, कैलास और मानसरोवर का इतना सूक्ष्म वर्णन बिना पूर्व निरीक्षण के उस क्षेत्र के प्रकृति निरीक्षक (घुमक्कड़) व्यक्ति के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं कर सकता है। इस प्रकृति का सच्चा चितेरा महाकवि कालिदास के अतिरिक्त और कौन हो सकता था? शिव का अनन्य भक्त होने और उस भूभाग का सूक्ष्म निरीक्षण करने के कारण महाकवि कालिदास ही इन सबका सजीव वर्णन करने में सफल हुआ है। उसकी आत्मकथा और उसके पूर्व वर्णित श्लोक इसके सबल प्रमाण है।

'पीसे हुए कोमल काजल जैसे तुम जब कैलास पर्वत के समीप पहुँचोगे तब उसी समय काटे हुए हाथी दांत जैसे सफेद उसकी शोभा ऐसी हो जायेगी जैसे बलराम अपने कन्धे पर साँवला वस्त्र लटकाए हों, ऐसा मैं समझता हूँ।'[२]

उपमा का धनी और काव्यकला का सिद्धहस्त महाकवि कालिदास प्रकृति के सानिध्य, सरस्वती की सच्ची साधना और बहुमुखी प्रतिभा के द्वारा प्रसंग के अनुरूप उत्तराखंड गढ़वाल का कवि सटीक एवं हृदय स्पर्शी उपमाएँ गढ़ देता है—

'उस कैलास पर्वत पर, पार्वती कहीं डर न जाये, अतः अपने सर्पयुक्त आभूषण उतारकर शिव द्वारा हाथ का सहारा दी गई पार्वती यदि पैदल ही चल रही हो तो तुम उनके आगे-आगे चलना और उसके अपने जल के वेग को अन्दर ही रोककर अपने शरीर को टेढ़ामेढ़ा करके सीढ़ी जैसे बन जाना, जिससे वे तुम पर पैर रखकर मणिमय शिखर पर सुगमता से चढ़ जायेगेगी।[३]

---

१. गत्वा चोर्ध्वं दशमुखभुजोच्छ्वासितप्रस्थसन्धेः
कैलासस्य त्रिदशवनितादर्पणस्यातिथिः स्याः।
शृङ्गोच्छ्रायैः कुमुदविशदैर्यो वितत्य स्थितः खं
राशीभूतः प्रतिदिनमिव त्र्यम्बकस्याट्टहासः॥ पूर्वमेघ ६२ श्लोक

२. उत्पश्यामि त्वयि तटगते स्निग्धभिन्नाञ्जनाभे
सद्यः कृत्तद्विरदरदनच्छेदगौरस्य तस्य।
शोभामद्रेः स्तिमितनयनप्रेक्षणीयां भवित्री-
मंसन्यस्ते सति हलभृतो मेचके वाससीव॥ पूर्वमेघ ६३ श्लोक

३. हित्वा तस्मिन् भुजगवलयं शम्भुना दत्तहस्ता
क्रीडाशैले यदि च विहरेत्पादचारेण गौरी।
भङ्गीभक्त्या विरचितवपुः स्तम्भितान्तर्जलौघः
सोपानत्वं कुरु मणितटारोहणायाग्रयायी॥ पूर्वमेघ ६४ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाकवि कालिदास कुमारसम्भव के शाप-ताप और पाप से बहुत सतर्क हुआ और उसने शिव-पार्वती वे प्रसंगों में मेघदूत में बड़ी ही संयमित आदर पूर्ण भाषा, भावों तथा उपमादि का वर्णन किया है एवं शिव-पार्वती के प्रति अपनी अनन्य भक्ति दिखाई है।

'उस कैलास में देवाङ्गनाओं के कंकणों की तीखी नोकों के टकराने से स्थान-स्थान से जल गिराते हुए तुम्हें जल प्रपात बनाकर स्नान करने का काम लेंगी। हे मित्र ! गर्मी में मिले हुए यदि तुम्हारा उनसे छुटकारा न हो तो क्रीड़ा में उन्मत्त हुई उनको कठोर गर्जनाकर डरा देना।'[1]

मेघ को यक्षरूपी महाकवि कालिदास ने अपनी विरह की व्यथा के कारण रामगिरि से कैलास और अलकापुरी तक अपने हृदय के सभी प्रकार के विचारों को व्यक्त कर मेघ के मनोरंजन के साथ अपना भी अच्छा मनोरंजन अपनी कविता द्वारा किया है :—

'हे मेघ ! स्वर्ण कमलों को उत्पन्न करने वाले मानसरोवर के जल को लेते हुए, ऐरावत हाथी का मुख का कपड़ा बनकर आनन्द देते हुए, कल्पवृक्ष के नवीन कोमल पत्ते रूपी सूक्ष्म वस्त्रों को अपनी शीतल हवाओं से हिलाते हुए तुम अनेक प्रकार की चेष्टाओं से पूरे विलास के साथ उस श्रेष्ठ कैलाश पर्वत का आनन्द लेना।'[2]

कालिदास रूपी यक्ष अपनी अलका का अनेक प्रकार की उपमायें देकर वर्णन कर रहा है :—

'हे स्वेच्छाचारी मेघ ! जिस प्रकार कोई कामिनी, जिसका की दुकूल खिसक गया हो और वह अपने प्रियतम की गोद में बैठती है, उसी प्रकार गंगारूपी वस्त्र-जिसका निकल गया है, ऐसा कैलास के उत्संग में स्थित उस अलका को तुम नहीं पहचान सकोगे, ऐसा नहीं है। जो कि ऊँचे-ऊँचे सात मंजिल वाले भवनों से भरी हुई वर्षाकाल में जल की बूंदे टपकाते हुए मेघ समूह को इस प्रकार धारण कर

---

१. तत्रावश्यं वलयकुलिशोद्घट्टनोद्गीर्णतोयं
नेष्यन्ति त्वां सुरयुवतयो यन्त्रधारागृहत्वम्।
ताभ्यो मोक्षस्तव यदि सखे धर्मलब्धस्य न स्यात्
क्रीडालोलाः श्रवणपरुषैर्गर्जितैर्भाययेस्ताः॥ पूर्वमेघ ६५ श्लोक

२. हेमाम्भोजप्रसवि सलिलं मानसस्याददानः
कुर्वन् कामं क्षणमुखपटप्रीतिमैरावतस्य।
धुन्वन् कल्पद्रुमकिसलयान्यंशुकानि स्ववातै-
र्नानाचेष्टैर्जलद ललितैर्निर्विशेस्तं नगेन्द्रम्॥ पूर्वमेघ ६६ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लेती है जैसे कि कोई मानरहित कामिनी मोतियों की जालियों से गुंथे हुए बालों को धारण करती है।[1]

महाकवि कालिदास के ग्राम कविल्ठा के नीचे मन्दाकिनी की एक धारा जो खाम से होती हुई कोटमाहेश्वरी देवी के पास दो नदियों के संगम के पश्चात् कविल्ठा ग्राम के नीचे ठीक ऊपर वर्णित श्लोक के समान दिखती है। वह गंगा पुनः कालीमठ सिद्धपीठ में अपने चन्द्राकार रूप में काली के चरणों को छूती हुई और उसकी परिक्रमा करती हुई बड़े ही वेग से प्रवाहित होती है।

कविल्ठा गांव भी अधिक ऊँचाई चोटी पर है जो कई मंजिले भवनों के समान केदार खण्ड से आने वाली नदियों के ऊपर है। वहाँ कविल्ठा में मकान भी एक दूसरे के ऊपरी भाग में कई मंजिलों के रूप में स्पष्ट दिखते हैं।

पूर्वमेघ में महाकवि ने अपनी जन्मभूमि गढ़वाल से कर्मभूमि उज्जयिनी जाने का वर्णन रामगिरि आश्रम में अपने शपित जीवन के दारुण दुखों को आषाढ़ के प्रथम दिन मेघ को देखकर उसे अलकापुरी जाने के लिए सन्देश देने से पूर्व मार्ग निर्देश करता है। पूर्वमेघ में कालिदास के कर्मभूमि का भौगोलिक वर्णन कर जन्मभूमि में जाने का अपनी आत्मकथा द्वारा सही वर्णन किया है। इसे समझना न समझना अध्येता की सूक्ष्म दृष्टि पर निर्भर करता है। हमें आशा है कि उस अध्ययन से पूर्वाग्रहियों की भ्रमात्मक धारणायें भी दूर होंगी और सही तथ्य प्रकाश में आयेंगे। हमने मेघदूत के श्लोकों को मूलरूप में इसलिए ही प्रस्तुत किया है कि जिससे प्रसंग को मिलाने एवं हमारे गहन अध्ययन द्वारा की गई समीक्षा भी पाठकों के अच्छी प्रकार से भ्रम निवारण में सहायक सिद्ध हो पूर्वाग्रही, दम्भी, दूसरों की बुद्धि पर चलने वाले गुण न देखने वाले और दूसरों में दोष ही देखने वालों को विधाता नहीं समझा पाया है पुनः हम कैसे ऐसा साहस कर सकते हैं किन्तु फिर भी सहृदय, गुणग्राही और अन्वेषण दृष्टि रखने वालों के लिए हमने एक सही दिशा दिखाने का एक प्रयास करने की अवश्य चेष्टा की है। हमें आशा है इससे महाकवि कालिदास के ग्रन्थों का अध्ययन करने वाले सहृदय जिज्ञासुओं को सही तथ्य मिलेंगे।

कविल्ठा तेरा गांव है ऊँची चोटी पर तेरा मकान हैं।
उसके वैभव में मेघ मिटाते वहाँ निज थकान हैं॥

---

१. तस्योत्सङ्गे प्रणयिन इव स्रस्तगंगादुकूलां
न त्वं दृष्ट्वा न पुनरलकां ज्ञास्यसे कामचारिन्।
या वः काले वहति सलिलोद्गारमुच्चैर्विमाना
मुक्ताजालग्रथितमलकं कामिनीदाभ्रवृन्दम्॥ पूर्वमेघ ६७ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तृतीय अध्याय

उत्तरमेघ और कालिदास की आत्मकथा

यक्ष की अलका और कवि की कविल्ठा का वर्णन

पूर्वमेघ में यक्षरूपी कालिदास ने अपने दारुण दुखयुक्त आत्मकथा का विस्तृत रूप में वर्णन कर अपनी जन्मभूमि में जाने का मेघ को शीघ्र सन्देश पहुँचाने के लिए विस्तृत रूप में मार्ग निर्देश किया है। रामगिरि से उज्जयिनी का उस युग की सभी दृष्टियों से विकसित नगरी का भी आँखों देखा वर्णन करना काव्य की, जन्मभूमि के परिचय, भौगोलिक, एवं एक क्रमबद्ध ऐतिहासिक दृष्टि से आवश्यक समझा है। जिस प्रकार पूर्वमेघ में अपने शपित जीवन, दारुण दुख, जन्मभूमि में जाने का मार्ग एवं अपने आश्रयदाता पराक्रम के सूर्य विक्रमादित्य की वैभवपूर्ण नगरी का वर्णन किया है। ठीक उसी प्रकार उत्तरमेघ में हिमालय के उत्तराखण्ड भूभाग के सन्निकट की यक्षों की विशाल अलका नगरी का भी बहुत विस्तृत रूप में वर्णन किया है। इसके साथ ही साथ अपने अद्वितीय आवास एवं अपनी कला-विज्ञा पत्नी का सही परिचय देकर संदेश देने की विधि बताई है। यक्ष मेघदूत गीतिकाव्य का मुख्य पात्र है एवं उसका शपित, प्रवासी तथा एक वियोगी जन की दारुण दुख भरी कथा ही इसका वर्ण्य विषय है। अतः अपनी आत्मकथा से सम्बन्धित होने पर ही यक्षों की नगरी तक मेघ का पहुँचाना भी आवश्यक था। महाकवि कालिदास ने हिमालय के उत्तराखण्ड का निवासी होने पर ही अपनी रचनाओं में अपनी जन्मभूमि के अधिक से अधिक भूभाग का सचित्र वर्णन किया है। कालिदास ने उस पर्यावरण में रहकर उसके सही वैभव को अति ही सूक्ष्मरूप में अति सन्निकट से देखा है, ग्रहण किया एवं गीतिकाव्य के रूप में मेघदूत में अभिव्यक्त भी किया है।

पूर्वमेघ में महाकवि कालिदास ने पार्वती-परमेश्वर के शाप से पीड़ित होकर हिमालय के भूभाग को छोड़कर जिस मार्ग से स्वयं यात्रा की थी ठीक उसी मार्ग से ही मेघ को जन्मभूमि में जाने के लिए दिखा रहा है और मेघ को उसी से जाने का दिशा निर्देश भी कर रहा है। अपने प्रवासी जीवन का पूर्वमेघ में सच्ची आत्मकथा के रूप में कालिदास ने कश्चित् किसी यक्ष का नाम देकर अपनी दारुण दुखभरी व्यथा गीतिकाव्य के रूप में गाई हैं।

महाकवि कालिदास ने यक्ष के रूप में मध्यप्रदेश के भूभाग में जो कुछ भी अपनी आँखों से देखा है, उसे पूर्वमेघ में स्वाभाविक विस्तृत रूप में वर्णन किया

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

है। मेघदूत के उस मध्यप्रदेश के बनों, नदियों, पहाड़ों, गाँवों और नगरों के वर्णन से ही अबतक विद्वानों ने एकपक्षीय दृष्टि से महाकवि कालिदास को उज्जयिनी का निवासी सिद्ध किया है किन्तु उसका मूल जन्म स्थान अलका के सन्निकट का केदारघाटी का भूभाग कविल्ठाग्राम ही है, जिसमें वह मेघ को रामगिरि से मनोरंजन के साथ ही साथ अनेक स्थानों को दिखाता हुआ उज्जयिनी में पहुँचा देता है और ब्रह्मार्ण से कुरुक्षेत्र का महत्त्व बताते हुए उसे कनखल में पहुँचाकर पतित पाविनी गंगा का गुणगान करता हुआ अपनी जन्मभूमि के अनेक स्थानों का वर्णन कर रामगिरि राम के चरण चिह्नों के देखने के पश्चात् अपनी जन्मभूमि उसशिला के दर्शन करने के लिए मेघ को आग्रह करता है, जिस पर शिव के चरण चिह्न बने हैं और जिनकी सिद्धों द्वारा साधना होती है। वही शिला हिमालय के केदारखण्ड कालीमठ के निकट कालीशिला के नाम से आज भी प्रसिद्ध है।

वैभव पूर्ण उज्जयिनी ने तेरे शैशव को नहीं जाना।
तभी हिमालय में तेरी जन्मभूमि को नहीं पहचाना॥
तेरे राज्याश्रय को तेरी कर्मभूमि ने अच्छा पहचाना।
तभी मेघदूत के वर्णन से तुझे उज्जैन का है माना॥

अलकापुरी और मेघ के गुणों का वर्णन करना भी यक्ष आवश्यक समझ रहा है क्योंकि अलका उसकी अपनी नगरी है उसका वैभव पूर्ण इतिहास वर्णन करना ही है तथा दूसरी ओर जिस दूत के द्वारा अपनी पत्नी के पास सन्देश भेजना है, उसके विशेष गुणों का वर्णन करना भी आवश्यक है क्योंकि उत्साहित होकर ही तो वह शीघ्रगति से जायेगा। प्रोत्साहन, पुरस्कार और किसी की प्रशंसा करना भी एक कार्य लेने की कला है तथा दूसरा व्यक्ति इससे अपना महत्त्व समझ कर यश प्राप्ति के लिए अधिक उत्साहित होता है। इस प्रकार वर्णन उत्साहवर्धक और जिज्ञासा को बढ़ाने वाला भी होता है। महाकवि कालिदास ने अपनी आत्मकथा के साथ ही साथ मानवशास्त्र के प्रति भी अधिक रुचि ली है तथा चौसठ कलाओं के प्रति अपने विशद् ज्ञान को भी अभिव्यक्त किया है। कवि मेघ को अलकापुरी की विशेषतायें बताता है क्यों ? :—

'अलकापुरी के महल अपनी विशेषताओं के कारण तुम्हारी समता करने में पूर्ण समर्थ हैं। यदि तुममें विद्युत की चंचलता है तो अलका के महलों में सुन्दरी रमणियों की चेष्टाएँ हैं। तुममें रङ्गविरङ्गा इन्द्र धनुष है तो उनमें रंगविरंगे चित्र हैं। तुम स्निग्ध गम्भीर घोष करते हो तो वहाँ संगीतकला का मृदंग बजता है। तुम्हारे भीतर जलभरा है तो उनके फर्श मणिमय हैं। तुम ऊँचाई पर हो तो उसकी छतें आकाश को छू रही हैं।'[1]

---

१. विद्युत्वन्तं ललितवनिताः सेन्द्रचाप सचित्राः
संगीताय प्रहतमुरजाः स्निग्धगम्भीरघोषम्।
अन्तस्तोयं मणिमयभुवस्तुंगमभ्रंलिहाग्राः
प्रासादास्त्वां तुलयितुमलं यत्र तैस्तैर्विशेषैः॥ उत्तरमेघ १ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

केदारखण्ड में ऋतु और पुष्पों का महत्व—केदारखण्ड की भूमि में ६ ऋतुओं के अनुरूप विभिन्न प्रकार के पुष्पों की भरमार रहती है, इसे महाकवि कालिदास ने इस प्रकार स्पष्ट किया है। क्योंकि पूजा के पुष्पों के कारण ही बेचारे यक्ष को कर्तव्य भ्रष्ट होने की यातना सहन करनी पड़ी थी :—

'अलकापुरी की रमणियाँ वहाँ ऋतुओं में उत्पन्न होने वाले पुष्पों का उपभोग करती रहती हैं, जैसे—उनके हाथों में लीला के लिए कमल हैं, जो शरद् में होता है। बालों में कुन्द हैं जो हेमन्त ऋतु में होता है, मुख में लोध के पराग का चूर्ण मला गया है जो शिशिर में होता है। जूड़ों में कुरबक के फूल गुथे हैं जो बसन्त में होते हैं, कान में शिरीष ग्रीष्म में खिलता है और माँग में कदम्ब का पुष्प है जो वर्षा में खिलता है।

पुष्प सौन्दर्यवर्धक, देव उपासना और हृदय को आह्लादित करने के लिए परमावश्यक हैं। पुष्प अपने विविध रंगों में तथा रूपों में देखने वालों को भी आनन्द देते हैं और प्रकृति के सौन्दर्यमय वैभव को दिखाते हैं। वही पुष्प मानव को आकर्षित कर वनों से अब गृह उद्यानों में शोभा पाने लगे हैं।

स्वयं बेचारे यक्ष को भी कुबेर की पूजा में नियत समय पर पुष्प न पहुँचाने के ही कारण शापयुक्त जीवन भोगना पड़ा था। देव और मानव दोनों ही पुष्पों से प्रसन्न होते हैं। भारत भूमि का यह सब से बड़ा सौभाग्य है कि प्रकृति ने अपने प्राकृतिक वैभव का समस्त सुख भोगने का सुयोग दिया है। ये छः ऋतुएँ अन्यत्र कहीं नहीं हैं। ऋतुसंहार में इन्हीं छः ऋतुओं पर महाकवि कालिदास ने विस्तृत स्वाभाविक रूप में सुन्दरतम वर्णन किया है।

मेघदूत में अलका के प्राकृतिक सौन्दर्य का भी कालिदास ने इस प्रकार वर्णन किया है :—

'उस अलका में वृक्षों पर सदा फूल खिले रहने से मस्त भौंरे गुंजते रहते हैं। पर्वतीय बावड़ियों में सदा कमल खिले रहते हैं और हंसों की पंक्तियाँ करधनी सी दीखती हैं। पालतू मोर सदा अपने चमकीले पंखों को फैलाए ऊपर को गर्दन उठा कर कूजते रहते हैं एवं जहाँ सन्ध्यायें सदा रहने वाली चाँदनी से अँधेरा हो जाने के कारण रमणीय लगती हैं।'[२]

---

१. हस्ते लीलाकमलमलके बालकुन्दानुविद्धं
नीता लोध्रप्रसवरजसा पाण्डुतामानने श्रीः।
चूडापाशे नवकुरबकं चारु कर्णे शिरीषं
सीमन्ते च त्वदुपगमजं यत्र नीपं वधूनाम् ॥ उत्तरमेघ २ श्लोक

२. यत्रोन्मत्तभ्रमरमुखराः पादपा नित्यपुष्पा
हंसश्रेणीरचितरशना नित्यपद्मा नलिन्यः।
केकोत्कण्ठा भवनशिखिनां नित्यभास्वत्कलापा
नित्यज्योत्स्नाप्रतिहततमोवृत्ति रम्याः प्रदोषाः ॥ उत्तरमेघ ३ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कविल्ठा ग्राम में आज भी सदा चाँदनी इसी प्रकार अन्धकार को दूर कर अधिक समय तक रहती हुई एवं अति ही रमणीय लगती हैं।

यक्ष और मानव के गुण—जैसे देवता सदा अजर अमर रहते हैं वैसे ही अलकापुरी में यक्ष आनन्द से रहते हैं। इस प्रकार दुःख न भोगने पर भी मेघदूत का यक्ष शाप के ताप से पीड़ित है क्यों? क्यों कि वह स्वयं यक्ष रूपी कालिदास हैं :—

'अलका में रहने वाले यक्षों के आँखों से आँसू आनन्द में ही निकलते हैं। किन्तु किसी दुःख के कारण नहीं। प्रियजनों के समागम से मिटने वाला काम के ताप के अतिरिक्त उन्हें कोई दूसरा ताप नहीं होता। प्रणय कलह के सिवा कभी प्रेमियों को विरह का अनुभव नहीं होता है। वे सदा युवा ही रहते हैं।'[1]

इस श्लोक के अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि विरह व्यथा, शाप, आँखों में आँसुओं को आना और शरीर कृष हो जाना ये बातें तो देवयोनि में माने जाने वाले यक्षों में नहीं देखी जाती हैं। क्योंकि इसे यक्ष का कथानक लेकर स्वयं महाकवि कालिदास ने अपनी आत्मकथा के रूप में वर्णन किया है। अतः यह स्पष्ट होता है कि यह सारी शाप, ताप और पाप से भरी हुई महाकवि कालिदास की ही आपबीती घटना है, जिसे हमने सच्चे अर्थों में आत्मकथा का नाम दिया है। यक्षों की कथाएँ उत्तराखण्ड में अधिक प्रचलित हैं और यक्षों की नगरी अलका केदारखण्ड के अतिनिकट एवं अपने वैभव के कारण विख्यात हैं। प्रायः संस्कृत साहित्य के महाकाव्य, खण्डकाव्य और नाटक किसी न किसी आदर्श या प्रसिद्ध किसी पुरुष विशेष से सम्बद्ध अवश्य हैं। अलकापुरी के यक्ष से कथा को जोड़ कर महाकवि कालिदास ने अपने प्रवासी जीवन में अपनी विरह व्यथा को मार्मिक शैली पर वर्णन किया है किन्तु उसके साथ ही साथ अपनी जन्म भूमि के अनुराग और उसकी प्राकृतिक छटा की भी उस पर गहरी छाप पड़ी हुई है। जिसे वह हृदय से न भुला पाया। उस भूभाग का निवासी ही इतनी सूक्ष्म दृष्टि से ही ऐसा वर्णन कर सकता है एवं ऐसी सूझ रख सकता है। अपनी जन्मभूमि के अनुराग को प्रायः अपनी सभी रचनाओं में प्रसंग के अनुसार महाकवि कालिदास ने यत्र-तत्र वर्णन भी किया ही है।

उत्तरमेघ के छठे श्लोक में महाकवि कालिदास ने केदारनाथ से प्रवाहित होने वाली मन्दाकिनी नदी का एवं कुमारसम्भव में अत्यधिक वर्णन किया है किन्तु

---

१. आनन्दोत्थं नयनसलिलं यत्र नान्यैर्निमित्तै—
नन्यिस्तापः कुसुमशरजादिष्ट संयोगसाध्यात्।
नाप्यन्यस्मात् प्रणयकलहाद्विप्रयोगोपपत्ति—
वित्तशाना न च खलु वयो यौवनादन्यदस्ति॥ उत्तरमेघ ४ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस श्लोक में 'मन्दाकिन्याः सलिल शिशिरैः सेव्यमाना मरुद्भिः' मन्दाकिनी का महत्त्व, विशेषताएँ और उसकी पवित्रता को स्पष्ट किया है क्यों ? टीकाकारों ने गंगाओं के उद्गम स्थानों को एवं उत्तराखण्ड को न देखने के कारण मन्दाकिनी को नदी विशेष कहना चाहिए था किन्तु उन्होंने (मन्दाकिन्या=गंगाया) गंगा ही अर्थ लगाया है।

महाकवि कालिदास के हृदय में अपनी जन्मभूमि की पुरानी स्मृतियाँ मेघदूत में नवीन होकर व्यक्त हुई हैं।

यक्षों के वैभव के साथ ही उनके सुखमय जीवन की सही स्थिति भी इस श्लोक के द्वारा अवगत होती है। अलका में सभी परम सुख में थे—

'जिस अलका में यक्ष अपनी सुन्दरियों के साथ, स्फटिक मणि से बनी हुई और आकाश के तारों की प्रति छाया में सजाये हुए फूलों से लग रहे हैं, ऐसी महलों की अपहारियों पर तुम्हारी तरह गम्भीर ध्वनियों वाले मृदंग के पुटों के बजने पर कल्पवृक्ष से निकली हुई और कामोद्दीपक मदिरा का सेवन करते हैं।'[1]

हिमालय विभिन्न प्रकार की जीवनदायिनी औषधियों का घर है और उसमें जीवन को आनन्द देने वाली न जाने जानकारों के लिए जीवन का वास्तविक सुख लेने वाली और कितनी औषधियों होंगी ? कुमारसम्भव में महाकवि कालिदास ने हिमालय के औषधिप्रस्थ नगर का विशेष उल्लेख किया है एवं वहां की दिव्य औषधियों का इस प्रकार वर्णन किया है :—

अथौषधीनामधिप्य वृद्धौ तिथौ च जामित्रगुणान्वितायाम्।
भास्वानिरत्नानिमहौषधींश्च पृथूपदिष्टां दुदुहुर्धरित्रीम्।
भवन्ति औषधयो रजन्यामतैलपूराः सुरतप्रदीपाः।

कालिदास की जन्मभूमि कविल्ठा से पूर्व दिशा में हिमालय का औषधिस्थ नगर सामने दिखाई देता है। जिसका महाकवि ने कुमारसम्भव में विशेष वर्णन किया है।

महाकवि कालिदास ने कुमारसम्भव में सबसे अधिक वर्णन मन्दाकिनी पावन नदी का किया है क्योंकि वह स्वर्ग से निकल कर केदारनाथ में स्पष्ट रूप में दृष्टिगत होकर केदार घाटी में प्रवाहित होकर गुप्तकाशी से रुद्रप्रयाग में बद्रीनारायण और अलका से आने वाली अलकनन्दा में मिल जाती है। मेघदूत में केवल एक श्लोक में ही मन्दाकिनी का उल्लेख कर अपने अभिशपित प्रवासी दारुण दुख में उसे स्मरण किया है :—

१. यस्यां यक्षाः सितमणिमयान्येत्य हर्म्यस्थलानि
ज्योतिश्छायाकुसुमरचितान्युत्तमस्त्रीसहायाः।
आसेवन्ते मधु रतिफलं कल्पवृक्षप्रसूतं
त्वद्गम्भीरध्वनिषु शनकैः पुष्करेष्वाहतेषु ॥ उत्तरमेघ ५ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'जिस अलका में, मन्दाकिनी का शीतलवायु सेवा कर रहा है, मन्दार के वृक्षों की छाया जिन पर पड़ती हुई धूप को रोक रही है और देवता लोक जिनके लिए लालायित हैं ऐसी यक्षकन्याएं सुनहरी बालू की मुट्ठियों में रत्न छिपाकर उन्हें खोजने के खेल रही है।'[१]

इस श्लोक में कालिदास ने यक्षों के यौवन के सुख और वैभव पूर्ण जीवन का वर्णन किया है क्योंकि वे तो धनपति कुवेर की नगरी के सेवक हैं। उन्हें ऐश्वर्य की क्या कमी :—

'जिस अलका में प्रेमी जनों के छेड़छाड़ वाले हाथों द्वारा कमर की गांठ के ढीले होने से वस्त्र हटा देने से अत्यन्त लज्जित हुई बिम्ब के समान अधरों वाली सुन्दरियाँ अंधेरा करने के लिए धूल की मुठ्ठियां फेंकती हैं परन्तु उनका यह प्रयत्न व्यर्थ जाता है क्योंकि दीपकों से अग्नि की ज्योति नहीं निकलती जो धूल से बुझ जाये, वे तो रत्नों की किरणें हैं जो अधिक प्रकाश कर रही हैं।'[२]

किसी का अपराध करने के पश्चात् आदमी वहां से शीघ्र भागने का प्रयास करता है, उसी प्रकार मेघ दिवालों पर लगे हुए चित्रों को अपनी बूदों से खराब कर बाहर भाग रहा है :—

'आगे बढ़ने की प्रेरणा देनेवाले वायु से अलका की सात मंजिल भवनों की छतों पर ले जाये गये तुम अपनी छोटी-बूंदों से वहां भित्ति-चित्रों को गन्दे करके पकड़े जाने के भय से धुएं की तरह बनकर तत्काल रोशनदानों से निकल जाते हो।'[३]

कवि अपने मनके भावों और अलकावासियों के क्रिया-कलापों को व्यक्त कर

---

१. मन्दाकिन्या: सलिलशिशिरैः सेव्यमाना मरुद्भि —
मंन्दराणामनुतटरुहां छायया वारितोष्णा: ।
अन्यष्टव्यै कनकसिकतामुष्टिनिक्षेपगूढ़ैः
संक्रीडन्ते मणिभिरमरप्रार्थिता यत्र कन्या: । उत्तरमेघ ६ श्लोक

२. नीवीबन्धोच्छ्वसितशिथिलं यत्र बिम्बाधराणां
क्षौमं रागादनिभृतकरेष्वाक्षिपत्सु प्रियेषु ।
अर्चिस्तुङ्गानभिमुखमपि प्राप्य रत्नप्रदीपान्
ह्रीमूढानां भवति विफलप्रेरणा चूर्णमुष्टि: ।। उत्तरमेघ ७ श्लोक

३. नेत्रा नीता: सततगतिना यद्विमानाग्रभूमी-
रालेख्यानां: नवजलकणैर्दोषमुत्पाद्य सद्य: ।
शंकास्पृष्टा इव जलमुचस्त्वादृशा जालमार्गे-
र्धूमोद्गारानुकृतिनिपुणा जर्जरा निष्पतन्ति ।। उत्तरमेघ ८ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहा है। निश्चिन्त एवं सुखी व्यक्ति अपने जीवन से इस प्रकार ही प्रसन्न रहता है :—

'उस अलकापुरी में आधी रात के समय चन्द्रमा के सामने से तुम्हारे हट जाने पर स्वच्छ चांदनी के मेल से साफ जलकणों को टपकाने वाले, झालरों में लटकती हुई चन्द्रकांत मणियां प्रियतमों की भुजाओं के गाढ़ आलिंगनों से सांस लेती हुई नायिकाओं की सम्भोग जैसी अंग-ग्लानि को दूर कर देती है।'[1]

'उस अलकापुरी में लोगों के घरों में अक्षयनिधियां भरी हुई हैं, ऐसे कामीजन अप्सरारूपी वेश्याओं के साथ बातचीत करते हुए सुरीले गले वाले और कुबेर का यश गाते किन्नरों के साथ वैभ्राज नाम के उद्यान का आनन्द ले रहे हैं।'[2]

महाकवि कालिदास ने कर्मभूमि और अलका में लोगों का वैभव एवं विलास पूर्ण जीवन को देखा है, जिसे वे संगीत का आनन्द लेते हुए उद्यानों में बैठे हैं।

'जिस अलकापुरी में सुन्दरियों द्वारा रात्रि में अपने प्रियतमों के पास जाने के मार्ग सूर्योदय होने पर स्पष्ट मालूम हो जाते हैं, क्योंकि शीघ्र चलने में शरीर हिलने से बालों पर लगे हुए मन्दार पुष्प और कानों पर के सुनहरे कमलों की पंखुड़िया उन मार्गों पर गिरी रहती हैं,' जूड़ों पर की जालियों से और उन्नत स्तनों पर टकराकर टूटे हुए मोती बिखरे रहते हैं।'[3]

महाकवि कालिदास ने यद्यपि अलका की सुन्दरियों का कामयुक्त रूप एवं कृत्य दिखाया है किन्तु अपनी पत्नी को उसने भी पतिव्रता रूप में दिखाया है। कहीं भी उसे अलका की सुन्दरियों के समान चंचल एवं चपल नहीं दिखाया है। इससे यक्षों में और कवि कालिदास में अत्यधिक अन्तर देखा जाता है।

'जिस अलकापुरी में कुबेर के मित्र शिव को प्रत्यक्ष रूप में निवास करते जानकर उनके मारे कामदेव अपने भौंरों की डोरी वाले धनुष का प्रयोग नहीं करता

---

१. यत्र स्त्रीणा प्रियतमभुजालिंगनोच्छवासिताना–
मंगग्लानिं सुरतजनितां तन्तुजालावलम्बाः।
त्वसंरोधापगमविशदैश्चन्द्रपादैर्निशीथे
व्यालुम्पन्ति स्फुटजललवस्यन्दिनश्चन्द्रकान्ताः॥ उत्तरमेघ ९ श्लोक

२. अक्षय्यान्तर्भवननिधयः प्रत्यहं रक्तकण्ठै–
रुद्गायद्भिर्धनपतियशः किन्नरैर्यत्र सार्द्धम्।
वैभ्राजाख्यं विबुधवनितावारमुख्यासहाया
बद्धालापा बहिरुपवनं कामिनो निर्विशन्ति॥ उत्तरमेघ १० श्लोक

३. गत्युत्कम्पादलकपतितैर्यत्र मन्दारपुष्पैः
पत्रच्छेदैः कनककमलैः कर्णविभ्रंशिभिश्च।
मुक्ताजालैः स्तनपरिसरच्छिन्नसूत्रैश्च हारै
र्नैशो मार्गः सवितुरुदये सूच्यते कामिनीनाम्॥ उत्तरमेघ ११ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसका काम भौंरे के द्वारा टेढ़ी-चितवनों से कामीजनों पर चतुर कामिनीयों के हाव-भावों से ही सिद्ध हो जाता है।'[1]

अलकापुरी में केवल कल्पवृक्ष से ही रंग-बिरंगे वस्त्र, आँखों में मादकता लाने वाली मदिरा, पल्लवों सहित पुष्प, विभिन्न प्रकार के आभूषण, कमल जैसे कोमल चरणों में लगाने वाली महावर का रंग आदि से स्त्रियों की सभी प्रसाधन की सामग्री उत्पन्न हो जाती है।'[2]

अलकापुरी की महिलाओं की प्रकृति और इच्छा पूर्ण करने वाले कल्पवृक्ष के द्वारा ही सौन्दर्य वर्धक समस्त सामग्री प्राप्त हो जाती है। यहाँ किसी भी चीज का किसी को अभाव नहीं है अपितु सोचने मात्र से सभी कुछ सोचा हुआ मिल जाता है एवं प्रकृति ने उन्हें सब कुछ दिया है।

यक्षरूपी कवि के घर का परिचय

यक्षरूपी महाकवि ने रामगिरि से मेघ को भौगोलिक दृष्टि से मार्ग बताया है और अलकापुरी का वैभव वर्णन करता हुआ मेघ को अपने घर का इस प्रकार सचित्र सही सही वर्णन करता है। जिससे विचारे थके हुए मेघ को खोजने में किसी भी प्रकार का कष्ट न हो। 'उसी पूर्व वर्णित अलकापुरी का प्राकृतिक सौन्दर्य और वैभव वर्णन करते हुए उसी परिवेश में यक्षरूपी कालिदास अपने घर का भी परिचय दे रहा है:—

'उसी अलका में कुबेर के घर के उत्तर की ओर इन्द्रधनुष के समान सुन्दर रंग-बिरंगे फाटक से जो दूर से ही पहचाना जाता है, ऐसा मेरा घर है। जिसके पास एक छोटा सा मन्दार वृक्ष हैं। उसे मेरी प्रिया ने पुत्र के समान पाल पोसकर बड़ा किया है और अब इतना बड़ा हो गया है कि उसके झुके हुए गुच्छे ऊपर हाथ उठाकर छुए जा सकते हैं।'[3]

---

१. मत्वा देवं धनपतिसखं यत्र साक्षाद्वसन्तं
प्रायश्चापं न वहति भयान्मन्मथः षट्पदज्यम्।
सभ्रूभंगं प्रहितनयनैः कामिलक्ष्येष्वमोघे-
स्तस्यारम्भश्चतुरवनिताविभ्रमैरेव सिद्धः॥ उत्तरमेघ १२ श्लोक

२. वासश्चित्रं मधु नयनयोर्विभ्रमादेशदक्षं
पुष्पोद्भेदं सह किसलयैर्भूषणानां विकल्पान्
लाक्षारागं चरणकमलन्यासयोग्यं च यस्या-
मेकः सूते सकलमबलामण्डनं कल्पवृक्षः॥ उत्तरमेघ १३ श्लोक

३. तत्रागारं धनपतिगृहानुत्तरेणास्मदीयं
दूराल्लक्ष्यं सुरपतिधनुश्चारुणा तोरणेन।
तस्योपान्ते कृतकतनयः कान्तया वर्धितो मे
हस्तप्राप्यस्तवकनमितो बालमन्दारवृक्षः॥ उत्तरमेघ १४ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण की शुद्धि, स्वच्छ हवा, पानी और घर की शोभा के लिए वृक्षों को लगाना एक पुनीत कार्य माना जाता है। वृक्षों का लगाना ही महत्त्व नहीं था अपितु उनकी सुरक्षा और सम्वर्धन सन्तान के समान किया जाता था। महाकवि कालिदास ने अपने युग की स्थिति को मेघ को अपने घर का सही परिचय देते हुए वर्णन किया है।

महाकवि कालिदास ने रघुवंश में रघु के वंश का वर्णन, राज्य का वैभव और नगर एवं भवनों का बहुत ही अनूठा वर्णन किया है, पुनः अपनी जन्मभूमि एवं घर का वर्णन क्या एक गरीब व्यक्ति की कुटिया के समान कर सकता था? क्योंकि उसके पास भाषा, भाव, ज्ञान, वास्तुकला, गृहविज्ञान एवं प्रकृति के वैभव की किसी प्रकार की भी कमी नहीं थी। यही कारण है कि महाकवि कालिदास ने अपनी आत्मकथा में अपने ग्राम कविल्ठा को अलका पुरी के सन्निकट होने के कारण उसे किसी भी रूप में कम नहीं समझता है। इसीलिए ही अपने को यक्ष के कथानक से जोड़ा था। अतः यक्षों की नगरी अलकापुरी का आँखों देखा सही वर्णन करना तथा वहाँ तक मेघ को पहुँचाना भी महाकवि की विदग्धता है। कवि ने अपने ग्राम के निकट शिव के चरणों से अंकित काली शिला की प्रदक्षिणा करने का मेघ से शिव के प्रति अपने भक्ति के भावों को अभिव्यक्त किया है।

कवि अपने निकट के वातावरण का पूर्ण परिचित, अपनी अनुभूति को अभिव्यक्त करने में प्रजापति और प्राकृतिक सुषमा को दिखाने में सच्चा चित्रकार होता है। महाकवि कालिदास ने कुमारसम्भव और मेघदूत में अपने जीवन की सच्ची उपलब्धि को तथा अपनी जन्मभूमि का सही चित्र उपस्थित करने में कहीं भी कोई त्रुटि नहीं रखी है। कुमारसम्भव महाकवि कालिदास को हिमालय के उत्तराखण्ड का निवासी सिद्ध करने का एक सही प्रमाण है और मेघदूत महाकवि कालिदास के जीवन पर आधारित एक सच्ची आत्मकथा है। जो उस महाकवि के प्रकाण्ड पांडित्य एवं बहुमुखी प्रतिभा का ज्वलन्त उदाहरण भी है। महाकवि कालिदास ने अपनी चमत्कारपूर्ण कविता का मेघदूत गीति काव्य में परिचय देकर गीतिकाव्य की शैली पर अपनी सच्ची आत्मकथा लिखी है।

महाकवि कालिदास ने अपनी जन्मभूमि में बने अपने घर का परिचय मेघ को दिया और भवन निर्माण की विशेषताओं को भी बताया है। घर का द्वार इन्द्र धनुष के समान बना है और उस पर अनेक प्रकार के आकर्षक तथा बरसात के पानी से सुरक्षा के लिए रंग भी लगे हैं। जो दूर से देखते ही अपनी विशेष पहचान रखता है।

कालिदास ने अपने प्रकृति सौन्दर्य के स्नेह के साथ ही अपने घर के निकट एक क्रीड़ाशैल का भी वर्णन कर अपने घर की पहचान के लिए तीन विशेष चिह्न

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भी दिखाये हैं। भवन विज्ञान की दृष्टि से भी गृह निर्माण में कवि को बहुत बड़ा ज्ञान था। वह वास्तुकला का भी पूर्ण ज्ञाता था।

कालिदास के घर का बहिर्द्वार, बावड़ी और क्रीड़ा शैल

पहाड़ी भूभाग में पर्वत की शृंखलाओं में पानी की कमी भी होती ही है। अतः पानी के स्रोतों से जल एकत्रित कर घर के निकट एक गहरी बावड़ी (जल-संचयगृह) बनायी जाती है। जिसमें अनेक सीढ़ियाँ भी होती हैं उससे अनेक कार्य सिद्ध होते रहते हैं। जैसा कि महाकवि कालिदास ने अपने घर की सही स्थिति दिखाई है :—

'उस मेरे घर में एक बावड़ी भी है. जिसकी सीढ़ियाँ मरकत मणि से बनी हैं। जो चिकने वैदूर्यमणि के समान डण्डीवाले, खिले हुए सुनहरे कमलों से भरी रहती हैं और जिसके निर्मल जल में स्वतन्त्रता से रहने वाले हंस वर्षाकाल आने पर भी समीपवर्ती मानसरोवर में जाने की उत्कण्ठा नहीं दिखाते।'[१]

पर्वतीय भूभाग में पर्वतीय प्राकृतिक जलस्रोतों के द्वारा एकत्रित किया हुआ जल उस बावड़ी में प्रवाहित होता रहता है। पानी के आने-जाने से पानी सदा स्वच्छ रहता है। पर्वतीय भूभाग के अतिरिक्त ये बावड़ियाँ अन्यत्र कहीं नहीं होती है। कूप तो सर्वत्र हो सकते हैं। कई स्थानों में कुंड सरोवर भी हैं किन्तु यहाँ पर महाकवि कालिदास अपने घर के पास सुन्दर, रमणीय और दर्शनीय बावड़ी का वर्णन कर रहा है। इससे भी कालिदास का पर्वतीय भूभाग का होना सिद्ध होता है। कालिदास के ग्राम कविल्ठा में आज भी वह बावड़ी का स्वरूप है जिसका पानी स्वच्छ, शीतल और स्वादु है। कालिदास ने अपने जीवन के संस्मरण, अपने ग्राम का चित्र, अपने आवास, बावड़ी; क्रीड़ाशैल आदि का अच्छा वर्णन किया है। हिमालय केदारखण्ड के निवासी महाकवि कालिदास के इस प्रकार के स्पष्ट वर्णन में उसके हृदय के सच्चे भावों को मेघदूत में अच्छी प्रकार से देखा जा सकता है।

सचमुच मन्दाकिनी और उसकी सहायक नदियों में आज भी पारखी दर्शकों को अनेक मणियों के सदृश सौम्य आकृति के आकर्षक पत्थर भी मिलते हैं। इससे महाकवि कालिदास के घर में निर्मित बावड़ी मरकर मणियों की अवश्य बनी रही होगी क्योंकि राजा शारदानन्द ने भी पुत्री के सुख का विशेष ध्यान रखा ही

---

१. वापी चास्मिन् मरकतशिलाबद्धसोपानमार्गा
हैमैश्छन्ना विकचकमलैः स्निग्धवैदूर्यनालैः।
यस्यास्तोये कृतवसतयो मानसं सन्निकृष्टं
नाध्यास्यन्ति व्यपगतशुचस्त्वामपि प्रेक्ष्य हंसाः॥ उत्तरमेघ १५ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होगा। जिसकी सीढ़ियाँ इतनी उज्वल मणियों से बनी होगी उस बावड़ी का जल कितना स्वच्छ रहा होगा? तभी स्वर्णकमल और हंस उसमें वास करते थे। उस बावड़ी के किनारे भ्रमण या खेल के लिए प्रकृति द्वारा बना क्रीड़ा पर्वत भी था क्योंकि यहाँ तो अनेक पर्वत शृंखताएँ हैं जिनमें क्रीड़ा शैल बनाने में कष्ट कम होता है :—

उस बावड़ी के किनारे एक क्रीड़ाशैल है, जिसके शिखर नीलमों के बनाये गए हैं और चारों ओर सुनहरे केले के पेड़ों की बाढ़ से जो अत्यन्त ही दर्शनीय है। हे मित्र! यह मेरी पत्नी को अति प्रिय है, अतः जिस समय तुम्हारे चारों ओर विजली चमकती है तभी मुझे अधीर होकर उसी क्रीड़ा शैल का स्मरण हो आता है।'[१]

महाकवि कालिदास ने अपने घर को एक आदर्श घर के रूप में बनवाया हुआ था। जो जीवन की समस्त वैभवपूर्ण सामग्रियों से परिपूर्ण था। खुला, साज-सज्जा युक्त उद्यान और पूर्ण मनोरंजन की वस्तुओं से युक्त था। क्रीड़ाशैल में अनेक प्रकार के पेड़-पौधे थे।

'इस क्रीड़ाशैल में कुरबक की बाढ़वाले वासन्ती लतागृह के निकट दो वृक्ष हैं—एक हिलते हुए पत्तों का अशोक और दूसरा सुन्दर वकुल का वृक्ष। इनमें पहला तो मेरे साथ तुम्हारी मेरी पत्नी सखी के बाँये पैर के प्रहार का इच्छुक है और दूसरा बकुल दोहद के बहाने उसके मुख की मदिरा को चाहते हैं।'[२]

महाकवि कालिदास रूपी यक्ष के क्रीड़ाशैल में स्वाभाविक उगे हुए ही पेड़-पौधे और फूल नहीं थे अपितु उद्यानों में सौन्दर्यवर्धक अनेक प्रकार के पेड़-पौधे भी लगाये हुए थे, जो चित्ताकर्षक, मनोरंजक, लाभप्रद और घर की शोभा बढ़ाने वाले भी थे। उन पेड़ों में पक्षी भी आनन्द से वास करते थे :—

'उन दोनों अशोक और वकुल के मध्य में पक्षियों को बैठने के लिए मचान भी बना हुआ है जिसका निचला भाग कोमल बाँसों जैसे मणियों से बना है, उसका डण्डा सोने का है और ऊपर स्फटिक का पटरा लगा है। कंकणों की मधुर

१. तस्यास्तीरे रचितशिखरः पेशलैरिन्द्रनीलैः
क्रीड़ाशैलः कनककदलीवेष्टनप्रेक्षणीयः।
मद्गेहिन्याः प्रिय इति सखे! चेतसा कातरेण
प्रेक्ष्योपान्तस्फुरिततड़ितं त्वां तमेव स्मरामि॥ उत्तरमेघ १६ श्लोक

२. रक्ताशोकश्चलकिसलयः केसरश्चात्र कान्तः
प्रत्यासन्नौ कुरबकवृत्तेर्माधवीमण्डपस्य।
एकः सख्यास्त सह मया वाकपादाभिलाषी
काङ्क्षत्यन्यो वदनमदिरां दोहदच्छद्मनाऽस्याः॥ उत्तरमेघ १७ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ध्वनि से मुक्त तालियों से मेरी पत्नी द्वारा नचाया गया तुम्हारा मित्र मोर सन्ध्या के समय जिस पर बैठता है।'[१]

कवि को केवल अपनी सुख सुविधा का ही ध्यान नहीं है अपितु पालतू पक्षियों की सुविधा का भी ध्यान है।

यक्षरूपी कवि ने मेघ को अपने घर की पहचान के कई चिह्न मुख्यद्वार, मरकत मणियों की सीढ़ियों वाली बावड़ी, क्रीड़ाशैल, मोर को विश्राम करने का स्थान; अनेक प्रकार के वृक्ष और दरवाजे पर शंख और पद्म जैसे शुभचिह्नों को देखकर तुम मेरे घर को अवश्य पहचान लोगों कहा :—

'हे साधो ! अच्छी प्रकार से स्मरण किये पूर्व वर्णित चिह्नों से—तथा दरवाजे के पास लिखे हुए शंख एवं पद्म को देखकर निश्चय ही तुम मेरे घर को पहचान लोगे, जिस घर की शोभा आजकल मेरे वहाँ न होने से धूमिल हो गई है क्योंकि जब सूर्य नहीं रहता तो कमल निश्चय ही अपनी पूर्ण शोभा प्रकट नहीं कर सकता।'[२]

आज भी हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल में बहुत सारे ऐसे मकान है जिनके बड़े-बड़े लकड़ी के बहिर द्वारों पर विभिन्न प्रकार की चित्रकारी और उन पर शंख और पद्म के चिह्न शुभ सूचक होने के कारण बने हुए है। इनका भी मेघ को कालिदास ने अच्छा वर्णन किया है।

मेघ को यक्षरूपी कवि अपने घर को अपने बिना श्रीविहीन बता रहा है क्यों कि पति के न रहने से उसके विरह में दुःखी होकर न तो वह घर को ही देख पाती है, न सजा पाती है और उसे अपने ही दुख के कारण सुध-बुध नहीं है। उसमें पति के बिना किसी प्रकार का भी उत्साह-उल्लास नहीं है। सुख में खुशी, धैर्य और अधिक उत्साह रहता है। जिसके लिए अपनी सजावट और घर की सफाई रखनी है वह जब परदेश में दुःखी है तब यह सब करके क्या होगा ? तभी सारा घर श्रीहीन है, शोभारहित है। पति का कोई समाचार न मिलने से बेचारी

---

१. तन्मध्ये च स्फटिकफलका काञ्चनी वासयष्टिः
मूले बद्धा मणिभिरनतिप्रौढवंशप्रकाशैः।
तालैः शिञ्जावलयसुभगैर्नर्तितः कान्तया मे
यामध्यास्ते दिवसविगमे नीलकण्ठः सुहृद्वः॥ उत्तरमेघ १८ श्लोक

२. एभिः साधो ! हृदयनिहितैर्लक्षणैर्लक्षयेथा
द्वारोपान्ते लिखितवपुषौ शंखपद्मौ च दृष्ट्वा।
क्षामच्छायं भवनमधुना मद्वियोगेन नूनं
सूर्यापाये न खलु कमलं पुष्यति स्वामभिख्याम्॥ उत्तरमेघ १९ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विदुषी यक्षिणी शोक में निमग्न है। वास्तव में घर की शोभा पति-पत्नी दोनों के द्वारा ही होती है किन्तु पति या पत्नी के अभाव में या प्रवासी होने पर जगमगाता या वैभवपूर्ण घर भी सूनसान हो जाता है। भारतीय आदर्श नारी के लिए उसका पति ही सब कुछ है। विवाह को इसी आधार पर विवाह संस्कार कहा जाता है क्योंकि वह पवित्र जन्म जन्मान्तर का सम्बन्ध है।

प्रवासी होने पर यक्ष रूपी कवि अपनी प्रेयसी को भी साथ ले जा सकता था क्योंकि उसका उससे ही तो अनन्य प्रेम था। महाकवि कालिदास ने यक्ष का आश्रय लेकर अपनी आत्मकथा लिखी पुनः शाप, कुष्टरोग और पत्नी के दारुण दुःख को कैसे अनुभव करता? कथानक में भी त्रुटि आती। विविध तीर्थों का स्नान, वास और उपासना वह कैसे करता? जिस अत्यधिक पत्नी स्नेह के कारण यह वियोग हुआ था वह कैसे भोगा जाता? अतः इसी के लिए यह सब पृष्ठभूमि बनी।

यक्षरूपी कवि अपनी पत्नी की मनस्थिति अच्छी प्रकार से जानता था क्योंकि एक तो पति के विरह में दुःखी है दूसर अकेली है तीसर नव विवाहिता है और सन्तान रहित है। अतः सहसा किसी की आहट या रूप को देखकर भयभीत भी हो सकती है। अतः मेघ को अपने घर में शान्ति पूर्वक और सभ्यजन की तरह प्रवेश करने की मेघ को विधि बता रहा है :—

'शीघ्र मेरे घर में प्रवेश करने के लिए तुम्हें तत्काल अपने शरीर को हाथी के बच्चे के समान छोटा करके सुन्दर शिखरों वाले उस क्रीड़ा पर्वत पर, जिसका मैं पहले वर्णन कर चुका हूँ, बैठे हुए तुम जुगुनों के समान मन्द रूप में प्रकाशरूपी बिजली वाली दृष्टि से घर में देखना।'[1]

उस घर में प्रवेश कर तुम मेरी विधाता द्वारा अद्वितीय रची हुई प्रिया को देखोगे। जो मेरे विरह में दुबली-पतली होगी जब कि वह सोलह वर्ष की ही है। उसकी सौम्य आकृति का यक्ष रूपी महाकवि ने स्पष्ट वर्णन किया है। मेघ को सखा, छोटा भाई और सन्देशवाहक समझकर अपनी प्रिया के रूप, रंग का वर्णन करने में तनिक भी संकोच नहीं करता है :—

'उस मेरे घर में दुबली-पतली, षोडशी, नुकीले दाँतों वाली, पके हुए निम्ब फल जैसे ओठों वाली, पतली कमर वाली, डरी हुई हरिणी के समान चचल आँखों वाली, गहरी नाभि वाली, नितम्बों के भार से धीरे-धीरे चलती हुई,

---

१. गत्वा सद्यः कलभतनुतां शीघ्रसंपातहेतोः
क्रीडाशैले प्रथमकथिते रम्यसानौ निषण्णः।
अर्हस्यन्तर्भवनपतितां कर्तुमल्पाल्पभासं
खद्योतालीविलसितनिभां विद्युदुन्मेषदृष्टिम्॥ उत्तरमेघ २० श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्तनों के भार से कुछ झुकी सी तथा सुन्दरता में नारी जाति में विधाता की प्रथम रचना हो।'[1]

कवि की परमप्रिय पत्नी और दत्तकपुत्र—महाकवि कालिदास पर्वतीय प्रदेश का होने के कारण हृदय का भी निश्छल था। अपनी आत्मकथा में अपनी व्यथा और कथा बहुत कम लोग स्पष्ट लिखते हैं किन्तु सच्ची आत्मकथा में जीवन को सच्ची अनुभूति एवं सही विचार होते हैं। कालिदास को महाकवि बनने के पश्चात् अपनी पत्नी से अत्यधिक अनुराग था। प्राय: वियोगावस्था में आदर्श स्त्री-पुरुषों में स्नेह अत्यधिक रूप में स्फुरित हो जाता है क्योंकि वह केन्द्रीत होता जाता है। यह पारिवारिक जीवन की सर्वोत्कृष्ट स्थिति है। यही सच्ची आत्मसमर्पण की भावनाएँ हैं और सच्चे पति-पत्नी का एकत्व है।

यक्षरूपी कवि ने अपनी पत्नी को श्यामा और निम्ननाभि विशेषणों से किसी विशेष गुण के कारण ही विभूषित किया है। आकृति विज्ञान और सौन्दर्यशास्त्र की दृष्टि से श्यामाङ्गी नारी स्वास्थ्य की दृष्टि से निरोग, परिश्रमी, कलाविज्ञा, सुगृहिणी और सुस्वाद भोजन बनाने तथा परसने की कला में दक्ष होती है एवं ऋतुओं के अनुरूप सम्भोग के योग्य होती है। श्यामा और निम्ननाभी वाली नारी पति के प्रति अधिक अनुरक्त, विश्वसनीय आज्ञापालन, आकर्षक, सच्ची सहधर्मिणी तथा अनुगामिनी होती है। शेष विशेषण तो सम्पूर्ण नारी जाति में यौवनावस्था में स्वत: ही आ जाते हैं। महाकवि कालिदास को शाप की स्थिति में शारीरिक विकृति और दूर प्रयासी जीवन में दारुण दुखों में रहने पर भी अपनी श्यामा तथा निम्ननाभि के प्रति कहीं भी दुर्भावना एवं आशंका नहीं हुई। अपने मन की सही निष्ठा को व्यक्त करने के लिए ही उसने अति उपयुक्त विशेषणों का प्रयोग किया है। उसके हृदय में भी विभिन्न स्थानों का भ्रमण करने एवं विभिन्न प्रकार की कामिनियों को देखने का भी मौका मिला जैसा कि मेघ को मनोरंजन कराने के लिए पूर्व मेघ में वर्णन हुआ है, किन्तु उस एक नारी व्रतधारी के मन में कहीं भी ऐसे विचार नहीं देखे गये हैं। यह उसका सच्चा आत्म समर्पण, अनुराग और एक नारी व्रत है।

विधाता की सृष्टि का एक विचित्र नियम है कि कभी भी वह किसी स्त्री-पुरुष को एक स्वभाव, सहमति समस्नेही नहीं बनाता है। यदि अपवाद में ऐसा हो भी जाये तो उनकी सन्तान नहीं हो सकती है और यदि सन्तान हो भी जाये तो दोनों

---

१. तन्वी श्यामा शिखरिदशना पक्वबिम्बाधरोष्ठी
मध्ये क्षामा चकितहरिणीप्रेक्षणा निम्ननाभिः।
श्रोणीभारादलसगमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्यां
या तत्र स्याद्युवतिविषये सृष्टिराद्येव धातुः॥ उत्तरमेघ २१ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में किसी एक की मृत्यु निश्चित ही है। महाकवि कालिदास ने अपनी आत्मकथा का संकेत करने वाले मेघदूत में जिस विधि और रूप में अपनी गाथा लिखी हैं, उसमें उसने स्पष्ट कर दिया है कि उसकी कोई सन्तान नहीं थी क्योंकि उसकी पत्नी ने अपने पुत्र स्नेह को मन्दार के वृक्ष के लगाने, संरक्षण और सम्वर्धन में लगा दिया था—

'यस्योद्याने कृतकतनयः कान्तया वर्धितो मे
हस्तप्राप्यस्तवकनमितो बालमन्दारवृक्षः ।।'

वह छोटा मन्दार का वृक्ष उसने पुत्र के समान पाला हुआ था। राजा दिलीप को पुत्र प्राप्ति के लिए कठोर तपस्या कराकर गुरु वशिष्ठ की नन्दिनी की सेवा कराई। उत्तराखण्ड में प्रवेश करने के दूसरे द्वार कोटद्वार के समीप काण्वाश्रम में शकुन्तला नाटक में दुष्यन्त को भरत को देखकर पुत्र पाने की लालसा जाग्रत हो उठती है। पुत्र के स्नेह को महाकवि कालिदास ने भी अपनी पत्नी के मन्दार वृक्ष की रक्षा में देखा है अपवाद में ही महान् व्यक्तियों की सन्तान पिता के समान नहीं हो पाती है। यही कारण है कि महान् व्यक्ति कुपुत्र का दुख नहीं देख पाते हैं।

प्रकृति के कवि, उपमा के धनी और मानवीय मनोवृत्तियों का सही विश्लेषण करने वाले कालिदास ने नारी के स्वभाव का सही वर्णन किया है। कालिदास की अपनी सबसे बड़ी विशेषता यह रही है कि उसने प्रसंग, स्थान, वस्तु और उसकी मनोवृत्तियों का सही वर्णन किया है एवं उनके लिए सटीक उपमाएँ दी हैं।

महाकवि कालिदास ने पूर्वमेघ में अपना और उत्तरमेघ में अपनी पत्नी की मनस्थिति का अधिक श्लोकों में वर्णन किया है। कुमारसम्भव कालिदास की युवा वस्था की रचना है और मेघदूत पूर्णयौवन की दारुण विरह व्यथा की रचना है। मेघदूत कर्तव्य और भावना की अभिव्यक्ति की सही संरचना है। मानवीय दृष्टि से मिलन कठिन समझकर महाकवि कालिदास ने मनकी तुष्टि के लिए अपनी और अपनी पत्नी की शारीरिक स्थिति, मनस्थिति, आकृति, सौन्दर्य एवं विवशता का अपनी आत्मकथा मेघदूत में सही-सही वर्णन किया है। मानव की आकृति ही उसके हृदय के छिपे हुए भावों को बता देती है। यक्षरूपी कवि अपने मनकी बात मार्ग बताकर, सन्देश देकर, प्राकृतिक चेष्टाओं का वर्णन करके कुछ हल्का हो जाता है किन्तु यक्षरूपी कवि की पत्नी विद्योत्तमा अपने हृदय की व्यथा कैसे अभिव्यक्त करे ? कवि ने पूजा, संगीत, सारिका और मन्दार वृक्ष रूपी पुत्र को उसको व्यथा सुनाने के लिए उपस्थित किया है।

कवि की विरहिणी पत्नी की स्थिति—सच्चे विरही की विरहावस्था की स्थिति का कालिदास ने कितना सही वर्णन किया है—

'मुझ साथी के दूर हो जाने से चकवी के समान एकाकी होने से कम हो गया है बोलना जिसका, उस युवती को तुम मेरा दूसरा प्राण समझो। मैं अच्छी प्रकार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

समझता हूँ कि प्रबल विरह वेदना में वह नव युवती किसी प्रकार बीतते हुए विरह के इन लम्बे दिनों में पाले से मारी हुई कमलिनी की तरह मुरझाकर कुछ और ही हो गई होगी।'[१]

सौन्दर्य शरीर का गुण है और वही मानवीय हृदय के लिए आकर्षण का विषय होता है। सौन्दर्य वासना से अपवित्र और स्वार्थ मुक्त हो जाता है। स्वार्थ में त्याग एवं समर्पण की भावनाएँ नहीं होती हैं। वियोगी विरह की घड़ी में सौन्दर्य-हीन तो हो ही जाता है सौन्दर्य वृद्धि के प्रसाधनों को छोड़कर विरह की व्यथा से जल जाता है एवं रोने से सभी दृष्टियों से कृष हो जाता है।

विरह में मिलने की चिन्ता में विरही अधिक रोकर अपनी आंखों को सुजा देता है। यक्षरूपी महाकवि का सोचना ठीक ही है :—

'मेरे वियोग में अत्यधिक रोने से सूज गई हैं आंखें जिसकी, गरम-गरम निःस्वासों से होठ सूख गये है, हाथ के सहारे रोका हुआ, खुले बालों के लटक जाने से ढँका हुआ सा उस मेरी प्रिया का मुख, तुम्हारे पीछे-पीछे चलने से क्षीण हो गई है कान्ति जिसकी ऐसे चन्द्रमा की तरह निश्चय ही चिन्तायुक्त हो गया होगा।'[२]

बिरही यदि कुछ अपने दैनिक कार्यों में लगा रहता है तो उसका दुख कुछ समय के लिए दूर हो जाता है। जिन्हें कलाओं का ज्ञान होता है वे उसमें ही अपना बुरा समय यापन कर लेते हैं। स्वयं कालिदास मेघदूत गीति काव्य के द्वारा अपनी आत्मकथा लिखने में शाप की अवधि समाप्त कर गया और महाविदुषी उसकी पत्नी ललित कलाओं को जानने के कारण अपने शाप के विरह को इस प्रकार बिता रही है। कवि की कल्पना कितनी सही निकलती है :—

'हे मेघ! जब तुम अपनी बिजली के प्रकाश में पहले-पहल मेरी पत्नी को देखोगे तब या तो वह देवताओं की पूजा में व्यस्त दिखेगी या विरह से घबराई हुई कल्पना में मेरा चित्र बनाती हुई दिखेगी अथवा पिंजरे में बन्द मीठा बोलने वाली

---

१. तां जानीथाः परिमितकथां जीवितं मे द्वितीयं
दूरीभूते मयि सहचरे चक्रवाकीमिवैकाम्।
गाढोत्कण्ठां गुरुषु दिवसेष्वेषु गच्छत्सु बालां
जातां मन्ये शिशिरमथितां पद्मिनीं वाऽन्यरूपाम्॥ उत्तरमेघ २२ श्लोक

२. नूनं यस्याः प्रबलरुदितोच्छूननेत्रं प्रियाया
निः श्वासानामशिशिरतया भिन्नवर्णाधरोष्ठम्।
हस्तन्यस्तं मुखमसकलव्यक्ति लम्बालकत्वा-
दिन्दोर्दैन्यं त्वदनुसरणक्लिष्टकान्तेर्बिभर्ति॥ उत्तरमेघ २३ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मैना से हे सारिका ! तुम्हें स्वामी की याद आती है ? क्योंकि वे तुम्हें बहुत मानते थे ? ऐसा पूछती हुई दिखेगी ।'[१]

'हे सौम्य मेघ ! विरह के समय में मलिन वस्त्र धारणा की हुई वह अपनी गोद में वीणा को रखकर मेरे नाम से चिह्नित गाने के पदों को गाना चाहती हुई, आँसुओं से भींगे तारों को किसी प्रकार ठीक करके भी बार-बार अपने साधे हुए स्वरों में उतार-चढ़ाव को भूलती हुई तुम्हें दिख पड़ेगी ।'[२]

इन उद्धरणों से यह स्पष्ट होता है कि दोनों पति-पत्नी अनेक कलाओं में प्रवीण होने के साथ ही साथ संगीत के वाद्य और गान में भी पारंगत थे । संगीत के प्राण स्वरों के उतार-चढ़ाव को भी वे बहुत ही अच्छी प्रकार से जानते थे । कलाएँ साधना से ही साधक को आती हैं, पूर्वजन्म की संचित होती हैं और ईश्वरीय देन भी होती हैं ।

विरही यक्षरूपी कवि की पत्नी या तो शाप के शेष दिनों को गिनकर या अपने प्रिय के पूर्व के सहवास के दिनों को स्मरण कर सुख का अनुभव कर रही होगी । इस प्रकार मेघ कवि अपनी पत्नी की विविध क्रियायें बता रहा है :—

'अथवा मेरे विरह के दिन से ही नित्य अपनी देहली पर वह जो फूल रखती जाती थी उन्हें ही भूमि पर रख कर विरह के शेष महीनों को गिनती हुई अथवा हृदय में कल्पना किये हुए मेरे सहवास का रस लेती हुई वह तुम्हें दिखेगी क्योंकि प्रायः नारियाँ अपने पति का विरह होने पर इन्हीं विनोदों से अपना मन हल्का कर लेती हैं ।'[३]

मानव के जीवन में दुःख ही उसके धैर्य की कसौटी हैं । दुखों को दुखी व्यक्ति दिन में तो किसी प्रकार व्यतीत कर ही लेता है किन्तु रात्रियों को काटना बहुत

---

१. आलोके ते निपतति पुरा सा बलिव्याकुला वा
मत्सादृश्यं विरहतनु वा भावगम्यं लिखन्ती ।
पृच्छन्ती वा मधुरवचनां सारिकां पञ्जरस्थां
कच्चिद् भर्तुः स्मरसि रसिके ! त्वं हि तस्य प्रियेति ॥ उत्तरमेघ २४ श्लोक

२. उत्संगे वा मलिनवसने सौम्य निक्षिप्य वीणां
मद्गोत्राङ्कं विरचितपदं गेयमुद्गातुकामा ।
तन्त्रीरार्द्रां नयनसलिलैः सारयित्वा कथंचिद्
भूयो भूयः स्वयमपि कृतां मूर्च्छनां विस्मरन्ती ॥ उत्तरमेघ २५ श्लोक

३. शेषान् मासान् विरहदिवसस्थापितस्यावधेर्वा
विन्यस्यन्ती भुवि गणनया देहलीदत्तपुष्पैः ।
संभोगं वा हृदयनिहितारम्भमास्वादयन्ती
प्रायेणैते रमणविरहे ह्यङ्गनानां विनोदाः ॥ उत्तरमेघ २६ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ही कठिन होता है। अनुभवी कवि अपने हृदय की सच्ची बात को मेघ को बता रहा है :—

'दिन में तो पूर्व वर्णित कामों में लगी हुई तुम्हारी सखी को मेरा विरह उतना नहीं सताता होगा किन्तु कुछ काम न होने से उसकी रात बड़े कष्ट से बीतती होगी ऐसा मैं समझता हूँ। अतः आधी रात के समय उनींदी सी भूमि पर सोई उस साध्वी को मेरे सन्देशों से पूर्ण सुख देने के लिए तुम महल की खिड़की पर बैठकर देखना।'[१]

विरहिणी की मनोव्यथा का महाकवि कालिदास ने सही विश्लेषण किया है और अपनी पत्नी को उसके अनन्य स्नेह के कारण पतिव्रता से सम्बोधित किया है :—

मनोव्यथा से दुखी, भूमि पर बिछे हुए बिस्तर पर एक ही करवट से पड़ी हुई, पूर्व दिशा के कोने में मात्र जिसकी एक कला रह गई है ऐसी चन्द्रमा की मूर्ति सी, जो रातें मेरे साथ इच्छानुसार विभिन्न रति क्रीड़ाओं से कुछ ही क्षणों की भाँति व्यतीत करती थीं अब विरह के कारण उन्हीं रातों को रो-रो कर बिताती हुई, उस पतिव्रता को देखना।'[२]

समय के अनुरूप अच्छी वस्तुयें भी बुरे दिनों में कष्टकारक हो जाती हैं। चन्द्रमा की किरणें मन को सुख देती हैं किन्तु विरह की स्थिति में वही सन्ताप देने वाली हो जाती हैं :—

'रोशनदानों से भीतर आई हुई चन्द्रमा की किरणों को पहले सुख के दिनों की तरह अमृत सी शीतल समझकर उनकी ओर मुख करती हुई और फिर विरह के कारण उनसे संतप्त होकर आँखों की पलकों से ढकती हुई। बादलों से घिरे दिन में अधखिली स्थल कमलिनी की तरह उस मेरी प्रतिव्रता को देखोगे।'[3]

---

१. सव्यापारामहनि न तथा पीडयेन्मद्वियोगः
शङ्के रात्रौ गुरुतरशुचं निर्विनोदां सखी ते।
मत्संदेशैः सुखयितुमलं पश्य साध्वीं निशीथे
तामुन्निद्राभवनिशयनां सौधवातायनस्थः॥ उत्तरमेघ २७ श्लोक

२. आधिक्षामां विरहशयने सन्निषण्णैकपार्श्वां
प्राचीमूले तनुमिव कलामात्रशेषां हिमांशोः।
नीता रात्रिः क्षण इव मया सार्धमिच्छारतैर्वा
तामेवोष्णैर्विरहमहतीमश्रुभिर्यापयन्तीम्॥ उत्तरमेघ २८ श्लोक

३. पादानिन्दोरमृतशिशिराञ्जालमार्गप्रविष्टान्
पूर्वप्रीत्या गतमभिमुखं संनिवृत्तं तथैव।
चक्षुः खेदात् सलिलगुरुभिः पक्ष्मभिश्छादयन्तीं
साभ्रेऽह्नीव स्थलकमलिनीं न प्रबुद्धां न सुप्ताम्॥ उत्तरमेघ २९ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाकवि कालिदास ने सामाजिक मान्यताओं को ध्यान में रखते हुए अपने पारिवारिक सहजसुख का और प्रवास में पति के रहने पर पत्नी की कैसी स्थिति हो जाती है इसका सही वर्णन किया है :—

'स्नान के पश्चात् बिना उबटन तेल आदि के फैले हुए हैं और गालों पर लटके हुए बालों को, कोमल अधरों को गर्मी देने वाली निःश्वासों से हटाती हुई एवं स्वप्न में ही किसी प्रकार मेरा सहवास हो जाए' यह सोचकर आंसुओं से अधिक निकलने से अवरुद्ध हो गया है मार्ग जिसका ऐसी नींद की इच्छा करती हुई उस मेरी साध्वी पत्नी को तुम देखना।'[१]

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी मानव के जीवन में अतृप्त भावों की तृप्ति के लिए स्वप्नों का भी एक महत्त्व है क्योंकि जिनको वह सामान्य रूप से नहीं पा सकता है उन्हें स्वप्न में प्राप्त कर कुछ सन्तुष्टि तो अनुभव करता ही है और आशावान् हो जाता है। पति के प्रवास में होने से मिलने की आशा तो होती है किन्तु शाप की स्थिति में एक लम्बी अवधि में मिलने की आशा होती है। पूर्व के भोगे हुए सुखों की याद में आसुओं की झड़ी निकलने से आँखें नींद के लिए बन्द ही नहीं हो सकती हैं। अतः पूर्व भोगा हुआ रति सुख स्वप्न से भी दूर हो जाता है और व्यक्ति अपने को कुछ हल्का अनुभव नहीं कर पाता है :—

'बिछुड़ने के पहले दिन फूलमाला को हटाकर जो शिखा बनाई थी, जिसको कि शाप के समाप्त होने पर प्रसन्न हुआ मैं ही खोलूंगा, जिस चोटी को छूने में भी उसे पीड़ा होती है और जो उलझी हुई है, उस एक चोटी को बिना कटे हुए नाखूनों वाले हाथ से अपने गालों पर से बार-बार उन्हें हटाती हुई पतिव्रता को तुम देखना।'[२]

विरहिणी नायिका अपने दुख में ही इस प्रकार दुखी रहती थी कि उसे अपने अन्य कामों की सुध ही नहीं थी और वह सजती-धजती भी किसके लिए? पति तो एक वेणी करके छोड़ गया है जो अब चिरकाल में आने पर ही खुलेगी। बाल साफ न करने से उलझ गये हैं और हाथ लगाने पर भी उनमें पीड़ा हो रही है।

---

१. निःश्वासेनाधरकिसलयक्लेशिना विक्षिपन्ती
शुद्धस्नानात् परुषमलकं नूनमागण्डलम्बम्।
मत्संभोगः कथमुपनमेत्स्वप्नजोऽपीति निद्रा
माकांक्षन्तीं नयनसलिलोत्पीडरुद्धावकाशाम्॥ उत्तरमेघ ३० श्लोक

२. आद्ये बद्धा विरहदिवसे या शिखा दाम हित्वा
शापस्यान्ते विगलितशुचा तां मयोद्वेष्टनीयाम्।
स्पर्शक्लिष्टामयमितनखेनासकृत्सारयन्तीं
गण्डाभोगात्कठिनविषमामेकवेणीं करेण॥ उत्तरमेघ ३१ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नारी के सिर के बाल, अच्छी प्रकार से संभाले के कारण अधिक सौन्दर्यवर्धक होते हैं किन्तु विरह में वह भूषण हीन, वस्त्र मलिन और शरीर से शक्ति रहित हो गई है। ऐसी स्थिति में उसे देखकर किसके आँखों में आँसू नहीं आ जायेंगे:—

'आभूषण रहित होकर बार-बार दुख से भूशय्या पर रखे हुए अपने मृदुशरीर को किसी प्रकार धारण करती हुई उस दुर्बल मेरी प्रिया को देखकर तुम्हारे भी नये जलरूप आँसू अवश्य झरने लगेंगे क्योंकि प्रायः सभी कोमल हृदय के व्यक्ति दयालु स्वभाव के होते हैं।'[1]

कालिदास के मन के सही विचार

महाकवि कालिदास यक्ष के रूप में अपनी दारुण दुखमयी और अपनी पत्नी की सही स्थिति का मेघ को वर्णन कर रहा है। उसकी पत्नी के हृदय में उसके लिए अत्यधिक अनुराग है, जिसे मेघ उसकी नगरी में पहुँचकर स्वयं देखेगा—

'हे मेघ! तुम्हारी सखी का मन मेरे प्रति अनुराग से भरा है। यह मैं जानता हूँ। अतः इस पहले वियोग से वह ऐसी होगी, यह मैं सोचता हूँ। अपने को भाग्यशाली समझता हुआ मैं यह अधिक बढ़ा-चढ़ा कर नहीं बोल रहा हूँ। जो कुछ भी मैंने कहा है वह तुम शीघ्र ही प्रत्यक्ष देखोगे।'[2]

शकुनशास्त्र में पुरुष का दहिना और नारी का बांया अंग फड़कना शुभ माना जाता है। यह प्रिय मिलन और मनचाही वस्तु प्राप्ति का सूचक भी होता है। महाकवि कालिदास ने लोक व्यवहार की दृष्टि से भी अपनी बहुमुखी प्रतिभा का मेघदूत अपनी आत्मकथा में अच्छा परिचय दिया है। जो लोग महाकवि कालिदास की कर्मभूमि को उसकी जन्मभूमि मानते हैं, उन्हें मेघदूत में महाकवि के हृदय के सच्चे भावों पर अवश्य ध्यान देना चाहिए। वह अपनी जन्मभूमि में ही यक्ष के रूप में अपना सन्देश अपनी पत्नी को हिमालय के उत्तराखण्ड भूभाग में क्यों भेज रहा है? वह कल्पना में नहीं अपितु वास्तविकता के साथ वहाँ के स्थानों का आँखों देखा सही वर्णन करता है। अपनी कविता को प्रेरणा देने वाली प्रेयसी की मन

१. सा संन्यस्ताभरणमबला पेशलं धारयन्ती
शय्योत्सङ्गे निहितमसकृद् दुखदुखेन गात्रम्।
त्वामप्यस्त्रं नवजलमयं मोचयिष्यत्यवश्यं
प्रायः सर्वो भवति करुणावृत्तिरार्द्रान्तरात्मा॥ उत्तरमेघ ३२ श्लोक

२. जाने सख्यास्तव मयि मनः संभृतस्नेहमस्मा
दित्थंभूतां प्रथमविरहे तामहं तर्कयामि।
वाचालं मां न खलु सुभगम्मन्यभावः करोति
प्रत्यक्षन्ते निखिलमचिराद् भ्रातरुक्तं मया यत्॥ उत्तरमेघ ३३ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्थिति एवं शारीरिक स्थिति का कालिदास कितना सही वर्णन करता है। इस वर्णन में उसकी पूर्व स्मृति और अपने पारिवारिक जीवन के सुखद अनुभव हैं। कवि अपनी कविता के माध्यम से ही अपनी सच्ची आत्मकथा अभिव्यक्त कर रहा है।

कालिदास के प्रथम कुमारसम्भव और अन्तिम रघुवंश में महाकवि ने अपनी जन्मभूमि के प्राकृतिक सौन्दर्य, वैभव, शिव-पार्वती के निवास स्थान कैलास और पार्वती की जन्मस्थली एवं तपस्थली हिमालय के गौरी शैल तथा औषधिप्रस्थ विशाल नगर का ही वर्णन किया है। इतने बड़े काव्य में कहीं भी उज्जयिनी के किसी भी भूभाग का आंशीक रूप में भी वर्णन नहीं है। क्यों? महाकवि कालिदास ने अपनी जन्मभूमि के प्राकृतिक वैभव और भौगोलिक इतिहास को अपने यौवन की प्रारम्भिक अनुभूतियों के आधार पर अनेक रचनाओं में अक्षरशः सही अभिव्यक्त किया है। पूर्वाग्रही भावनाएँ रखने वाले सब कुछ अच्छी प्रकार से जानते हुए भी सत्य को ग्रहण करने के लिए तय्यार नहीं होते हैं। मेघदूत में महाकवि कालिदास ने अपने जीवन की व्यथा मेघ से कहकर आत्मकथा के रूप मे प्रबुद्ध विचारकों के समक्ष निर्णय के लिए रखा है।

महाकवि कालिदास ने मेघदूत अपनी आत्मकथा में मेघ को अपनी वियोगिनी पत्नी की सही स्थिति का वर्णन करते हुए सही बात को उत्तरमेघ में ३३वें श्लोक में कहा है—'हे मेघ! अपने को भाग्यशाली समझता हुआ मैं यह वाचाल बनकर नहीं बोल रहा हूँ मैंने जो कुछ कहा वह सब तुम शीघ्र ही प्रत्यक्ष देखोगे।'[१]

कालिदास ने अपनी प्रेयसी और अपनी जन्मभूमि के भूभाग का जो भी अपनी आत्मकथा में वर्णन किया है यह सब सही है जिससे तुम उस भूमि में जाकर अपनी आँखों से प्रत्यक्ष रूप में सही देखोगे। इसका सही निर्णय वही दे सकता है जिसने महाकवि के इन तीन ग्रन्थों का कुमारसम्भव, मेघदूत और अभिज्ञान शाकुन्तल नाटक का अध्ययन, उज्जयिनी और हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल का भ्रमण कर निष्पक्ष भाव से इन पर तुलनात्मक रूप में विचार किया हो।[२]

उसके पास पहुँचने पर हे मेघ! तुम मेरी मातृभूमि में निवास करने वाली मेरी पत्नी की वास्तविक स्थिति स्वयं देखकर अनुभव करोगे :—

'जब तुम उसके पास पहुँचोगे तब उस मृगनयनी की ऊपर के पलक में

---

१. कालिदास के समस्त साहित्य का तुलनात्मक और जन्मभूमि के साक्ष्यों के लिए हमारी 'कालिदास और उसका मानवीय साहित्य' नामक पुस्तक को देखें।

२. वाचालं मां न खलु सुभगम्मन्यभावः करोति
प्रत्यक्षन्ते निखिलमचिराद् भ्रातरुक्तं मया यत्। उत्तरमेघ ३३ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

फड़कती हुई वह बांईं आंख, जिसका कि कानतक आना बालों से रुक जाता है, जो काजल न लगाने के रूखी है और मदिरा की मादकता न होने से भौंह मटकाने का अभ्यास जिसे भूलसा गया है, उस समय मैं समझता हूँ मछलियों के इधर-उधर चलने से हिलाए गये नीले कमल सी लगने लगेगी।'[१]

'मेरे नाखूनों के चिह्न इस समय जिसमें नहीं दीख रहे हैं, दैवगति से दीर्घकाल से पहनी हुई मोतियों की लड़ वाली करधनी भी जिसमें नहीं है एवं संभोग के बाद जिसे मैं अपने हाथों से दबाया करता था उस प्रिया की केले के खम्बे के समान गौर वर्ण की बायीं जंघा भी फड़कने लगेगी।'[२]

मानव जीवन में स्वप्न का महत्त्व—विरही जनों को नींद आने पर उन्हें स्वप्न में अपने प्रिय जन के दर्शन होने लगते हैं। ऐसी स्थिति में हे मेघ! तुम गरजना नहीं अपितु कुछ क्षण प्रतीक्षा कर लेना :—

'हे मेघ! उस समय मेरी प्रिया यदि निद्रामग्न हो तो तुम विना गरजे उसके पीछे बैठकर एक पहर प्रतीक्षा करना क्योंकि बड़ी कठिनाई से मुझ प्रणयी को स्वप्न में पा लेने पर किया गया उसका गाढ़ आलिगन सहसा गले में लता जैसी भुजाओं के बन्धन रहित न हो जायें।'[३]

यक्षरूपी कालिदास मेघ को अपनी पत्नी को जगाकर सन्देश देने का कितना अच्छा उपाय बता रहा है क्योंकि उसे अपनी पत्नी की मनस्थिति का पूर्ण ज्ञान एवं पूरा ध्यान है :—

'तुम जल की धीरी-धीरी बौछार की ठंडी हवा से जगाकर नये-नये मालती के गुच्छों के साथ-साथ चेतना युक्त सी एवं जिस खिड़की पर तुम बैठे हो उस

---

१. रुद्धापाङ्गप्रसरमलकैरंजनस्नेहशून्यं
प्रत्यादेशादपि च मधुनो विस्मृतभ्रूविलासम्।
त्वय्यासन्ने नयनमुपरिस्पन्दि शंके मृगाक्ष्या
मीनक्षोभाच्चलकुवलयश्रीतुलामेष्यतीति॥ उत्तरमेघ ३४ श्लोक

२. वामश्चास्याः कररुहपदैर्मुच्यमानो मदीयै
र्मुक्ताजालं चिरपरिचितं त्याजितो दैवगत्या।
संभोगान्ते मम समुचितो हस्तसंवाहनानां
यास्यत्यूरुः सरसकदलीस्तम्भगौरश्चलत्वम्॥ उत्तरमेघ ३५ श्लोक

३. तस्मिन् काले जलद! यदि सा लब्धनिद्रासुखा स्या-
दन्वास्यैनां स्तनितविमुखो याममात्रं सहस्व।
मा भूदस्याः प्रणयिनि मयि स्वप्नलब्धे कथंचित्
सद्यः कण्ठच्युतभुजलताग्रन्थि गाढोपगूढम्॥ उत्तरमेघ ३६ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ओर टकटकी लगाई हुई उस मानिनी से, बिजली को भीतर छिपाये हुए कुछ गम्भीर होकर गर्जन रूप वचनों से मेरा सन्देश देना प्रारम्भ करना।'[१]

बेचारा मेघ कैसे सन्देश देगा ? इसे कालिदास स्पष्ट करता कि अपनी गर्जना के द्वारा तुम मेरा सन्देश सुनाना उपमा का धनी कवि अपना चमत्कार दिखा ही देता है।

बिछोह की स्थिति में प्रेमी जन विरह में रहते हुए यह भी नहीं जान पाते थे कि मेरा साथी सकुशल जीवित है क्योंकि उस युग में सन्देश भेजने की कोई व्यवस्था नहीं थी। अतः वह किसी प्रकार आशा और ईश्वर के सहारे पर ही अपना सन्देश भेजने के दुख का समय यापन करती थी। इसके अतिरिक्त कोई व्यवस्था नहीं थी। यक्ष का सन्देश मेघ सुखद रूप में देता है कि तेरा पति जीवित है जिसका मैं सन्देश सुना रहा हूँ। पतिव्रता के लिए इससे बड़ा शुभ सन्देश क्या हो और सकता है:—हे जीवित पतिवाली ! मुझ मेघ को तुम अपने प्रिय का प्रियमित्र और हृदय में रखे हुए उसके सन्देशों को लेकर तुम्हारे पास आया हुआ समझो। मैं वही मेघ हूँ, जो मधुर और गम्भीर गर्जनाओं से, अपनी प्रियाओं की एक वेणी को खोलने के लिए आतुर और मार्ग में विश्राम करते हुए पथिकों के समूहों को, शीघ्र घर जाने के लिए विवश कर देता हूँ।[२]

महाकवि कालिदास के शब्दों के प्रयोग पर हमें किसी भी प्रकार की शंकाएँ नहीं हैं जैसे कि कई लोगों को हैं क्योंकि महाकवि के पास शब्द भण्डार की कमी नहीं है। अतः उसने प्रसंग और परिस्थिति के अनुरूप सही शब्दों का ही प्रयोग किया है। हमने महाकवि कालिदास के भावों को दृष्टि में रखकर मेघदूत के आधार पर ही उसके शब्दों में ही हुई सच्ची व्यथा को आत्मकथा के रूप में स्पष्ट करने का एक सही प्रयास किया है। सभी लोग यह स्वीकार करते हैं, कि महाकवि कालिदास हिमालय का निवासी था और मेघदूत में उसने अपने जीवन की ही दारुण शापयुक्त गाथा स्पष्ट कर मेघ को केदारनाथ की चोटी से सटी कविल्ठा अलकापुरी में अपनी विरहिणी, दुखी और चिन्तित प्रेयसी के पास भेजा है।

---

१. तामुत्थाप्य स्वजलकणिकाशीतलेनानिलेन
प्रत्याश्वस्तां सममभिनवैर्जालकैर्मालतीनाम्।
विद्युद्गर्भः स्तिमितनयनां त्वत्सनाथे गवाक्षे
वक्तुं धीरः स्तनितवचनैर्मानिनीं प्रक्रमेथाः॥ उत्तरमेघ ३७ श्लोक

२. भर्तुर्मित्रं प्रियमविधवे बिद्धि मामम्बुवाहं
तत्सन्देशैर्हृदयनिहितैरागतं त्वत्समीपम्।
यो वृन्दानि त्वरयति पथि श्राम्यतां प्रोषितानां
मन्द्रस्निग्धैर्ध्वनिभिरबलावेणीमोक्षोत्सुकानि॥ उत्तर मेघ ३८ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रिय का सन्देश मिलन के समान होता है—किसी नव व्यक्ति या वस्तु को देखने की उत्कण्ठा मानव के मन में होती ही है। भागवत में अथवा भ्रमरगीत में गोपियाँ कृष्ण के विरह में दुखी कैसा अनुभव करती हैं? यक्ष रूपी कालिदास की पत्नी भी वर्षाऋतु में अपने सन्निकट आये हुए मेघ को देखकर उत्कण्ठित होकर ऊपर देखती है। गरुड़ जैसा पक्षी या हनुमान जैसा अतुलित बलधाम वाला व्यक्ति ही या पर्वतों की चोटियों में विचरण करने वाला मेघ ही सच्चा सन्देश वाहक बन सकता है। उस शक्तिमान् की कृपा से मूक भी वाचाल होकर सन्देश दे सकता है और मन के सच्चे भावों के बल पर एक व्यक्ति के मन के विचार दूसरे प्रिय जन के पास आकाशवाणी के रूप में या यौगीक क्रियाओं के द्वारा पहुँचाए ही जाते हैं। इस प्रकार यक्षरूपी कालिदास के अन्तस्तल की सच्ची व्यथा उसकी अनन्यभाव से ध्यान करने वाली पतिव्रता पत्नी के पास क्या नहीं पहुँच सकती है? इसे दूरदर्शी भावुक कवि ने मानवीय भावना के अनुरूप इस प्रकार कहा है—

'तुम्हारे इतना कहने पर उत्कण्ठा से प्रसन्न हृदय वाली वह मेरी प्रिया, ऊपर को मुख करके इस प्रकार तुम्हारी ओर देखेगी और तुम्हारा आदर करेगी, जैसे राम का सन्देश लेकर गये हनुमान् को सीता ने देखा था। तब इससे आगे की बातों को ध्यान से सुनेगी क्योंकि सौभाग्यवती स्त्रियों के लिए मित्रों द्वारा लाये हुए प्रियतम के समाचार और साक्षात् प्रियसमागम में थोड़ा सा ही अन्तर होता है।'[1]

प्रिय का सन्देश प्रेयसी के लिए साक्षात् मिलन से कम नहीं होता है और उसके हृदय के लिए वह बहुत बड़ा सम्बल होता है, जिससे वह शेष समय को बड़े ही धैर्य से शीघ्र ही मिलन की आशा में काट लेती है। औषधि रोगी के लिए वरदान होती है और प्रियका सन्देश विरही के लिए जीवन आधार एवं प्राणरक्षक होता है।

संस्कृत के आदि कवि बाल्मीकि की कविता के प्रति रघुवंश में महाकवि कालिदास ने इस प्रकार कृतज्ञता यापन की है :—

अथवा कृतवाग्द्वारे वंशेऽस्मिन्पूर्वं सूरिभिः। और मेघदूत में—इत्याख्याते पवनतनयं मैथिलीवोन्मुखी सा। का वर्णन किया है।

महाकवि कालिदास ने मेघदूत में यक्ष के माध्यम से अपनी सच्ची आत्म-कथा लिखी है। अपने समान ही यक्ष को दारुणदुख में देखकर अधिकार प्रमत्त के

---

१. इत्याख्याते पवनतनयं मैथिलीवोन्मुखी सा
त्वामुत्कण्ठोच्छ्वसितहृदया वीक्ष्य सम्भाव्य चैवम्।
श्रोष्यत्यस्मात्परमवहिता सौम्य सीमन्तिनीनां
कान्तोदन्तः सुहृदुपनतः संगमात् किंचिदूनः। उत्तरमेघ ३९ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

समान स्थिति में पाकर ही उज्जैन मध्यप्रदेश के भूभाग से मार्ग दर्शन कराता हुआ अपनी जन्मभूमि में हिमालय उत्तराखण्ड के केदारखण्ड में पहुँचाकर यक्षों की नगरी तक भी कथानक के अनुरूप अलकापुरी पहुँचा देता है। मार्ग का वर्णन उज्जैन से हिमालय तक का मेघदूत के आधार पर महाकवि कालिदास की जन्मभूमि का ही है मार्ग दिग्दर्शन करने के पश्चात् ही महाकवि ने अपने सच्चे हृदय के विचार सन्देश के रूप में आशा से परिबद्ध होकर अपनी पत्नी के पास भेजे हैं :—

कवि का रामगिरि में जीवित होने का सन्देश देना

हे चिरंजीवि मेघ ! मेरी ओर से और अपनी ओर से उपकार की भावना से उसे यह कहना कि हे अबले ! रामगिरि आश्रम में निवास करता हुआ तुम्हारा सहचर जीवित है एवं तुम्हारी कुशल पूछता है क्योंकि सुलभ हैं विपत्तियां जिनके लिए ऐसे प्राणियों के लिए सर्वप्रथम कुशल क्षेम पूछने की ही बात होती है।'[१]

पूर्वमेघ के प्रथम श्लोक में कवि ने अपने रामगिरि आश्रमों में निवास का कारण शाप माना है और विरह, शाप, गर्मी में घने पेड़ों की अच्छी छाया में एवं सीता के स्नानों से पवित्र हवा, पानी युक्त स्थान में निवास करना ही श्रेयस्कर माना है। 'स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु' कहा है और उत्तरमेघ के ४० वें श्लोक में कहा है—'ब्रूया एवं तव सहचरो रामगिर्याश्रमस्थ'। रामगिरि के आश्रम में वास करने वाला तुम्हारा सहचर जीवित है। सहचर शब्द का प्रयोग दोनों के पारस्परिक पवित्र स्नेह और पूर्ण सहमति होने का एवं साथ चलने का द्योतक है। कवि शाप के कारण भी परवश है और अपनी विद्वत्ता तथा अपने मानवीय साहित्य से विक्रमादित्य के राज्य में ही नहीं अपितु विश्व में विख्यात होकर उज्जयिनी में वास करता रहा। अपनी पत्नी के प्रति उसका विशेष अनुराग है और शाप एवं प्रवास की अवधि में उसने प्रकृति में भी अपनी पतिव्रता की ही अनुभव की हुई चेष्टाओं तथा आकृति को देखा है। देवदासियों, राजकुमारियों, नृतकियों, जनजातियों की बन्धुओं और कलाविज्ञा कुलांगनाओं के सम्पर्क में आने पर भी अपने एक नारीव्रत को अपनी आचरण की शुद्धि से अपवित्र नहीं होने दिया है। मेघ का सन्देश देने वाला उत्तरमेघ का प्रसंग इसका ज्वलन्त प्रमाण है। हिमालय और अलका का प्राकृतिक और मानवीय सौन्दर्य तथा हृदय की निश्छल

१. तामायुष्मन् मम च वचनादात्मनश्चोपकर्तुं
ब्रूया एवं तव सहचरो रामगिर्याश्रमस्थः।
अव्यापन्नः कुशलमबले ! पृच्छति त्वां वियुक्तः
पूर्वाभाष्यं सुलभविपदां प्राणिनामेतदेव ॥ उत्तरमेघ ४० श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पवित्रता क्या अन्यत्र कहीं देखने में मिल सकती थी ? कवि और उसकी प्रभावोत्पादक कविता में एक विशेष आकर्षक होता है किन्तु उच्च पदासीन तथा समाज का सच्चा प्रतिनिधि होने के कारण वह आदर्श का प्रतीक एवं दूसरों के लिए पथदर्शक भी होता है। अत: वह कभी उद्देश्य से भ्रष्ट नहीं हो सकता है। प्राय: ललित कलाओं का जन्म संघर्ष एवं साधना करने वालों के हृदय से ही हुआ है और उसका वितरण शिष्यत्व के पवित्र सम्बन्ध से ही किया जाता रहा है तथा कलाकार आत्मबल से तभी संसार में सम्मान पाता है और संसार उसे आदर्श मानकर शिक्षा ग्रहण करता है।

शाप की अवधि में कवि की स्थिति—महाकवि कालिदास ने इस श्लोक में अपने मन की सच्ची बात, अपनी सही व्यथा, विवशता, जन्मभूमि की स्मृति, उज्जयिनी का निवासी नहीं अपितु अपने को प्रवासी स्वीकार कर रहा है और अपनी साध्वी पत्नी को मिलने के लिए अधिक आतुर एवं व्याकुल है। मानव हृदय रखने वाले, मानवीय साहित्य का सृजन करने वाले और अपनी जन्मभूमि के सुदूर पूर्व में रहने के कारण अपनी विशेष रचना जिसे महाकवि कालिदास की आत्मकथा माना जाता है, उसमें विशेष रूप से कवि ने अपने हृदय की सही अनुभूति तथा विचारों को बड़े ही मार्मिक भावों में स्पष्ट कर दिया है :—

'विपरीत हुए विधाता ने अवरुद्ध कर दिए हैं सभी मार्ग जिसके, ऐसा दूर स्थित (रामगिरि आश्रम में) तुम्हारा सदा साथ चलने वाला जीवन साथी तुमसे भले ही न मिल सके किन्तु अपने शरीर की दुर्बलता, अत्यधिक सन्ताप, निरन्तर विरह के दुख में रोता रहना, उत्कण्ठित रहना और दीर्घ विश्वास छोड़ने से अपने मन में यह कल्पना कर लेता है कि मेरे वियोग में तुम भी कृष, संतप्त, आँखों में आँसू बहाती, निरन्तर मिलने की उत्कण्ठा वाली और अत्यधिक लम्बी-लम्बी आहें भर रही होगी।'[१]

यक्षरूपी कालिदास अपनी आत्मकथा में अपने समान ही अपनी वियोगिनी पत्नी के दुख को भी अच्छी प्रकार से समझता है। मानवीय स्वभाव है कि मानव दुखों में अधिक भयभीत हो जाता है और प्रिय जनों के विद्रोह से अत्यधिक विह्वल हो जाता है। काम की उद्दीप्त भावनाओं के वेग से अपने को रोक नहीं पाता है। अभाव से ही दुख की उत्पत्ति होती है और पराधीन या असमर्थ होने पर ही व्यक्ति दुखों के उद्वेग से रो पड़ता है।

१. अंगेनाङ्गं प्रतनु तनुना गाढतप्तेन तप्तं
सास्रेणाश्रुद्रुतमविरतोत्कण्ठमुत्कण्ठितेन।
उष्णोच्छ्वासं समधिकतरोच्छ्वासिना दूरवर्ती
संकल्पैस्तैर्विशति विधिना वैरिणारुद्धमार्गः॥ उत्तरमेघ ४१ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दुखी व्यक्ति अपने दुख को रोकर, सुनाकर, गाकर या उसे कविता का रूप देकर ही भूल पाता है। शक्तिशाली या प्रभावशाली अपने बल के क्षीण होने पर अपने को असमर्थ समझकर रो पड़ता है या कला प्रेमी कला के द्वारा उन्हें हृदय से बाहर निकाल देता है या ईश्वर के प्रति समर्पित हो जाता है। कालिदास की विद्योत्तमा अपने दुखों को ईश्वर की पूजा, सगीत, पशु-पक्षियों अथवा पेड़-पौधों की देख-रेख में या पति के क्रिया-कलापों के स्मरण में भूलाती है। महाकवि कालिदास कवि होने से अपने दुख को मेघदूत की कविता के द्वारा अपने मन के सभी प्रकार के भावों को अपनी सच्ची कथा में अभिव्यक्त कर ही देता है।

यक्षरूपी कालिदास ने अपनी दारुण दुख युक्त व्यथा को अपनी आत्मकथा के इस श्लोक में स्पष्ट कर दिया है। कवि ने अपने शाप के और प्रवास के समय में रामगिरि आश्रम में अपने विरही जीवन के दुखों को कविता का रूप देकर मेघदूत गीतिकाव्य को बनाया है। महाकवि कालिदास के बाल्यकाल की चर्चा इस आत्मकथा रूपी मेघदूत में तो नहीं हो पाई है क्योंकि यहाँ शाप जन्य ताप की दारुण व्यथा में पूर्वरूप को नहीं कह पाया उसे भूल गया किन्तु यौवन की तरंगों और विरही जीवन के दारुण दुखों का इस गीतिकाव्य में गीत का रूप देकर सही-सही गा दिया है।

महाविदुषी विद्योत्तमा ने भी अपने प्रकाण्ड पाण्डित्य का अपनी विरह जनित गाथा को व्यक्त करने में कविता में भी परिचय तो अवश्य दिया होगा किन्तु अपने नारी लज्जायुक्त स्वभाव के कारण उसे काव्य का रूप नहीं दिया होगा। संस्मरण या पत्र के रूप में अवश्य कुछ लिखा होगा। शास्त्रार्थ में विद्योत्तमा पंडितों के चातुर्य से पराजित और अन्त में महाकवि कालिदास के पांडित्य पूर्ण काव्य रचना से प्रभावित तथा किये गये अपमान से अधिक लज्जित थी। अतः उसने इतना ही पर्याप्त समझा। यद्यपि कालिदास उसके ही कारण महाकवि बना था। महाकवि के हृदय में भी एक विदुषी नारी से अपमानित होने पर गुप्तकाशी के पर्यावरण से विद्वान् बनने की उत्युतकट कामना थी और वहाँ के ही उन पंडितों की सहायता, कालीमठ की काली की साधना तथा प्रेरणादायिनी पत्नी की फटकार से वह एक महान् विद्वान् बनकर पार्वती के शाप से विक्रमादित्य के राजदरवार का महाकवि बना। अपमान न होता तो वह कवि न बन पाता और पार्वती का शाप न मिला होता तो विरह के दुख में मेघदूत न बना होता तथा महाकवि कालिदास को कविगुरु की उपाधि न मिली होती और उज्जयिनी का यशोगान न हुआ होता। उज्जयिनी ने इसी आधार पर सर्वप्रथम आज कालिदास को स्मरण किया है और उसे उज्जयिनी का निवासी माना है।

महाराजा विक्रमादित्य गुणग्राही, कलाप्रेमी और विद्वत्ता का पारखी भी था। उस युग में राज सभाओं में शास्त्रार्थ की ओर कविता सुनने-सुनाने की एक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बहुत बड़ी परम्परा सी बनी हुई थी। महाकवि कालिदास शास्त्रार्थों में अपने पांडित्य और कवि गोष्ठियों में अपनी हृदयहारिणी कविता के द्वारा कवियों के कुल का गुरु बनकर अत्यधिक ख्याति प्राप्त कर चुका था। उसकी इस ख्याति को सुनकर विद्योत्तमा को कितनी हृदय ह्लादिनी प्रसन्नता हुई होगी ? विद्योत्तमा तो राजकन्या ही थी किन्तु महाकवि कालिदास उस युग के महान् साम्राज्य का राजकवि था। महाराजा विक्रमादित्य उस महान् कवि की कविताओं से अत्यधिक प्रभावित होकर उसके प्रति अधिक श्रद्धा रखता था और उसका अधिक विश्वास करता था क्योंकि प्रतिद्वन्द्वियों की बातों पर वह तनिक भी ध्यान नहीं देता था।

महाकवि कालिदास ने अपने मेघदूत में जो लिखा है उसे मेघ द्वारा अपने सन्देश में कितना स्पष्ट कर दिया है। जिसे सच्चा पाठक यक्ष और कवि के भेद भाव को भूल कर उसे एक ही पात्र समझ कर महाकवि कालिदास को उज्जयिनी कर्मभूमि का नहीं अपितु उसे हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल का ही निवासी मानेंगे। इन तथ्यों के आधार पर सच्चा पाठक यह अनुभव करेगा। अपने प्रवासी जीवन के दारुण दुख को उसने विक्रमादित्य के राज्य में भोगा और अपनी सच्ची व्यथा एवं कथा मेघदूत में स्पष्ट कर दी। उसका वास्तविक अर्थ लगाना या समझना पाठक के विवेक पर निर्भर करता है।

महाकवि कालिदास ने अपनी आत्मकथा में भौगोलिक दृष्टि से अपनी पद-यात्रा का अलकापुरी से लेकर रामगिरि आश्रम पहुँचने तक जो देखा उसका आँखों देखा वर्णन बड़े ही स्पष्ट रूप से मेघदूत में किया है। महाकवि कालिदास यदि उज्जयिनी का निवासी होता तो वह अपना सम्बन्ध हिमालय के उत्तराखण्ड के भूभाग से न जोड़ता और हिमालय का इतना विस्तृत रूप में कभी भी वर्णन न करता। उस युग में सामाजिक मान्यताओं, यातायात की कठिनाइयों और वर्ण व्यवस्था के अनुरूप वैवाहिक सम्बन्ध दूर स्थानों में नहीं होते थे अपितु अपने सन्निकट के ही भूभाग में होते थे। केवल उस युग में समर्थवान्, रूप लोभी एवं राजा-महाराजा इसके अपवाद थे। राजा दुष्यन्त ने भी आखेट के आकर्षण से दिल्ली से कोटद्वार के निकट मालिनी नदी के तट पर कण्वाश्रम में गन्धर्व विवाह किया। दिल्ली और कोटद्वार का आने जाने का रथ या घोड़े से डेढ़ दिन का रास्ता था अर्थात् आने जाने का ३ दिन का रास्ता था। क्योंकि जब दुष्यन्त से शकुन्तला ने पूछा ? अब तुम कब सुध लोगे ? इस पर दुष्यन्त ने ऐसा कहा था। दुष्यन्त के नाम में गिनती में तीन अक्षर हैं :—

'हे प्रिये ! प्रति दिन एक-एक मेरे नाम का अक्षर गिनना। जब तक तुम नाम के अक्षरों के अन्त में पहुँचोगी तब तक मेरे अन्तःपुर से कोई व्यक्ति तुम्हारे पास तुम्हें लेने पहुँच जायेगा।'[1]

---

१. एकैकमत्र दिवसे दिवसे मदीयं नामाक्षरं गणय गच्छसि यावदन्तम्।
तावत् प्रिये ! मदवरोधानवेशवर्ती नेता जनस्तव समीपमुपैष्यतीति ॥
शकुन्तला ६ अक १२ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर्वतीय भूभाग में सामान्य जनता के विवाह सम्बन्ध अपने निकट के ही स्थानों में होते थे। अतः ऐसी भी कल्पना नहीं की जा सकती है कि महाकवि कालिदास उज्जयिनी का निवासी और उसकी पत्नी हिमालय के उत्तराखण्ड की रही हो। यदि यह भी मान लें कि महाकवि कालिदास ने ब्रह्मवैवर्त पुराण की योगिनी एकादशी से हेममाली की कथा को लेकर मेघदूत की रचना की हो तो भी हेममाली हिमालय में ही अपने दुख भोगता रहा किन्तु महाकवि कालिदास को वास्तव में वाक् सिद्धि सिद्धपीठ गुप्तकाशी के निकट कालीमठ से ही हुई थी। जो हिमालय के उत्तराखण्ड का विख्यात भूभाग है और कालिदास का विवाह भी अपने निकट के ही स्थान में गुप्तकाशी में हुआ था।

कुमारसम्भव, मेघदूत में हिमालय, अलका के भूभाग का इतना सजीव और सटीक वर्णन उत्तराखण्ड से बाहर रहने वाला या उज्जयिनी में बैठा हुआ व्यक्ति इतनी सूक्ष्म निरीक्षण की दृष्टि से कभी भी नहीं कर सकता है। इन तथ्यों के आधार पर यह स्वीकार करना पड़ता है कि महाकवि कालिदास और महाविदुषी विद्योत्तमा की जन्मभूमि उत्तरप्रदेश के उत्तराखण्ड का गढ़वाल केदारखण्ड ही है। महाकवि की कर्मभूमि अवश्य उज्जयिनी है। गुणाग्राही एवं विद्वानों का समादर करने वाले राजा विक्रमादित्य ही कालिदास के आश्रयदाता थे।

महाकवि कालिदास का सन्देश—मेघदूत गीतिकाव्य का नायक यक्षरूपी महाकवि कालिदास ने अपने हृदय के सच्चे, और गोपनीय विचारों को अपने कष्ट कारक शाप की अवधि में तथा प्रवासी जीवन की कथा को मेघ को इस प्रकार बताया है :—

'जो तेरा पति सखियों के सामने कहने वाली बातों को भी तुम्हारे मुख मण्डल को छूने के लोभ से तुम्हारे ही कानों में कहने को लालायित रहता था किन्तु आज कानों की पहुँच और आँखों से दूर होने के कारण वही तुम्हारा प्रिय अत्यन्त उत्कण्ठा से बनाए गये पदों के इस सन्देश को मेरे द्वारा तुमसे कहता है।'[1]

महाकवि अपने पूर्व संस्मरणों को कविता का रूप देकर मधुर स्मृति में आत्म-विभोर एवं उत्कण्ठित होकर मेघ के द्वारा सन्देश के रूप में प्रवासी जीवन की व्यथा के साथ अपनी जन्मभूमि में शीघ्र मिलने की आशा से भेज रहा है। अपनी विदुषी पत्नी को वह कविता के माध्यम से ही सन्देश भेजता है। यह श्लोक इसका सही प्रमाण है।

---

१. शब्दाख्येयं यदपि किल ते यः सखीनां पुरस्तात्
कर्णे लोलः कथयितुमभूदाननस्पर्शलोभात्।
सोऽतिक्रान्तः श्रवणविषयं लोचनाभ्यामदृश्य—
स्त्वामुत्कण्ठाविरचितपदं मन्मुखेनेदमाह॥ उत्तरमेघ ४२ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सहृदय, प्रबुद्ध और संस्कृत साहित्य के नवीन तथ्ययुक्त परिवेश में अन्वेषण करने वाले अध्येताओं को इस प्रकार के अनेक श्लोकों पर गम्भीरता से चिन्तन कर सही निष्कर्ष पर पहुँचना चाहिए। महाकवि कालिदास का महाराजा विक्रमादित्य के साम्राज्य उज्जयिनी के वैभवपूर्ण सुख में रहने पर भी मन प्रतिपल दुखी है क्यों? उज्जयिनी का निवासी कालिदास राज्याश्रय में सपत्नीक रहते हुए भी क्यों उज्जयिनी को छोड़ने के लिए व्याकुल है? उसकी शारीरिक एवं मानसिक स्थिति का सही विवरण मेघदूत कवि की सच्ची आत्मकथा के द्वारा स्पष्ट दे रहा है।

उज्जयिनी महाकवि कालिदास की कर्मस्थली, यश प्राप्त करने का स्थान, प्रवासी जीवन की भूमि और विशाल साम्राज्य के वैभव को देखने, महाकाल के प्रति भक्ति तथा शापयुक्त जीवन से मुक्त करने वाली आश्रयदात्री हो सकती है किन्तु महाकवि की सच्ची आत्मकथा के आधार पर जन्मभूमि तो कभी भी नहीं हो सकती है। वह तो मेघदूत के द्वारा एकमात्र हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल केदार भूमि का ही निवासी सिद्ध होता है।

महाकवि कालिदास की प्रमुख तीन रचनाएँ कुमारसम्भव, मेघदूत और अन्तिम नाटक शकुन्तला से स्पष्ट रूप में प्रकट होता है। उज्जयिनी के लिए यह सब मेघदूत के कुछ ही श्लोक हैं, जब कि सम्पूर्ण मेघदूत उत्तराखण्ड में स्थिर महाविदुषी का परिचय और उसकी मनस्थिति, मार्गदर्शन एवं सन्देश से सम्बन्धित हैं। कालिदास ने कथानक को अन्य पुरुष में दिखाकर अपने जीवन की दारुण दुखमयी कथा अपना सही परिचय देने में स्पष्ट की है। कवि की सच्ची भावनाओं से तादात्म्य जोड़कर ही यह सब सुगमता से ज्ञात होता है।

पत्नी के प्रति कवि के विचार – यक्षरूपी महाकवि कालिदास अपनी पत्नी की अनेक विशेषताओं का वर्णन करता है और वियोगावस्था में उसकी प्राप्ति न हो सकने के कारण उसे प्रणयकुपित होकर चण्डी अर्थात् प्रचंड स्वभाव वाली भी कह बैठता है। उसके प्रवासी शाप ग्रसित और प्रभाव हीन जीवन की विवशता के भावों की यह छटपटाहट और प्रणय आक्रोश है क्योंकि चाहने पर भी वह शब्दों के प्रयोग करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकता है। प्राकृतिक सौन्दर्य में विद्योत्तमा के रूप को देखता है किन्तु उसमें भी वह समता नहीं पाता :—

मैं प्रियंगुल लताओं में तुम्हारे शरीर की भयभीत हरिणी के देखने में तुम्हारे कटाक्षों की, चन्द्रमा में तुम्हारे मुख की शोभा की, मोरपंखों के गुच्छों में तुम्हारे केशों की और पतली नदियों की लहरों में तुम्हारे भ्रूभंगों की कल्पना कर साक्षा-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

त्कार की सम्भावना करता हूं परन्तु मुझे खेद है कि हे चण्डी ! किसी ही एक वस्तु में तुम्हारे अनुपम सौन्दर्य की समानता नहीं हो सकती है।'[१]

महाकवि कालिदास रूपी यक्ष के हृदय पर अपनी सुन्दरतम पत्नी की निष्कलंक छवि और अनेक गुण अंकित हैं। अतः उसके समक्ष उसे अन्य कोई भी वस्तु अच्छी नहीं दिख रही है। महाकवि ने यह भी स्वीकार किया है कि मेरे जीवन का निर्माण विदुषी नारी के योगदान से ही हुआ है। सच्ची गुणी नारी ही नर की सही प्रेरणा होती है। सच्ची प्रेरणा पाकर ही व्यक्ति महान् बनता है और असम्भव कहे जाने वाले कार्य भी सिद्धकर लेता है। संसार में, समाज में प्रकृति में कवि जो भी देखता है उसे दृष्टि, भाव और भाषा से परिमार्जित कर एक आदर्श रूप में कविता या काव्य में अभिव्यक्त कर देता है। वही मेघदूत में महाकवि कालिदास ने किया है एवं उसे ही अपनी आत्मकथा का स्वरूप दिया है।

महाकवि कालिदास ने शृंगार रस का अपनी रचनाओं में अधिक वर्णन किया है किन्तु आदर्शमयी स्थिति में उसे मानवीय दृष्टि से मानव को मानवीय जीवन यापन करने की भी व्यवस्था दिखाई है। विभिन्न प्रकार के ऐश्वर्य पूर्ण राजकीय पर्यावरण में रहने पर भी अपने जीवन को एक आदर्श रूप में एक पत्नी व्रत में रखा है। राजदरबार में दायित्व पूर्ण स्थानों पर रहने पर भी अपने मन में कविता के अतिरिक्त कहीं भी विकार नहीं आने दिए हैं। मेघदूत में महाकवि का यह आदर्श जीवन स्पष्ट दिखता है।

कुछ पाश्चात्य विद्वानों ने सिंहल के राजा कुमारदास के यहाँ कालिदास का जाना माना है और किसी वेश्या के प्रेम पाश में पड़कर उसकी मृत्यु भी माना है किन्तु वह केदारखण्ड का एवं विक्रमादित्य के आश्रय में रहने वाला महाकवि कालिदास कदापि नहीं हो सकता है क्योंकि आदर्शमयी संस्कार युक्त व्यवस्था का प्रतिपादक कालिदास कभी भी ऐसा कार्य नहीं कर सकता है। जबकि महाकवि कालिदास का अन्तिम जीवन ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी में हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल केदारखण्ड में व्यतीत हुआ है और वह तप करते हुए अपनी पूर्ण आयु को भोगकर ही शरीर छोड़ा है।

हमारा प्रिय कवि और विश्व का श्रेष्ठ कवि महाकवि कालिदास अपने पांडित्य एवं अपने अमर साहित्य से सर्वत्र प्रसिद्ध हो चुका था। उसके कृतित्व और व्यक्तित्व से लोग इतने प्रभावित थे कि अपनी कविताओं को भी उसके नाम से

---

१. श्यामास्वङ्गं चकितहरिणीप्रेक्षणे दृष्टिपातं
वक्त्रच्छायां शशिनि शिखिनां बर्हभारेषु केशान्।
उत्पश्यामि प्रतनुषु नदीवीचिषु भ्रूविलासान्
हन्तैकस्मिन् क्वचिदपि न ते चण्डि ! सादृश्यमस्ति ॥ उत्तरमेघ ४३ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जोड़ देते थे और लोगों ने अपने बालकों का नाम भी कालिदास रखना प्रारम्भ कर दिया था। अतः मुख्यरूप से संस्कृत साहित्य में तीन ही कालिदास माने जाते हैं। इस मेघदूत आत्मकथा का लेखक, राजा विक्रमादित्य की सभा के नवरत्नों में ख्याति प्राप्त और हिमालय उत्तराखण्ड गढ़वाल के निवासी महाकवि कालिदास बहुत पहले हो चुका था।

गुप्तकाल में भी एक कालिदास हो चुका है जिसे ए० बी० कीथ और मैक्डानल ने विक्रमादित्य उपाधिधारी का समकालीन कालिदास समझा है।

तीसरा कालिदास राजा भोज के समय में भी हुआ है। तीनों कालिदासों पर वीणापाणि सरस्वती की कृपा तो थी ही। प्राचीन और प्रसिद्ध महाकवि कालिदास पर कुछ विद्वानों ने सभी दोषों का आरोप लगाना न जाने क्यों अच्छा समझा? तीनों की जन्म तिथियां, परिस्थितियां रचनाएँ भी भिन्न-भिन्न हैं।[1] ४० रचनाओं के रचयिता विक्रमादित्य के आश्रित महाकवि कालिदास को माना है जब कि यह सत्य नहीं है। इस आत्मकथा के महाकवि कालिदास की समस्त रचनाओं का संक्षिप्त परिचय हम अपनी प्रसिद्ध पुस्तक कालिदास और उसका मानवीय साहित्य में दे चुके हैं। महाकवि कालिदास के सम्पूर्ण साहित्य का वास्तविक आनन्द लेने के लिए उस पुस्तक को देखें।

महाकवि कालिदास के मुख्य ग्रन्थ इस प्रकार से हैं:—

१. ऋतुसंहार २. कुमारसम्भव ३. मेघदूत ४. रघुवंश ५. विक्रमोर्वशी ६. मालविकाग्निमित्र ७. अभिज्ञान शाकुन्तल।

अपनी रचनाओं को महाकवि कालिदास की ख्याति देखकर अनेक विद्वानों ने अपनी रचनाएँ भी इसी नाम के साथ जोड़ दी है क्योंकि तेजस्वी उगते हुए सूर्य को सभी सम्मान देते हैं या नमस्कार करते हैं और प्रत्येक यशस्वी से सभी अपना सम्बन्ध स्थापित करते हैं। अतः विश्व के ख्याति प्राप्त इस महाकवि से सम्बन्ध जोड़ना किसे बुरा लगेगा?

कलाविद् कालिदास—महाकवि कालिदास चित्रकला में परम निपुण था और अपनी साध्वी प्रेयसी का चित्र बनाकर अपने मन को अर्द्ध मिलन जैसा सुख पाना चाहता है। मन को बहलाने के या मन को लगाने के लिए तस्वीर भी एक माध्यम होती ही है क्योंकि शाप की और प्रवास की स्थिति में साक्षात्कार होना तो कठिन कार्य है किन्तु बेचारा यक्षरूपी कालिदास चित्र बनाकर भी सम्भाषण, समागम

---

१. विस्तृत अध्ययन एवं जानकारी के लिए हमारी कालिदास और उसका मानवीय साहित्य को पृष्ठ १ से ४१ तक देखें।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और सान्निध्य तो प्राप्त कर ही सकता है किन्तु प्रेमाश्रुओं का प्रवाह ऐसा भी नहीं होने देना चाहता है। अतः कवि अपनी व्यथा इस प्रकार कह रहा है :—

'हे प्रिये ! जब मैं गेरू आदि धातुओं के रंगों से पत्थर पर तुम्हारी उस अवस्था का चित्र बनाता हूँ, जिसमें तुम प्रेम में कुपित रहती हो और मैं अपने को तुम्हारे चरणों पर गिरा बनाना चाहता हूँ तो सहसा मेरी दृष्टि बार-बार निर्झरते हुए आंसुओं से ढक जाती है कि निर्दयी दैव उस चित्र में भी हम दोनों के मिलने को नहीं सह सकता है।'[1]

शाप का प्रभाव इतना अधिक प्रभावशाली होता है कि शाप वाले व्यक्ति के समस्त मार्ग उससे अवरुद्ध हो जाते हैं। उस बेचारे को चारों ओर विपत्तियाँ ही विपत्तियाँ देखनी पड़ती है। इसी पूर्व कृत्य कर्म को भाग्य का नाम दिया जाता है। बेचारा यक्षरूपी कवि अपनी प्रेम में कुपित हुई प्रेयसी को मानने के लिए अपने पूरे प्रयास करके उसका चित्र बनाना चाहता है किन्तु विधाता विरोधी होने से विरह के मुसलाधार आँसुओं से शिला पर बना हुआ चित्र भींग कर बह जाता है। यक्षरूपी कवि सभी कलाओं में पूर्ण निष्णात होने से अपनी प्रखर बुद्धि का भी परिचय देता है। यक्ष कामरूप होकर सुखों का भोगी हो सकता है किन्तु ललितकलाओं का पूर्ण ज्ञाता नहीं हो सकता है। महाकवि कालिदास की यह सौन्दर्य युक्त कल्पना नहीं है अपितु अपने जीवन में घटित सच्ची घटना है। कल्पना में एक रूपता, तारतम्य में समानता नहीं रहती है और कथा अपना विस्तृत रूप ले लेती है। मेघदूत में ऐसा कहीं नहीं है। पाठक कवि की व्यथा से सहानुभूति रखता हुआ कथा को तन्मय होकर पढ़ता है। उसे इसमें कहीं भी कल्पना की गन्ध नहीं आती है। अलका पुरी के यक्ष से भी इसका सम्बन्ध है। अतः महाकवि कालिदास अपनी जन्मभूमि से कुछ आगे बढ़कर अलकापुरी के वर्णन में सौन्दर्य वृद्धि के लिए अतिशयोक्ति का भी सहारा ले लेता है।

महाकवि की यह कितनी सुन्दर कल्पना है कि मेरी विरह व्यथा को देखकर दयालु वन देवता भी द्रवित हो जाते हैं और वृक्षों के कोमल पत्तों पर उनके ही मोती जैसे आंसू गिरने लगते हैं। कवि कितनी सुन्दर उपमा देता है :—

'जब स्वप्न में मैं तुम्हें किसी प्रकार देख लेता हूँ तो बहुत बार तुम्हारे जोर से आलिंगन के लिए शून्य आकाश में फैली हुई भुजाओं वाले मुझको देखते हुए

---

१. त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागैः शिलाया
मात्मानं ते चरणपतितं यावदिच्छामि कर्तुम्।
अस्रैस्तावन्मुहुरुपचितैर्दृष्टिरालुप्यते मे
क्रूरस्तस्मिन्नपि न सहते संगमं नौ कृतान्तः॥ उत्तरमेघ ४४ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बनदेवताओं की मोतियों जैसी बड़ी-बड़ी आँसुओं की बुंदें वृक्षों की कोंपलों पर निश्चय ही गिर पड़ती हैं।'[१]

हिमालय के देवदारु वृक्षों की स्मृति कवि के हृदय में बहुत ही अच्छी तरह से बनी है, अपनी जन्मभूमि से शीतल, मधुर और देवदारु के चोब से सुगन्धित हवा को वह यक्षरूपी कवि बड़े ही प्रेम से ग्रहण करता है। यह महाकवि कालिदास का अपनी जन्मभूमि के प्रति प्रेमयुक्त परिचय है क्योंकि वह हवा उसकी प्रेयसी को स्पर्श करके उसके पास आई है ऐसी हवा उसे अन्यत्र कहीं मिल भी नहीं सकती :—

'हे प्रिये! देवदारु वृक्षों की जुड़ी हुई कोंपलों को तत्काल खोलकर उससे निकले हुए दूध जैसे चोब से सुगन्धित जो हिमालय की हवाएँ दक्षिण की ओर बहती हैं, मैं उन्हें यह समझकर आलिंगन करता हूँ कि सम्भवतः ये पहले तुम्हारे अंगों को छू कर यहाँ आ रही होंगी।'[२]

अपनी भार्या और जन्मभूमि के प्रति महाकवि कालिदास को कितना अनन्य रूप में अनुराग तथा स्मृति है। मेघदूत की सम्पूर्ण गाथा महाकवि कालिदास की आत्मकथा से सम्बन्धित है। कवि के मन में अपनी जन्मभूमि की छोटी सी छोटी वस्तु के प्रति भी अधिक आकर्षण, अनुराग एवं उनकी कितनी सच्ची स्मृति है; सामान्य जन इतनी सूक्ष्म दृष्टि से हिमालय के उत्तराखण्ड की भूमि का तथा वहाँ उत्पन्न होने वाली बस्तुओं का सही-सही वर्णन कर सकता है? पूर्वाग्रहियों को इन उद्धरणों में वास्तविकता देखकर महाकवि कालिदास के भावों को समझना चाहिए। विद्वत्ता के प्रदर्शन के लिए अनेक टीकाओं से विद्वान् अनेक अर्थ लगा लेते हैं किन्तु जन्मभूमि के प्रति अनुराग, उस भूभाग का वर्णन वहाँ की बनसम्पदा का सूक्ष्म विवेचन पर बहुत कम लोगों ने ध्यान देने का प्रयास किया है क्योंकि पूर्वाग्रह के भवन की नींव को हिलाना उनकी क्षमता से बाहर की बात है किन्तु, वह सही तथ्यों से एक न एक दिन अवश्य ढह जायेगी। ये सभी तथ्य उस नींव को उखाड़ने में सशक्त हैं।

---

१. मामाकाशप्रणिहितभुजं निर्दयाश्लेषहेतो—
लब्धायास्ते कथमपि मया स्वप्नसंदर्शनेषु।
पश्यन्तीनां न खलु बहुशो न स्थलीदेवतानां
मुक्तास्थूलास्तरुकिसलयेष्वश्रुलेशाः पतन्ति॥ उत्तरमेघ ४५ श्लोक

२. भित्वा सद्यः किसलयपुटान् देवदारुद्रुमाणां
ये तत्क्षीरस्रुतिसुरभयो दक्षिणेन प्रवृत्ताः।
आलिङ्ग्यन्ते गुणवति! मया ते तुषाराद्रिवाताः
पूर्वं स्पृष्टं यदि किल भवेदङ्गमेभिस्तवेति॥ उत्तरमेघ ४६ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कवि स्वतन्त्र परिधि में विचरण कर अपनी कविता की संरचना करता है और अपने सही विचारों का उल्लेख करता है। महाकवि कालिदास ने अलका के यक्ष की ही दारुण दुखमयी गाथा को अपने साथ क्यों जोड़ा ? अलका हिमालय के ही सान्निध्य की सौन्दर्यमयी स्थली है। महाकवि कालिदास की अपनी यौवन कालीन अधिकार प्रमत्त कविता के कारण प्रथम महाकाव्य कुमारसम्भव में हिमालय की केदार घाटी का विस्तृत वर्णन करते हुए शिव-पार्वती के रति सुख का नख-शिख विवेचन ही शाप का कारण बना। यक्ष और महाकवि में अनेक दृष्टियों से अधिक साम्यता है। अतः एकसा कथानक मिलने पर ही कालिदास ने मेघदूत में अपनी सही आत्मकथा और अपनी जन्मभूमि का सही परिचय दिया है। इसे समझना प्रबुद्ध पाठक की क्षमता पर निर्भर करता है।

शिव-पार्वती का शाप महाकवि कालिदास के लिए कितना दारुण दुखदायी सिद्ध हुआ कि एकवर्ष का विरह, दूर देश का प्रवासी जीवन, स्वप्न में भी समागम की प्राप्ति का न होना, कुशल चित्रकार होने पर भी चित्र न बना पाना, राज्याश्रय में रहने पर भी अपनी प्रेयसी के पास किसी प्रकार का भी किसी सेवक के द्वारा समाचार नहीं भेज सकता है। समर्थवान् और शक्तिवान् होने पर भी अस्त हो गया है प्रभाव जिसका, ऐसी पराधीन स्थिति में एकान्त में दारुण दुख को भोग रहा है केवल शाप, ताप और पाप के नष्ट होने के लिए रामगिरि आश्रम में बनवास के समय सीता के स्नान एवं राम के चरण चिन्हों से पवित्र हो गया है स्थान जहाँ का, वहीं यक्षरूपी कालिदास वास कर रहा है।

यक्ष की कथा ब्रह्मवैवर्त पुराण योगिनी एकादशी माहात्म्य में भी आयी है। उसका नाम हेममाली और उसकी सौन्दर्यमयी पत्नी का नाम विशालाक्षी था। जो शाप की अवधि में हिमालय में दो प्रकार की यातना विरह जन्य दुख और कुष्ट रोग को सह रहा है मार्कण्डेय ऋषि की कृपा से विधि बताने पर उसके शाप-पाप-ताप नष्ट हो गये।

महाकवि कालिदास ने अलका के यक्ष को रामगिरि आश्रम में वास कराकर अपनी व्यथा को उससे जोड़कर सही वर्णन कर अपनी सही आत्मकथा वर्णन की है। यह दारुण दुखमयी गाथा प्रवासी, विक्रमादित्य आश्रयी, और तीर्थयात्री महाकवि कालिदास की ही है।

यक्ष और कालिदास

महाकवि कालिदास के युग में और बहुत बाद तक हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल में यक्ष पूजा का अधिक प्रचलन था। गढ़वाल के अनेक ग्रामों में यक्ष को ग्राम देवताभ्मान कर उसकी पूजा भी की जाती थी। यक्ष ग्रामदेव बनकर ग्राम वासियों की विघ्न-बाधाओं को दूरकर उनकी पूर्ण सुरक्षा करता था। महाकवि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कालिदास के ग्राम कविल्ठा में आज भी जाख (यक्षों का घर) एक छोटा सा स्थान है। जिस स्थान पर अब उत्तर प्रदेश सरकार, श्री सत्यपाल महाराज जी एवं महाकवि कालिदास जन्म भू स्मारक समिति द्वारा महाकवि कालिदास का एक भव्य स्मारक बनाया जा रहा है।

यक्ष के ग्राम देवता होने के कारण भी महाकवि कालिदास ने अपने शाप, ताप, पाप और प्रवासी जीवन में सुखपूर्वक समय यापन करने के लिए ही यक्ष को जोड़कर उसके मूल स्थान अलकापुरी का विस्तृत वर्णन किया है। यक्षों से महाकवि कालिदास का किसी न किसी रूप में कुछ न कुछ सम्बन्ध अवश्य रहा है जिसकी स्मृति में मेघदूत में यक्ष को ही मुख्य पात्र बनाया गया है और कालिदास स्वयं अपने जीवन से इस गाथा को जोड़कर गाता है।

अपने जीवन में आने वाले विघ्नों को दूर करने से ही व्यक्ति आस्तिकवादी बनकर प्रकृति से समन्वय रखकर अपने जीवन को एक सन्तुलन में रखता है। रोग, शोक और आपत्तियाँ हमारी किसी न किसी असंतुलित व्यवस्था के ही कारण आती हैं। किसी भी प्रकार की असावधानी, प्रयोग विधि की त्रुटि और आधिक्य से भी विभिन्न प्रकार की आपत्तियां आती हैं, जिन्हें मानव बिना कष्ट झेले नहीं समझ सकता है। महाकवि कालिदास के मन में भी यह शंका हुई हो कि मैं नव-विवाह करके जब अपने ग्राम कपिल्ठा में आया तब मैंने ग्राम देवता यक्ष के प्रति अपनी भक्ति के भाव व्यक्त नहीं किये। अत: अपनी आत्मकथा का वर्ण्य विषय अपने साथ घटने वाली और अलकापुरी के मूल यक्ष के साथ घटने वाली घटना को एक साथ लेकर ही वर्णन किया है। यक्षों को देव योनि में माना जाता है वे अपने देवत्व के गुणों को सहसा छोड़कर मानवीय कृत्यों को नहीं कर सकते हैं।

जो कुछ भी हो किन्तु महाकबि कालिदास का हिमालय अथवा उसके सन्निकट के भूभाग में रहने वाली सिद्ध, यक्ष, किन्नर; विद्याधर आदि जातियों से कोई न कोई सम्बन्ध अवश्य था क्योंकि मेघदूत और कुमारसम्भव महाकाव्य में इनका किसी न किसी रूप में स्मरण अवश्य हुआ है।

मेघदूत का कथानक अलकापुरी का यक्ष है किन्तु आत्मकथा के रूप में यह व्यथा और प्रवासी जीवन की कथा महाकवि कालिदास की ही है।

कालिदास का सामंजस्य युक्त पारिवारिक जीवन—महाकवि कालिदास अपनी पत्नी को सहचरी और अपने को सहचर मानकर मेघदूत में इन शब्दों का प्रयोग भी करता है। अत: अपने सुख-दुख में वह अपनी महाविदुषी पत्नी से परामर्श लेकर ही कार्य करता रहा होगा? महाकवि कालिदास की शब्दावली और ग्रन्थों के आधारों पर भी सिद्ध होता है कि महाविदुषी विद्योत्तमा ने अपनी विद्वत्ता से कालिदास की रचनाओं के सही निर्माण में लिखने अथवा सुधार करने में पूर्ण सहयोग भी दिया है। जैसा कि उत्तरमेघ में कवि जब पारिवारिक सुखों की कल्पना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में उससे परामर्श कर सकता है तो काव्य संरचना में कैसे परामर्श नहीं करता रहा होगा ? इस श्लोक में इसे गम्भीरता से देखें :—

'हे चंचल नेत्रों वाली ! यह दीर्घयामा लम्बे पहरों वाली रात छोटी कैसे की जाए ? और दिन की पूर्वाह्न; मध्याह्न और अपराह्न सब अवस्था में सन्ताप कैसे कम किया जाए ? इस प्रकार कठिन अभिलाषा वाला मेरा मन गम्भीर उष्ण निश्वासों वाली तुम्हारी विरह की वेदना से असहाय हो गया है। (अर्थात् एकाकी पड़ गया है।) अब तुम्हारे परामर्श से मैं तनिक भी लाभान्वित नहीं हो पा रहा हूँ।[1]

इस श्लोक के उद्धरण से यह अच्छी प्रकार से अवगत होता है कि महाविदुषी विद्योत्तमा कालिदास की प्रेरणा और महाकवि बनाने में सहायक ही नहीं रही है अपितु काव्य साधना में अच्छी जीवन संगिनी बनकर पूर्ण सहयोग तथा उचित परामर्श भी देती रही है। महाकवि कालिदास स्वयं विरह, शाप और पाप से दुखी है और उसी प्रकार वह अपनी पत्नी की हृदय की व्यथा को भी जान रहा है। अतः उसे साहस एवं अनेक उदाहरण देकर आशावान् बना रहा है क्योंकि आशा पर ही संसार टिका हुआ है तथा प्रेमीजनों के लिए तो आशा ही सबसे बड़ा सम्बल है और किसी का भी समय एक समान नहीं रहता है। जब सुख के दिन स्थित नहीं रहते तो दुख के दिन भी अवश्य दूर होंगे—

वास्तव में इस प्रकार बहुत चिन्तन करता हुआ मैं भी स्वयं अपने को किसी प्रकार धैर्य से रोका हूँ। हे सुख को देने वाली ! (कल्याणी) इसी प्रकार तुम भी अधिक दुखी न हो क्योंकि सदा समय एक जैसा नहीं रहता है। चक्र के पहिए के समान ऊपर-नीचे वह अपनी धूरी के साथ घूमता रहता है।'[2]

कालिदास को शाप से मुक्त होने का आभास—यक्षरूपी कालिदास अपने मन के सन्ताप दूर करने के अनेक उपाय करता है किन्तु अपना वश न चलने पर अपनी पत्नी को शाप के कुछ ही शेष दिनों को बिताने की बात कहता है। सम्भवतः ब्रह्म वैवर्तपुराण की आषाढ़ माघ की योगिनी एकादशी की कथा को लेकर ही

---

१. संक्षिप्येत क्षण इव कथं दीर्घयामा त्रियामा
सर्वावस्थास्वहरपि कथं मन्दमन्दातपं स्यात्।
इत्थं चेतश्चटुलनयने दुर्लभप्रार्थनं मे
गाढोष्माभिः कृतमशरणं त्वद्वियोगव्यथाभिः॥ उत्तरमेघ ४७ श्लोक

२. नन्वात्मानं बहु विगणयन्नात्मनैवावलम्बे
तत्कल्याणि ! त्वमपि नितरां मा गमः कातरत्वम्।
कस्यात्यन्तं सुखमुपनतं दुःखमेकान्ततो वा
नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण॥ उत्तरमेघ ४८ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कालिदास ने मेघदूत में अपनी व्यथा व्यक्त कर ठीक अपने शाप की अवधि की समाप्ति भी कार्तिक की हरिप्रबोधिनी एकादशी को ही माना है :—

'भगवान् विष्णु के शेष शय्या से उठने पर मेरे इस शाप का अन्त हो जायेगा। अतः इन बचे हुए चार मास को भी तुम आँख बन्द करके धैर्य से व्यतीत कर डालो। इसके पश्चात् तो दोनों मिल जायेंगे और विरहकाल में सोचे हुए अपने सम्पूर्ण मनोरथों का हम दोनों शरदकाल की चाँदनी रातों में पूर्ण उपभोग करेंगे।'[1]

विष्णु भगवान् के विषय में यह प्रसिद्ध उचित है कि विष्णु सदा आषाढ़ के मास में क्षीरसागर में ६ मास के लिए सो जाते हैं और पुनः कार्तिक मास में ही उठते हैं।[2] इसलिए कार्तिमास की एकादशी को हरिप्रबोधिनी या हरिठावनी एकादशी भी कहते हैं। हिमालय के पर्वतीय क्षेत्रों में इस हरिप्रबोधिनी एकादशी का अधिक आदर है। महाकवि कालिदास ने शाप से विमुक्त होने का यही दिन सर्वोत्तम माना है। क्यों?

शपित कालिदास ने अपने साथ भी हेम माली की सी घटना जोड़कर अपने शाप की अवधि आषाढ़ के अन्तिम दिनों की एकादशी से अर्थात् श्रावण से चार मास कार्तिक तक मानकर अपनी पत्नी को शुभसन्देश भेज कर आशा के बल पर चार मास काटने की बात कही है। अपने शाप की अवधि का यक्षरूपी कालिदास को पूरा ज्ञान था क्योंकि अपने ज्योतिष और कर्मकाण्ड के ज्ञान के आधार पर कवि अपना वर्ष, मास, दिन का हिसाब ठीक लगाये हुए था। शाप के दुर्दिन तीर्थयात्रा करने किसी तीर्थ स्थान में निवास करने, साधना में लगे रहने और किसी मन्त्र का विधिवत् जाप करने से भी शाप, ताप, और कुष्ट रोग दूर हो जाते हैं। शाप का पाप दारुण वियोग के संताप के रूप में तो भोगना ही पड़ेगा किन्तु तीर्थ सेवन, नाम का जाप और सिद्ध स्थान में बैठने से उतना भयावह कष्ट नहीं होगा तथा शाप की अवधि शीघ्रता एवं सुगमता से दूर हो जायेगी। इसके साथ ही साथ अन्य कोई अनिष्ट शाप की अवधि में समक्ष नहीं आयेंगे। अन्यथा पति-पत्नी में किसी एक की असह्य दारुण विरह में मृत्यु भी हो सकती है। इसलिए यक्षरूपी कवि कालिदास और यक्षिणी रूपी विद्योत्तमा ईश्वर का नाम लेते हुए शाप जनित ताप को सहन कर रहे हैं।

---

१. शापान्तो मे भुजगशयनादुत्थिते शार्ङ्गपाणौ
शेषान् मासान् गमय चतुरो लोचने मीलयित्वा।
पश्चादावां विरहगुणितं तं तमात्माभिलाषं
निर्वेक्ष्यावः परिणतशरच्चन्द्रिकासु क्षपासु॥ उत्तरमेघ ४९ श्लोक

२. शेते विष्णु सदाषाढ़े कार्तिके च प्रबुध्यते।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation Chandigarh

यक्षरूपी महाकवि ने दूत के रहस्य एवं नारियों के शंकित हृदय की बात भी इस श्लोक में स्पष्ट कर दी है। गोपनीय बातों को तीन ही व्यक्ति जानते हैं— १—पति २—पत्नी और अत्यन्त निकटतम तथा प्रियतम व्यक्ति ही जान सकता है। श्रीराम का सन्देश परमविश्वासी भक्त हनुमान ने राम की अंगूठी के द्वारा दिया क्योंकि मायावी रावण किसी भी प्रकार का छल कर सकता था। यक्षरूपी सकलकलाविज्ञ महाकवि कालिदास ने अपनी आत्मकथा में अपने रति सुख के रहस्यों को विश्वसनीयता की दृष्टि से सच्चे सन्देश वाहक मेघ को बता दिया। इसके साथ ही साथ अपने गुप्तकाशी के विद्योत्तमा का मानमर्दन करने वाले विद्वानों से भी आशंका थी कि कहीं वे पुनः अपने प्रतिशोध के लिए कुछ अन्य षड्यन्त्र न रच दें। अतः उत्तरमेघ के ५१ वें श्लोक में कवि ने वह स्पष्ट कर दिया। महाकवि कालिदास ने अपने इस आत्मकथा वाले मेघदूत गीतिकाव्य में अपने पारिवारिक सुखद जीवन की बड़ी ही दूरदर्शिता, कुशलता एवं विद्वत्ता के साथ अपनी समस्त अनुभूतियों को अभिव्यक्त किया है जो मेघ के द्वारा विश्वास प्राप्ति के लिए कहे गये हैं :—

'पुनः तुम्हारे प्रियतम ने कहा है कि - पहले जब तुम कभी मेरे गले से लगी हुई शय्या पर सोई थी, तब नींद आने पर भी जोर से रोती हुई सी जाग उठी थी। जब मैंने निरन्तर रोने का कारण पूछा तो तुमने मन्दहास करते हुए कहा था कितव=धूर्त ! मैंने तुम्हें स्वप्न में किसी अन्य रमणी से रमण करते देखा है।'[1]

यक्षरूपी कालिदास ने विरह के असह्य दुख में दुखी होकर अपनी पत्नी को अनेक कठोर शब्दों का प्रयोग भी किया है। उसी प्रकार अपने शुद्ध-बुद्ध प्रणय की अभिव्यक्ति करते हुए उसकी पत्नी ने भी उसे धूर्त या झूठा भी कह दिया है। प्रायः असह्य दुखों में मानव या तो ईश्वर या भाग्य को कोसता है या अपने निकटतम और प्रियतम जन के लिए न जाने क्या-क्या कह जाता है। वह अपनी सच्ची व्यथा का उलहना किसे दे ? असह्य दुख की अभिव्यक्ति में ऐसे कठोर शब्द दूरस्थ-प्रियजन के लिए कहे ही जाते हैं एवं आक्रोश व्यक्त किया ही जाता है।

महाकवि कालिदास ने मेघदूत में मेघ को यात्रा पर जाने के पूर्व उसे मार्ग बता कर अपने भौगोलिक ज्ञान का परिचय और मार्ग में उसके मनोरंजन के अनेक साधन बताएँ। मानव के जीवन में भी हंसी-खुशी के लिए जिस प्रकार

---

१. भूयश्चाहं त्वमपि शयने कण्ठलग्ना पुरा मे
निद्रां गत्वा किमपि रुदती सस्वनं विप्रबुद्धा।
सान्तर्हासं कथितमसकृत् पृच्छतश्च त्वया मे
दृष्टः स्वप्ने कितव ! रमयन् कामपि त्वं मयेति ॥ उत्तरमेघ ५० श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

त्योहारों का महत्त्व है। उसी प्रकार पति-पत्नी के पारस्परिक विनोद में भी मनोरंजनात्मक उपालम्ब होता ही रहता है। महाकवि ने अपने काव्य एवं नाटकों में मानवीय मनोवृत्तियों का बड़ी ही सूक्ष्म दृष्टि से विश्लेषण किया है और उसके साहित्य का नाम इसी आधार पर हमने 'कालिदास और उसका मानवीय साहित्य रखा है।[१]

महाकवि कालिदास मानव की मनोवृत्तियों को बहुत ही अच्छी प्रकार से जानता था, तभी उसने अपने अनुभव, दूर होने के कारण, शाप के कारण सुदूर में रहने से और प्रिय जन को सही समाचार न मिलने से मुझ पर लोगों के कहने पर अविश्वास न कर बैठना क्योंकि संसार के कुटिल लोग दो प्रेमियों को सुख से नहीं देखना चाहते हैं :—

'हे काले-काले नेत्रों वाली ! इस ठीक पहचान के चिह्न से तुम मुझे कुशल पूर्वक जानकर लोगों के कहने पर अविश्वास न कर बैठना। लोग कहते हैं कि विरह में स्नेह समाप्त हो जाता है किन्तु यह युक्ति संगत नहीं क्योंकि वह उपभोग न होने के कारण अधिक मात्रा में संचित होता रहता है।'[२]

स्वार्थयुक्त प्रेम दूर रहने से छूट जाता है किन्तु शुद्ध-बुद्ध प्रेम विरह में बढ़ता ही है। विरह प्रेम की सच्ची परीक्षा है। व्यक्ति का सच्चा प्रेम परमानन्द की प्राप्ति में पहुँचा देता है और उसे ईश्वर की प्राप्ति तक हो जाती है। महाकवि कालिदास और कवित्री विद्योत्तमा का विरह शुद्ध पारिवारिक स्नेह में परिवर्तित एवं परिवर्धित हो जाता है। विरह की अवधि एक प्रकार से साधना की अवधि भी होती है जिसे योग भी कहा जा सकता है क्योंकि योग चित्त वृत्ति निरोध, ज्ञान, अभ्यास तथा वैराग्य को देने वाला भी होता है किन्तु भोग तो शोक और रोग का कारण ही होता है।

यक्षरूपी कवि मेघ से शीघ्र अपनी पत्नी का सन्देश भी सुनना चाहता है :— यक्षरूपी कालिदास अपनी पत्नी के पास सन्देश भेजने के पश्चात् मेघ से भी उसकी कुशल क्षेम जानने के लिए तथा कोई पहचान वाली वस्तु को पाने के लिए भी उत्सुक है और शीघ्र कैलास, अलकापुरी और केदारघाटी से मेघ को लौट आने की बात भी कहता है :—

१. महाकवि कालिदास के समस्त साहित्य के परिचय के लिए हमारी कालिदास और उसका मानवीय साहित्य पुस्तक को देखें। पृष्ठ १ से ३८४ तक

२. एतस्मान्मां कुशलिनमभिज्ञानदानाद्विदित्वा
मा कौलीनादसितनयने मय्यविश्वासिनी भूः।
स्नेहानाहुः किमपि विरहे ध्वंसिनस्ते त्वभोगा-
दिष्टे वस्तुन्युपचितरसाः प्रेमराशीभवन्ति ॥ उत्तरमेघ ५१ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'प्रथम वियोग के कारण अत्यधिक दुखी हुई अपनी सखी को इस प्रकार धैर्य धारण कराकर शिव के बैल द्वारा खोदे हुए शिखरों वाले कैलास पर्वत से शीघ्र ही लौटकर तू पहिचान का चिह्न सहित उसके कुशल समाचार-भरे वचनों द्वारा प्रातः काल के खिले हुए सफेद गुलाब के फूल के समान शोभाहीन हुए मेरे जीवन को भी सहारा देना।[१]

केदारघाटी में स्वयं उत्पन्न हुए सफेद गुलाब जैसे कुन्द फूल प्रातः काल तो अपनी अत्यधिक शोभ देते हैं किन्तु दोपहर में वे पंखुड़ियों को छोड़कर केवल डंठल युक्त शोभाहीन हो जाते हैं।

यक्षरूपी कालिदास मेघ को यात्रा करने का मार्ग और उसके पश्चात् पूरा सन्देश सुनाकर उससे प्रत्युत्तर की भी कामना करता है क्योंकि कुछ लोग तो काम करके ही दिखाते हैं, उत्तर नहीं देते मेघ भी स्वभावतः ऐसा ही करता है और शान्त भाव से पूर्ववत वहाँ वैसा ही खड़ा है :—

'हे सौम्य! तुमने अपने मित्र का कार्य करने का निश्चय कर लिया है क्या? उसे पूरा न कर सकने के कारण तुम शान्त खड़े हो ऐसी कल्पना मैं नहीं करता। तुम चातकों की प्रार्थना करने पर हां कहे बिना ही उन्हें जल दे दिया करते हो क्योंकि सज्जनों का याचकों के प्रति उनकी अभिलषित वस्तु की पूर्ति करके दिखाना ही उत्तर होता है।'[२]

कृतज्ञ यक्ष रूपी कवि अपनी कृतज्ञता और उपकार करने की शुभ कामनाएँ कितनी बुद्धिमत्ता से देता है। वह स्वयं प्रिया के विरह में दुखी है किन्तु वह मेघ के साथ ऐसा नहीं चाहता है :—

हे जलद! मित्रता के कारण अथवा मैं अपनी प्रिया से बिछड़ा हुआ हूँ, इसलिए मुझ पर दया के भाव से अनुचित प्रार्थना करने वाले मेरे इस प्रिय कार्य को करके, वर्षाकाल से बढ़ी हुई शोभा से तुम अपनी इच्छा के अनुरूप देशों

---

२. आश्वास्यैवं प्रथम विरहो दग्रशोकां सखीं ते
शैलादाशु त्रिनयनवृषोत्खातकूटान्निवृत्तः।
साभिज्ञानप्रहितकुशलैस्तद्वचोभिर्ममापि
प्रातः कुन्दप्रसवशिथिलं जीवितं धारयेथाः॥ उत्तरमेघ ५२ श्लोक

१. कच्चित्सौम्य! व्यवसितमिदं बन्धुकृत्यं त्वया मे
प्रत्यादेशान्न खलु भवतो धीरतां कल्पयामि।
निःशब्दोऽपि प्रदिशसि जलं याचितश्चातकेभ्यः
प्रत्युक्तं हि प्रणयिषु सतामीप्सितार्थक्रियैव॥ उत्तरमेघ ५३ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में विचरण करो और तुम्हारा इस प्रकार एक पल भी अपनी प्रियतमा बिजली से वियोग न हो ।'[१]

दुखी, कृतज्ञ और सच्चा व्यक्ति अपने उपकारी को सदा हृदय से ऐसी ही शुभ कामनायें देता है जिससे उसके समान दुख उसे कभी न भोगने पड़ें। वह जीवन में अपनी जीवन संगिनी के साथ सदा सुखी रहे। जीवन साथी का स्वस्थ होना एवं जीवन में अन्तिम समय तक कष्टों में साथ देना ही सुखी जीवन का कारण है। मानव के ज़ीवन में जीवन साथी का वियोग सबसे बड़ा दुख है। इसे यक्ष-रूपी महाकवि कालिदास अच्छी प्रकार से जानता है, तभी उसने मेघ को एक पल भी पत्नी का वियोग न होने की शुभकामनाएँ व्यक्त की हैं।

महाकवि कालिदास ने रघुवंश में मानवीय जीवन में जीवन संगिनी का महत्त्व राजा अज के प्रसंग में इन्दुमति की मृत्यु पर दिखाया है :—तुम मेरी पत्नी थी, सम्मति को देने वाली मित्र थी एकान्त की सखी एवं गान विद्या आदि ललित कलाओं में शिष्या थी। तुम्हीं बताओ तुम्हें मुझसे छीनकर निर्दयी विधाता ने मेरा क्या नहीं छीन लिया।'[२]

महाकवि कालिदास द्वारा रचित उत्तरमेघदूत को कुछ विद्वान् ५४ श्लोक तक ही मानते है और कुछ विद्वानों ने अपनी पुस्तकों तथा कालिदास ग्रन्था-वलियों में इन पाँच निम्नलिखित श्लोकों को भी माना है। वैसे इन्हें प्रक्षिप्त इस आधार पर माना जाता है कि पूर्ववर्णित श्लोकों में ही इनका भाव मिल जाता है। केवल अन्तिम श्लोक में महाकवि कालिदास की अपनी सिद्धियात्री काली के प्रति भक्ति भावना अभिव्यक्ति अवश्य होती है।

कुछ विद्वानों ने महाकवि कालिदास के भावों को इन पाँच श्लोकों में अलका में पहुँचने पर विस्तृत रूप दिखाने का प्रयास किया है।

महाकवि कालिदास के बताए हुए मार्ग से मेघ पहाड़ों, नदियों तथा नगरों में ठहर-ठहर कर अलकापुरी पहुँच गया और पूर्व वर्णित चिह्नों से स्वर्ग के समान

---

१. एतत्कृत्वा प्रियमनुचितप्रार्थनावर्तिनो मे
सौहार्दाद्वा विधुर इति वा मय्यनुक्रोशबुद्धया।
इष्टान्देशान्विचरजलद ! प्रावृषा संभृतश्रीः
मा भूदेवं क्षणमपि च ते विद्युता विप्रयोगः ॥ उत्तमेघ ५४ श्लोक

२. गृहिणी सचिवः सखीमिथः प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ।
करुणाविमुखेन मृत्युना हरता त्वां वद किं न मे हृतम् ॥
रघुवंश ८ सर्ग ६९ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चमचमाते भवन को पहचान कर उसमें भूमि पर लेटी हुई यक्ष की पत्नी को देखा।'[१]

उसके पश्चात् इच्छा के अनुरूप रूप धारण करने वाले मेघ ने सन्देश को कहने के लिए शीघ्र ही पर्वत से उतर कर वर्णित बताए हुए चिह्नों से सर्वथा मन्द पड़े हुए शोभा वाले यक्ष के भवन को पहिचान कर उसकी पत्नी को स्नेह से परिपूर्ण सभी समाचार सुना दिया।'[२]

भले व्यक्तियों से की गई प्रार्थना या याचना कभी भी व्यर्थ नहीं जाता है। मेघ की प्रशंसा में पूर्वमेघ के छठे श्लोक में यह स्पष्ट हो चुका है—'याश्चा मोघा वरमधिगुणे नाधमे लब्ध कामा।' अतः इस प्रकार की पुनरावृत्ति के कारण ही इन श्लोकों को प्रक्षिप्त ही माना है।

'दूसरों के उपकार में लगे हुए मेघ ने यक्ष की पत्नी के प्राणों को बचाने के लिए दिव्य वाणी द्वारा वह सन्देश उसको सुनाना। वह भी अपने प्रिय का समाचार सुनकर हृदय से प्रसन्न हुई। अच्छे व्यक्तियों से की गई प्रार्थना सदा मनवांछित फल देने वाली होती है।'[३]

यह श्लोक अपना कुछ विशेष महत्त्व रखता है और साधक की सच्ची साधना से शाप देने वाला देव भी स्वतः ही उसकी सच्ची निष्ठा को देखकर द्रवीभूत हो जाता है :—

'मेघ के द्वारा दिये गये हृदय को द्रवीभूत करनेवाले सन्देश को सुनकर कुपित हुए कुबेर ने भी शाप की अवधि को समाप्त कर हृदय से प्रसन्न होकर इन दोनों

---

१. इत्याख्याते सुरपतिसखः शैलकुल्यापुरीषु
स्थित्वा स्थित्वा धनपतिपुरीं वासरैः कैश्चिदाप।
मत्वाऽगारं कनकरुचिरं लक्षणैः पूर्वमुक्तै—
स्तस्योत्सङ्गं क्षितितलगतां तां च दीना ददर्श॥ उत्तरमेघ ५५ श्लोक

२. तस्मादद्रेर्निगदितुमथो शीघ्रमेत्यालकायां
यक्षागारं निगलितनिभं दृष्टचिह्नैर्विदित्वा।
यत्संदिष्टं प्रणयमधुरं गुह्यकेन प्रयत्नात्
तद्गेहिन्याः सकलमवदत् कामरूपी पयोदः॥ उत्तरमेघ ५६ श्लोक

३. तं सन्देशं जलधरवरो दिव्यवाचाचचक्षे
प्राणांस्तस्या जनहितरतो रक्षितुं यक्षवध्वाः।
प्राप्योदन्तं प्रमुदितमनाः साऽपि तस्थौ स्वभर्तुः
केषां न स्यादभिमतफला प्रार्थना ह्युत्तमेषु॥ उत्तरमेघ ५८ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पति-पत्नी का समागम कराकर निरन्तर ऐसा आनन्द दिलवाया जिससे उन्हें सदा सुख ही सुख मिलता रहा।'[1]

महाकवि कालिदास की जन्मभूमि तो केदारखण्ड में ही है और उसकी आराध्य काली देवी गुप्तकाशी और उसके गांव कविल्ठा के मध्य में सिद्धपीठ कालीमठ में है। उसके प्रति भी महाकवि कालिदास ने दुख की निवृत्ति के पश्चात् सच्ची कृतज्ञता यापन की है और वियोगी लोगों को एक सम्बल प्रदान किया है :—

कालिदास ने मेघदूत में अपनी सही गाथा गाई है

'कालिदास ने आर्या काली के चरण-कमलों को प्रणाम करके सुन्दर रचे हुए पदों वाला मेघदूत नाम का इस तरह का काव्य बनाया, जिसमें विरही जनों के लिए वियोगावस्था में मनोरंजन, मेघ का चातुर्य और कवियों की बुद्धि चमत्कार के भी भाव हैं।'[2] इस श्लोक को विद्वानों ने प्रक्षिप्त ही क्यों न माना हो किन्तु सचमुच इसके द्वारा महाकवि कालिदास को मेघदूत काव्य का रचयिता, काली की साधना के द्वारा मेघदूत जैसे विरही जनों को सुख देने वाले गीति काव्य की रचना और उसकी विद्वत्ता का चमत्कार परिलक्षित होता है। काली की आराधना, प्रकृति के स्वाभाविक वैभव को देखने, शिव एवं शक्ति की भक्ति तथा उनके शाप से ही विरह जन्य दुख की अनुभूति, उज्जयिनी के गुणग्राही राजा विक्रमादित्य का राज्याश्रम पाना, रामगिरि आश्रम की पवित्रता से शाप निवृत्ति होना और मेघ के दर्शन से अपनी प्रेयसी को मिलने की कामना ने ही मेघदूत गीतिकाव्य की रचना कर विद्वत् समाज को अपने विचित्र वाग्विदग्धता को दिखाकर अपनी सच्ची आत्मकथा लिखी है।

मेघदूत महाकवि कालिदास की आपबीती और जगबीती दारुण दुखमयी व्यथा है जो कि उसकी सच्ची आत्मकथा एवं उसकी अपनी जन्मभूमि के प्रति सच्ची स्नेहमयी अनुभूति है। केदारघाटी एवं अलकापुरी का यक्षरूपी कालिदास शाप ग्रसित होने पर अपने भौगोलिक ज्ञान, पत्नी वियोग की व्यथा, शाप निवृति का उपाय, विद्वत्ता के बल पर विक्रमादित्य के नवरत्नों में सर्वोच्च स्थान पाना और

---

१. श्रुत्वा वार्तां जलदकथितां तां धनेशोऽपि सद्यः
शापस्यान्तं सदयहृदयः संविधायास्तकोपः।
संयोज्यैतौ विगलितशुचौ दम्पती हृष्टचित्तौ
भोगानिष्टानविरतसुखं भोजयामास शश्वत्॥ उत्तरमेघ ५९ श्लोक

२. इत्थंभूतं सुरचितपदं मेघदूताभिधानं
कामक्रीडाविरहितजने विप्रयोगे विनोदः।
मेघस्यास्मिन्नतिनिपुणता बुद्धिभावः कवीनां
नत्वाऽऽर्यायाश्चरणकमलं कालिदासश्चकार॥ उत्तरमेघ ६० श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपनी जन्मभूमि की मधुर स्मृति में उसका सही परिचय देना ही मेघदूत के द्वारा कवि के हृदय की यही इच्छा एवं मुख्य उद्देश्य रहा है।

मेघ की प्रशंसा, वंशपरिचय, उसका स्वागत एवं अभिवादन करते हुए, उसके कामरूप का महत्त्व बताने में महाकवि कालिदास ने अपनी कवित्व शक्ति का विशेष चमत्कार दिखाया है। सन्देश देने और जन्मभूमि में जाने के मार्ग बताने में अत्यन्त ही विनोदात्मक भाषा में शिष्टाचार का परिचय दिया है। पुनः जिस जन्मभूमि के अंक में बैठकर बाल्यकाल से महाकवि कालिदास ने प्रकृति के साक्षात् दर्शन किये हैं, शारीरिक, बौद्धिक, नैतिक, धार्मिक और आध्यात्मिक बल प्राप्त किया है, जगज्जननी काली की साधना से बुद्धि का वैभव पाया, विद्योत्तमा जैसी—महा विदुषी से सच्ची प्रेरणा मिली और जिस हिमालय की केदार घाटी में जन्म पाने का सौभाग्य पाया अपने जीवन निर्माण के इतने उपकारों को महाकवि कालिदास जैसा महान् कृतज्ञ व्यक्ति कभी भूल सकता था? कभी भी नहीं, अतः उसने सर्व-प्रथम निकट के पर्यावरण और प्राकृतिक सम्पदा का, कैलास, हिमालय का, शिव-पार्वती का आंखों देखा वर्णन प्रथम काव्य कुमारसम्भव में किया है, शपित, व्यथित, प्रवासित, रामगिरि में मेघको देखकर जन्मभूमि के प्रति उत्कण्ठित; मध्यप्रदेश के भू-भाग का बहुवर्णितरूप, उज्जयिनी में बहुचर्चित महाकवि कालिदास ने मेघदूत के द्वारा अपनी बाल्यकाल की तो नहीं किन्तु अपने यौवन काल का यक्ष के रूप में सही आत्मकथा वर्णन की है।

अनेक प्रबुद्ध विद्वान् लेखक अब यह स्वीकार करने लगे हैं कि वास्तव में मेघदूत महाकवि कालिदास की ही सच्ची आत्मकथा है। शिव-पार्वती का वरदान महाकवि की कविता प्रकाशन में सहायक हुआ और शाप सच्चे पारिवारिक जीवन को निखारने, जन्म भूमिका परिचय देने में, मध्य प्रदेश के प्राकृतिक वैभव को देखने मे, उज्जयिनी का यशोगान करने में और राज्याश्रय दिलाने में सहायक हुआ है। महाकवि कालिदास की सच्ची साधना ने शाप, ताप, पापमुक्त कर विश्व-विख्यात कवि बनाया और शुद्ध-बुद्ध कामना ने हरि प्रबोधिनी एकादशी को विरही जीवन दूर कर ऐसा परम सुखी जीवन दिया।

मेघदूत पर टीका करने वाले विद्वानों ने उत्तरमेघ के चार-पाँच श्लोकों को प्रक्षिप्त माना है किन्तु कवि के भावों में साम्यता रखने वाले विद्वानों ने उन श्लोकों द्वारा भी कवि के भावों को स्पष्ट किया है। महाकवि कालिदास के हृदय के भावों को और अधिक स्पष्ट करने के लिए विद्वानों ने इन श्लोकों को भी इसी में गिना है। महाकवि कालिदास ने अपने जीवन से सम्बन्धित शाप से पीड़ित व्यथा को यक्ष से जोड़कर एक पौराणिक कथानक लेकर अपनी विद्वत्ता से अत्यन्त ही प्रवाह-पूर्ण पद्धति पर दो वियोगी जनों की कारुणिक गाथा को अपनी कविता के द्वारा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मन्दाक्रान्ता छन्द में गाया है। महाकवि कालिदास की यह विदग्धता है कि उसने एक निर्जीव चेतना शून्य मेघ को चेतना देकर हिमालय की दुर्गम चोटियों में दूत बनाने योग्य चुना। कालिदास ने अपने पाण्डित्य से दूत को सन्देश के लिए सही मार्ग निर्देश किया, सही सन्देश दिया, अपनी जन्मभूमि का अपनी आत्मकथा के द्वारा सही परिचय दिया, अपने आवास के द्वारा अपनी सामाजिक स्थिति दिखाई और जिस प्रेयसी के लिए 'वह दारुण दुख भोग रहा था एवं पाठक जिसके स्वरूप को देखने के लिए उत्कण्ठित थे उसे भी अनेक श्लोकों में दिखाकर उसके नख-शिख का सूक्ष्म वर्णन करके स्वयं प्रसन्न हो गया और पाठकों की उत्सुकता को भी बड़ी ही कुशलता से शान्त कर दिया।

महाकवि कालिदास ने पूर्वमेघ के पाँचवें श्लोक में बड़ी ही बुद्धिमत्ता से पहले ही अपने काव्य रसिकों को समझा दिया कि—धूम; ज्योति, सलिल और वायु के सम्मिश्रण से बना हुआ मेघ क्या जीवनधारी दूत के समान सन्देश को पहुँचा सकता है? किन्तु यह सरस्वती के साधक महाकवि कालिदास की दूरदर्शिता और प्रखर बुद्धि का प्रमाण है कि सब कुछ जानने पर भी पर्वतीय पर्यावरण के अनुरूप दुर्गम घाटियों में जाने के लिए मेघ को ही सर्वोत्तम माध्यम बनाया है। मानसरोवर जाने वाले हंस से भी यह कार्य लिया जा सकता था किन्तु दूर की यात्रा, हिमाच्छादित भूभाग में पक्षी को उतने मार्ग, स्थान, कार्य एवं मनोरंजन की बातें नहीं बताई जा सकती थी तथा काव्य का कथानक इतना विस्तृत वर्णनात्मक नहीं हो सकता था। यह उपक्रम पर्वतीय भूभाग से वर्षा काल के प्रारम्भ होते ही और उससे भी दूर तक दुर्गम हिमाच्छादित भूभाग में भेजने के लिए कवि ने अपनी प्रत्युत्पन्न मति का विद्वत्ता पूर्ण परिचय दिया है। यदि महाकवि कालिदास में मेघ में प्राण प्रतिष्ठा करके सजीव करने की शक्ति होती तो मेघदूत गीतिकाव्य की काव्य रचना का फिर कहना ही क्या था। जब इस रूप में उसका इतना चमत्कार है पुनः रामायण महाकाव्य के पवन पुत्र की तरह यह भी न जाने क्या और चमत्कार लाता।

अन्तिम समय तक मेघ उसी रूप में वहीं रामगिरि पर्वत पर स्थित होकर सब सुन रहा है, महाकवि कालिदास का सन्देश समाप्त हो जाता है और प्रत्युत्तर के रूप में पत्नी का समाचार एवं कोई चिह्न चाहता है कि सच्चे हृदय की सच्ची व्यथा शाप देने वाले के कानों में पड़ जाती है। महाकवि कालिदास जगज्जननी के शाप से मुक्त हो जाता है। महाकवि के सभी ओर के अवरुद्ध द्वार खुल जाते हैं। वियोग श्रृंगार संयोग श्रृंगार में परिणित हो जाता है। महाकवि कालिदास ससम्मान अपनी कर्मभूमि उज्जयिनी से अपनी जन्मभूमि हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल के लिए प्रस्थान कर देता है। महाकवि ने अपने हृदय की सभी बातें, संस्मरण, अनुभव कर्मभूमि का वर्णन जन्मभूमि का परिचय और अपने जीवन की सच्ची दारुण दुखमयी गाथा पाठकों के समक्ष रखी है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'कालिदास की आत्मकथा और मेघदूत' के इस समीक्षात्मक अध्ययन से गुणग्राही एवं प्रबुद्ध पाठक सही निष्कर्ष पर अवश्य पहुँचेंगे। शताब्दियों से उलझे हुए विवादों, भ्रमात्मक धारणाओं निराधार शंकाओं, किंवदन्तियों, जनश्रुतियों और कल्पनाओं को दूर करने का हमने एक व्यवस्थित प्रयास किया है। इससे जिज्ञासु अन्वेषण कर्ताओं को प्रसन्नता अवश्य होगी एवं दूसरों के संकेतों पर चलने वाले पूर्वाग्रहियों को कुछ बुरा भी लगेगा ही किन्तु सभी को प्रसन्न समझाना, करना एवं मनाना कठिन कार्य है।

यही केदारखण्ड का कविल्ठा ग्राम है तेरा जन्मस्थान।
तभी उत्तरमेघ में दिया तुमने उसे विशेष स्थान।।
कालिदास की आत्मकथा से विद्वज्जन होंगे ही प्रसन्न।
पर दोष दर्शक पढ़ते ही द्वेष से होंगे अप्रसन्न।।
तेरे हो सत्साहित्य ने दी है यह गुण ग्राही दृष्टि हमें।
तभी ये श्रद्धासुमन अर्पण कर रहे हैं हम तुमें।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चतुर्थ अध्याय

महाकवि कालिदास के विषय में गढ़वाल के विद्वानों के विचार

महाकवि कालिदास की जन्मभूमि और साधनास्थली के विषय में गढ़वाल के सभी विद्वान् लेखकों ने एक मत होकर उसे हिमालय के उत्तराखंड गढ़वाल के केदार क्षेत्र का ही प्रमाणित किया है। इसके साथ ही साक्ष्यों के आधार पर उसका ग्राम कविल्ठा ही सिद्ध किया है। उन्हीं विद्वानों ने अपनी तथ्यपूर्ण युक्तियों के द्वारा उसे केदारनाथ के निकट, गुप्तकाशी और कालीमठ सिद्धपीठ का सही निवासी माना है। महाकवि कालिदास की अनेक कहानियाँ उत्तराखण्ड की परम्पराओं के साथ भी जुड़ी हुई है क्योंकि वह इस धार्मिक तपोभूमि में ही उत्पन्न हुआ था और जीवन का अन्तिम समय उसने अपनी पत्नी के साथ यहीं व्यतीत किया था; उसकी अमर रचनाओं में गढ़वाल के सभी रीति-रिवाज और धार्मिक भाव दिखाई देते हैं। जिनको कुमारसम्भव में शिव-पार्वती के विवाह वर्णन में दिखाया गया है।

कई विद्वानों ने तो सबल प्रमाणों से काश्मीर, उज्जैन, बंगाल और मिथिला की भ्रमात्मक धारणाओं का खण्डन किया है। उसके लिए विस्तृत रूप में हमारी 'कालिदास और उसका मानवीय साहित्य' नाम की पुस्तक में पृष्ठ १ से ४८ तक देखें।

इसके साथ ही गढ़वाल के कालिदास पर लिखने वाले हमको छोड़कर शेष सभी लेखकों ने रघुवंश महाकाव्य के प्रथम सर्ग के प्रथम श्लोक में वर्णित 'जगतः पितरौ वन्दे पार्वती परमेश्वरौ' में पार्वती परमेश्वर से महाकवि कालिदास के माता-पिता का सम्बन्ध जोड़ा है। जबकि यहाँ शिव-शक्ति के एक रूप पार्वती-परमेश्वर को जगत् का माता-पिता माना है। उनकी यह धारणा है कि पार्वती और परमेश्वर गढ़वाल में ऐसे नाम अधिक देखे जाते हैं किन्तु वे गुप्तकाशी के राजा शारदानन्द का नाम भी इस परम्परा में नहीं देख पाये। गढ़वाल में ही विश्वम्भर होने के कारण उन्हें विस्तृत रूप में भी पार्वती-परमेश्वर माना गया है। यदि ये नाम कालिदास के माता-पिता के होते तो यहाँ 'जगतःपितरौ' जगत् के माता पिता शब्द प्रयुक्त न होता। महाकवि कालिदास के पास शब्द भण्डार की और लेखन शैली की कमी नहीं थी। यह तो मेघदूत के निचुल और दिङ्नाग शब्द को व्यक्ति विशेष वाचक मानने के समान हो जायेगा। महाकवि कालिदास का अपने माता-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पिता की ओर इस प्रकार के कोई संकेतात्मक भाव ही नहीं है। वे तो अपनी जन्मभूमि में आने वाले मध्य प्रदेश के यात्रा वर्णन में प्रयुक्त होने वाले शब्दों के समान हो गया है। यह भ्रम और अपने से पूर्व लेखक के भावों को पूर्वाग्रह से जोड़ना मात्र है। कालिदास के ऐसे विचार इस श्लोक में नहीं दिखते हैं। इस श्लोक के प्रथम पद्य के साथ इसका सम्बन्ध जोड़कर ही सही प्रतिती होती है।

गढ़वाल के ही कुछ लेखकों ने कालिदास के शाप को लांछन मानकर उस पर सामाजिक दृष्टि से किसी वादी जाति की कन्या के प्रणय को जोड़ा है। गढ़वाल में वादी जाति नाच और गीत गाकर कलंकित लोगों के गीत सुनाकर अपनी आजीविका चलाती है। जबकि मेघदूत के प्रथम श्लोक में ही यक्ष रूपी कालिदास स्वयं कह रहा है—'शापेनास्तंगमितमहिमा वर्षभोग्येण भर्तुः।' उत्तर मेघ के ५० श्लोक में पुनः शाप का स्मरण दिलाता है—'शापान्तो मे भुजगशयनादुत्थिते शार्ङ्गपाणौ' कालिदास की आत्मकथा मेघदूत के उद्धरणों से शाप शब्द स्पष्ट हो जाता है। लांछन में समय की सीमा नहीं होती है किन्तु इस शाप में एक वर्ष की एक सीमा भी है।

सभी कालिदास साहित्य के मर्मज्ञों ने कालिदास की पत्नी महाविदुषी विद्योत्तमा को ही माना है किन्तु गढ़वाल के लेखकों ने कालिदास की पत्नी का नाम उदयिनी और रेवती माना है। जो युक्ति संगत और उचित नहीं दिखता है।

कुमारसम्भव में विवाहादि संस्कारों, सामाजिक रीति-रिवाजों एवं प्रथाओं को प्रमाण मानकर पर्वतीय भूभाग की सामाजिक व्यवस्थाओं को तो ऐसे लोगों ने देखा है किन्तु मेघदूत आत्मकथा में वर्णित बातों पर तनिक भी ध्यान न देकर उस महाकवि पर चारित्रित लांछन उचित नहीं लगाया है, वह संस्कारी बालक कभी भी ऐसा कार्य नहीं कर सकता था। राजदरबारों में राजकुमारियों और देवदासियों को देखकर कहीं भी वह महाकवि विचलित नहीं होता है।[1] मेघदूत में उसने अपने एक पत्नीव्रत का अच्छा प्रमाण दिया है। वह अनन्यमन से अपनी पतिव्रता पत्नी का ही ध्यान करता है और एकमात्र उसी के विषय में सदा चिन्तित रहता है। कहीं भी उसे विचलित होते नहीं देखा गया है। मेघदूत में महाकवि कालिदास के वैवाहिक जीवन के बाद के जीवन का विशद वर्णन मिलता है। वह लांछन के कारण उत्तराखण्ड गढ़वाल से नहीं गया था अपितु शाप के कारण ही एक वर्ष के लिए प्रवासी बना था, तीर्थों का वास करने वाला बना था और अपनी उपार्जित विद्या का लाभ लेने के लिए उज्जयिनी गया था।

लांछन वाला व्यक्ति मेघदूत में वैवाहिक जीवन में कैसे दिखाया गया है? वह

---

१. इस पर विशेष अध्ययन के लिए हमारी 'कालिदास और उसका मानवीय साहित्य' पुस्तक देखें।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तो मेघ द्वारा अपनी पत्नी के पास अपने जीवित होने के सन्देश को भेज रहा है। उसकी पत्नी के अतिरिक्त उसके परिवार में सेविकाओं और सहेलियों के अतिरिक्त कोई नहीं है। जैसा कालिदास के प्रारम्भिक जीवन में दिखाया गया है क्योंकि माता-पिता तो उसके पहले ही स्वर्ग सिधार गये थे। सेविकाएँ, सहेलियां तथा सुन्दर आवास उसे राजा शारदानन्द श्वसुर के द्वारा विवाह के पश्चात् प्राप्त हुए थे। इस प्रकार गढ़देशी विद्वानों का लांछन लगाना, कल्पना भ्रम मात्र प्रतीत होता है।

कालिदास पर उत्तराखण्ड गढ़वाल की परम्पराओं का प्रभाव

महाकवियों के जीवन पर उनके युग की स्वस्थ और अच्छी परम्पराओं का भी बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा है। वे परम्पराएँ भी उसके साहित्य में उसका सही परिचय देने में परम सहायक सिद्ध होती है। शिव के विवाह में यह अच्छी प्रकार से देखा जाता है कि पार्वती को विवाह के निमित्त मांगने के लिए शिव की ओर से अरुन्धती और सप्तर्षि हिमालय के पास जाते हैं :—

'तुम शिवजी से अपनी पुत्री का वैसे ही अटूट सम्बन्ध करदो जैसे वाणी का अर्थ से हो गया है क्यों कि अच्छे पति से कन्या का विवाह हो जाये तो माता-पिता की चिन्ता मिट जाती है। तुम यह समझ लो कि महादेव संसार के पिता है। अतः पार्वती भी संसार से चर-अचर प्राणियों की माता बन जायेगी।'[1]

उत्तराखण्ड गढ़वाल मे आज भी परिवर्तित युग में वर पक्ष के ही लोग मंगनी मांगन अर्थात् वाग्दान करने कन्या के यहाँ ही जाते हैं। उत्तराखण्ड की इस परम्परा का प्रभाव कालिदास पर कैसे पड़ गया ? इस प्रकार के उद्धरणों से स्पष्ट होता है कि वह हिमालय के उत्तराखण्ड गढ़वाल का ही निवासी था। दूसरे व्यक्ति को हिमालय के विषय में इतना विस्तृत अध्ययन कैसे हो सकता है और गढ़वाल की परम्पराओं से वह इतने सूक्ष्म में कैसे परिचित हो सकता है ?[2]

विवाह संस्कार का क्रम तो भारतीय संस्थाओं के अनुरूप समस्त भारतवर्ष में एक ही पद्धति पर है किन्तु मंगल स्नान वर-वधू का एक ही निर्धारित तथा लिखित

---

१. तमर्थमिव भारत्या सुतया योक्तुमर्हसि।
अशोच्या हि पितुः कन्या सद्भर्तृप्रतिपादिता॥
यावन्त्येतानि भूतानि स्थावराणि चराणि च।
मातरं कल्पयन्त्वेनामीशो हि जगतः पिता॥

कुमारसम्भव ६ सर्ग ७९-८० श्लोक

२. विस्तृत अध्ययन के लिए हमारी पुस्तक कालिदास और उसका मानवीय साहित्य में परम्पराओं का पोषक कालिदास पृ० २४७-२६६ तक देखें

३. वैवाहिकी तिथि पृष्टा तत्क्षणं हरबन्धुन कुमारसम्भव ६ सर्ग ९३ श्लोक

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मुहूर्त पर होता है जिसे वर पक्ष ही निश्चित करके भेजता है।[3] कुमारसम्भव में पार्वती के विवाह में जो पद्धति अपनाई गई है वह उत्तराखण्ड के गढ़वाल मण्डल में आज भी इस परिवर्तित परिवेश में देखी जा सकती है। मंगल स्नान वर-वधू को पुत्रवती एवं सौभाग्यवती स्त्रियां ही कराती हैं। गढ़वाल में आज भी यह प्रथा वैसी ही बनी हुई है :—

मैत्रेमुहूर्ते शशलांछनेन योगगतासूत्तर फाल्गुनीषु।
तस्याशरीरे प्रतिकर्मचक्रुर्बन्धु स्त्रियो पतिपुत्रन्नत ॥[1]
सा मंगलस्नानविशुद्धगात्री गृहीत पत्युद्गमनीयवस्त्रा।
निवृत्तपर्जन्यजलाभिषेका प्रफुल्लकाशा वसुधेव रेजे ॥

महाकवि कालिदास के कुमारसम्भव के अध्ययन से अच्छी प्रकार विदित होता है कि महाकवि कालिदास को कर्मकाण्ड और ज्योतिष का पूर्ण ज्ञान था। उत्तराखण्ड गढ़वाल मण्डल में आज भी हजारों लोग कर्मकाण्ड और ज्योतिष के पारगंत विद्वान् है। ज्योतिष यहाँ की पुरानी पीढ़ी के लोगों में अधिक प्रचलित था। ज्योतिष इष्ट के बल पर भी अधिक सफल देखा गया है। विवाह संस्कार में मंगलगीतों का जो वर्णन हुआ है वह उत्तराखण्ड गढ़वाल के भूभाग में आज भी अधिक दिखता है। कुमारसम्भव का समस्त भौगोलिक वर्णन उत्तराखण्ड के केदार भूभाग का ही है। पर्वत शृंखलाओं, घाटियों, नदियों में मन्दाकिनी का सबसे अधिक वर्णन कुमारसम्भव और मेघदूत में देखा जाता है क्यों यह मन्दाकिनी उत्तराखण्ड की महाकवि कालिदास के केदार की घाटियों में प्रवाहित होने वाली ही मन्दाकिनी है। सभी लोग तो उसे गंगा के स्वरूपक में ही जानते हैं किन्तु उत्तराखण्ड गढ़वाल का सच्चा निवासी हिमालय के गन्धमादक पर्वत से निकलने वाली सभी नदियों के नाम से कालिदास अच्छी प्रकार से परिचित है। क्यों कि दूसरे बाहर के व्यक्ति इतनी सूक्ष्म दृष्टि से न देखते ही हैं और न चिन्तन ही कर सकते हैं।

उत्तराखण्ड गढ़वाल में विवाहों में आज भी जो गीत गाये जाते हैं उनमें वर-वधू को शिव-पार्वती के समान समझकर गीत गाये जाते हैं। इसे कालिदास ने भी कुमारसम्भव में इस प्रकार कहा है—

प्रयुक्तपाणिग्रहणं यदन्यद्वधूवरं पुष्यति कान्तिमग्याम्।

विवाह संस्कार और उसका पवित्र उद्देश्य अपने कर्तव्यों का परिपालन, बड़ों के प्रति सम्मान, वंशवृद्धि, सांसारिक सुख के साथ पितृऋण, ऋषिऋण और देव-ऋण से मुक्त होने पर भी परम्पराओं का महाकवि कालिदास ने रघुवंश महाकाव्य में भी अज के प्रसंग में इस प्रकार वर्णन किया है :—

---

४. कुमारसम्भव ७ सर्ग ६ श्लोक, ५ कुमार० ६ सर्ग ११ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस प्रकार वेदों का अध्ययन करके ऋषियों के ऋण से, यज्ञ करके देव ऋण से और सन्तान उत्पन्न करके अपने पितरों के ऋण से मुक्त होकर राजा 'अज' वैसे ही सुशोभित हुए जैसे मण्डल से छूटकर सूर्य शोभा पाता है।'[1]

महाकवि कालिदास ने समान कुल में वैवाहिक सम्बन्ध को आवश्यक माना है और मानव के लिए वैवाहिक सम्बन्ध जगत् के वास्तविक स्वरूप को जानने के लिए भी आवश्यक माना है। हिमालय और मेना का विवाह सम्बन्ध इन परम्पराओं के अनुरूप ही वर्णन किया है—

सुमेरु के मित्र और लोक मर्यादा जानने वाले अपना वंश चलाने के लिए मेना नाम की उस कन्या से शास्त्र के अनुसार विवाह किया जो पितरों के मन से उत्पन्न हुई थी जिसका मुनि लोग भी आदर करते हैं और जो हिमालय के समान ही है। ऊँचे कुल और शीलवाली थी।'[2]

कालिदास और उसकी रचनाओं के प्रति पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों के विचार

महाकवि अपनी रचनाओं के द्वारा नैतिक भावों की स्थापना करता हुआ अपने समाज को सही मार्ग दिखा कर सुख से जीवित रहने की पद्धति बताता है। मानव के जीवन में जीवो और जीने दो की भावनाएँ उदार विद्वानों के साहित्य का अध्ययन करके एवं सच्चे धर्म से आती हैं। वास्तव में कवि, कविता, काव्य और काव्य संरचना का सृजनात्मक रूप में आपस में बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। महाकवि कालिदास सचमुच उसी कड़ी का ही संयोजक रहा है। जिसने प्राचीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति का सच्चा प्रसार, प्रचार करने में एवं उसका महत्त्व बताने में बहुत बड़ी भूमिका का निर्वाह किया है। जो साहित्य साधकों के लिए अनुकरणीय, आचरणीय एवं अविस्मरणीय है।

कविता, काव्य और काव्यरचना कवि के हृदय की सच्ची अनुभूति होती है। कवि या महाकवि अपने हृदय के सही भावों को अपनी किसी न किसी दारुण व्यथायुक्त रचना में पात्र परिवर्तन कर अपनी आत्मकथा के रूप में अभिव्यक्त कर ही देता है। वास्तव में मृदु मानव हृदय रखने वाला महाकवि अपने हृदय की व्यथा सामान्य जन की तरह रोकर, कहकर, गाकर ही वर्णन नहीं करता है और

---

१. ऋषिदेव गणस्वधाभुजां श्रुतयाग प्रसवैः स पार्थिवः।
अनृणत्वमुपेयिवान्बभौ परिधेर्मुक्त इवोष्णदीधितिः॥ रघुवंश ८ सर्ग २८ श्लोक

२. स मानसीं मेरुसखः पितृणां कन्यां कुलस्य स्थितये स्थितिज्ञः।
मेनां मुनीनामपि माननीयामात्मानुरूपां विधिनोपयेमे॥
कुमारसम्भव १ सर्ग २८ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

न शान्त होकर उसे भूल ही जाता है। अपितु अपनी सहज प्रतिभा से उसे काव्य का सौम्य चमत्कारी और प्रभावोत्कारी रसात्मक रूप देकर वर्णन करता है। कवि सामान्य कथानक एवं बात को भी अपनी भाषा और भावों से संजोकर अत्यन्त ही हृदय हारी बना देता है, जो काव्य का रूप धारण कर लेता है।

महाकवि कालिदास ने भी अपनी कविताओं के द्वारा अपने निकट के लोगों को काव्यगोष्ठियों से प्रभावित किदा हुआ था और उससे अनुप्राणित होकर ही काव्य एवं नाटकों का सृजन कर सम्पूर्ण विश्व में फैलाया है। महाकवि कालिदास के ग्रन्थों को जिसने भी पढ़ा है उसने उसे अपनी भाषा में अनुदित अवश्य किया है। विश्व भर के सहृदय व्यक्तियों ने महाकवि कालिदास को हृदय से अत्यधिक सम्मान दिया है और उस महान् कवि की भूरी-भूरी प्रशंसा की है।

जर्मन के प्रसिद्ध कवि गेटे महोदय ने तो महाकवि कालिदास के अभिज्ञान शाकुन्तल को संसार के नाट्य साहित्य में सर्वोत्कृष्ट मानते हुए उसे स्वर्ग और नरक को जोड़ने वाली कड़ी और फल एवं फूल का एक समन्वयात्मक रूप माना है। तथा उसे पढ़ने से आत्म विभोर होकर अपने विचार जर्मनी भाषा में इस प्रकार व्यक्त किए हैं, जिनका सर विलियम जॉन्स ने अंग्रेजी में अनुवाद इस प्रकार किया है :—

'Wouldst thou the young year's blossoms and the fruits of its decline.

And all by which the soul is charmed, enraptured, feasted, fed ?

Wouldst thou the earth and heaven itself in one sole name combine ?

I name thee, O Shakuntala, and all at once is said.

स्वर्गीय महामहोपाध्याय वासुदेव विष्णु मिरासी ने विलसन के अंग्रेजी का संस्कृत श्लोक में इस प्रकार अनुवाद किया है :—

वासन्तं कुसुमं फलं च युगपद् ग्रीष्मस्य सर्वं च यत्
यच्चान्यन्मनसो रसायनमतः सन्तर्पणं मोहनम्।
एकीभूतमभूतपूर्वमथवा स्वर्लोकभूलोकयो
रैश्वर्यं यदि वांछसि प्रियसखे! शाकुन्तलं सेव्यताम्॥

इस पुस्तक की सहलेखिका विदुषी श्रीमती गोदावरी घिल्डियाल ने विलियम और डा० मिरासी के संस्कृत श्लोक का पद्यानुवाद हिन्दी में इस प्रकार किया है :—

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ग्रीष्म ताप में वसन्त के युग्म फल-फूल को हो देखना।
अद्वितीय पृथ्वीद्यूलोक को एकरूप में जो हो देखना॥
और सन्तप्त मन को हो यदि परमानन्द की चाहना।
ऐश्वर्य की हो कामना तो उसे भी शाकुन्तलं में देखना॥

मेघदूत का अंग्रेजी में अनुवाद करने वाले श्री विलसन महोदय ने महाकवि कालिदास की मानवीय भावनाओं को सबसे अधिक सुकुमार स्वरूप में देखा है; गुणग्राही होने और कालिदास की मौलिक चिन्तन पद्धति से प्रभावित होकर महाकवि के प्रति विलसन ने अन्य लोगों के विचार और गर्वोक्तियों को अति ही निन्दनीय दृष्टि से देखा है। वास्तव में कोई सृजनात्मक कार्य करना तो बहुत ही कठिन कार्य होता है, आलोचना करना तो अत्यन्त ही सुगमकार्य है। कुछ लोग तो किसी की अच्छी रचना को अपने कुटिल और छिद्रान्वेषी स्वभाव के कारण मान्यता देने या उसे वाणी से प्रोत्साहित करने को भी तैयार ही नहीं होते हैं। किसी अंग्रेज आलोचक के शब्दों पर श्री विलसन ने कठोर प्रहार करते हुए अपने हृदय के सच्चे विचारों को इस प्रकार लिखा है :—

'मेरी अपनी ऐसी दृढ़ धारणा है कि ऐसे काव्य निन्दकों की तनिक भी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। वास्तव में हमारे यहाँ तो क्या काव्यशास्त्रीय (classical) कविता क्या आधुनिक (Modern) कविता, में कहीं भी ऐसे उदाहरण नहीं मिलेंगे जिनमें ऐसी माधुर्य, मृदुता एवं सुकुमार भावनाएँ हों।'

महाकवि कालिदास ने अन्तस्तल को स्पर्श करने वाले मानवीय भावों की सम्पूर्ण विश्व के अधिक से अधिक लोगों ने गद् गद् होकर प्रशंसा की है किन्तु एक आध दोष दृष्टा भी हो ही सकता है। वह तो नगण्य के समान हैं। सौन्दर्य के आकर्षण से आकर्षित करने वाले सृष्टि निर्माता पर कुटिल लोग दोष निकालते ही हैं पुनः एक सृजनात्मक और ब्रह्मास्वाद सहोदर को देने वाले साहित्य साधक में दोष देखना तो साधारण सी बात है। दोष देखने की अपेक्षा गुण देखने में अधिक लाभ है। सृजन करने वाले लोग अपने कार्य में लगे ही रहते हैं।

महाकवि कालिदास की भावनाओं के सन्निकट पहुँच कर आज कोई भी व्यक्ति अन्वेषणात्मक रूप में कुछ लिखता है तो शीघ्रता से उसे कोई मानने को तैयार ही नहीं होता है क्योंकि भ्रमात्मक धारणाओं का व्यामोह लोगों के मन में इस प्रकार बैठा है और कोई स्वतन्त्र दृष्टि से खोज भी नहीं करना चाहता है अतः वह दोष शीघ्रता से दूर नहीं हो सकता है किन्तु अब सच्चे अन्वेषक तथ्यों एवं युक्ति संगत प्रमाणों से यह अनुभव करने लगे हैं कि महाकवि कालिदास मूल-रूप में उत्तराखण्ड का ही निवासी था। उसकी अधिक रचनाएँ इसी भूभाग के वर्णन से सम्बन्धित हैं। महाकवि कालिदास की हृदय की सच्ची भावनाएँ उसकी

१२

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अमर रचनाओं में स्पष्टरूप से दिखाई देती हैं। मेघदूत उसका सबसे बड़ा प्रमाण है।

महाकवि कालिदास के साहित्य मर्मज्ञ भारतीय विद्वानों ने भी साहित्यिक मूल्यांकन करते हुए उस विश्वकवि के प्रति अपने हृदय के सच्चे भाव इस प्रकार समादर के रूप में अभिव्यक्त किये हैं :—

संस्कृत गद्य साहित्य के मर्मज्ञ और हर्षचरित तथा कादम्बरी संस्कृत के उपान्यास के लेखक वाण भट्ट ने महाकवि कालिदास की सुक्तियों की हर्षचरित में भूरी-भूरी प्रशंसा की है :—

'कालिदास की आम्र मंजरियों की तरह सरस और मधुर सूक्तियाँ को सुनकर किसके हृदय में आनन्द पैदा नहीं होता है ?'

निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु।
प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मंजरीष्विव जायते ॥

महाकवि कालिदास अपनी मानव हृदय हारिणी काव्यरचना से कवि ही नहीं अपितु कवि जयदेव ने अपने प्रसन्न राघव में कालिदास को कवि कुलगुरु' का सर्वोच्च स्थान दिया है :—

भासो हासः कविकुलगुरु कालिदासो विलासः।

विद्वानों ने शिशुपालवध महाकाव्य के रचयिता माघ को भी सम्मान दिया है तो महाकवि कालिदास को सभी क्षेत्रों में उसकी बहुमुखी प्रतिभा से प्रभावित होकर ऐसा कहा है :—

पुष्पेषु चम्पाः नगरीषु लङ्का
काव्येषु माघः कविकालिदासः ॥

संस्कृति साहित्य के कठिन ग्रन्थों और दुरुह स्थलों पर टीका कर उन्हें सरल बनाने वाले प्रसिद्ध टीकाकार महामहोपाध्याय मल्लिनाथ ने महाकवि कालिदास की बहुमुखी प्रतिभा का अनेक श्लोकों के द्वारा हृदय से इस प्रकार गुणगान किया है :—

पुराकवीनां गणनाप्रसंगे, कनिष्ठिकाधिष्टित कालिदासः।
अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावाद्नामिका सार्थवती बभूव ॥

पुराने कवियों की गणना में गिनती करने की छोटी अंगुली में सर्व प्रथम कालिदास की ही गणना की जाती है। आज भी उसकी समता के अभाव में वही उस अनामिका से सुशोभित हो रहा है। इतना ही नहीं अपितु साक्षात् ब्रह्मा भी अपने चारों मुखों से उसकी वाणी के सार को वर्णन नहीं कर सकता है पुनः मेरे जैसे अन्य विद्वान् कैसे वर्णन कर सकते हैं :—

कालिदासगिरां सारं कालिदास सरस्वती।
चतुर्मुखोऽथवा साक्षाद्विदुर्नान्ये तु मादृशाः ॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महामहोपाध्याय मल्लिनाथ ने अपनी संजीविनी टीका से पाठकों को भ्रम के मोह से दूर किया है। कालिदास के सभी काव्यों पर मल्लिनाथ की ही टीका सब के लिए पथ प्रदर्शिनी रही है :—

भारतीय कालिदासस्य दुर्व्याख्या विषमूर्छिता।
एषा संजीवनी टीका तामद्योज्ज्यां वयिष्यति ॥

कविता में उपमा, अर्थ गौरव और पदलालित्य का सबसे बड़ा महत्त्व है किन्तु कालिदास के समान उपमा का धनी कोई नहीं।

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थ गौरवम्।
दण्डिनवदलालित्यं माघेसन्ति त्रयोगुणाः॥

संस्कृत के किरातार्जुनीय काव्य के रचयिता भारवि का अर्थ गौरव, दशकुमार चरित्र के लेखक दण्डि का पदलालित्य और शिशुपालवध महाकाव्य के रचयिता माघ में तो तीनों गुणों विद्यमान हैं।

महाकवि कालिदास की काव्यगत अनेक विशेषताओं के कारण ही अनेक विद्वानों ने अपने श्रद्धा के भाव इस प्रकार सच्चे हृदय से अभिव्यक्त किये हैं—

सुवशा कालिदासस्य मन्दाक्रान्ता प्रवल्गाति।
सुदखदमकस्येव काम्बोजतुरगाङ्गना॥ (क्षेमेन्द्र)
एकोऽपि जीयते हन्त! कालिदासो न केनचित्।
शृंगारे ललितोद्गारे कालिदासत्रयी किमु॥ (राजशेखर)
माहिषं दधि, सशर्करं पयः कालिदासकविता, नवं वयः।
शारदेन्दुरबला च कोमला स्वर्गशेषमुपभुंजते जनाः॥ (उद्भट)
अस्पष्टादोषा नलिनीव दृष्टा, हाराऽऽवलीव ग्रथिता गुणौघैः।
प्रियाऽङ्कपालीव विमर्दहृघा न कालिदासादपरस्य वाणी॥ (श्रीकृष्ण)
लिप्ता मधुद्रवेणाऽऽसन् यस्य निर्विवशा गिरः।
तेनेदं वर्त्म वैदर्भं कालिदासेन शोधितम्॥ (दण्डी)

हिन्दी के राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त ने भी कालिदास के प्रति अपनी श्रद्धा इस प्रकार व्यक्त की है :—

चिरकाल रसाल ही रहा, जिस भावज्ञ कवीन्द्र का कहा
जय हो उस कालिदास की कविता-केलि कला विलास की।

डा० अच्युतानन्द घिल्डियाल ने कलिदास के प्रति अपने हृदय के सही विचार इस प्रकार व्यक्त किये हैं :—

जय जय उपमाधनी कवि शिरोमणि कालिदास की।
सरस्वती साधक उत्तराखण्ड गढ़देश निवासी की॥
मन्दाकिनी का वह पावन तट तुम्हें अति प्रिय क्यों था?
क्योंकि हिमालय की इसी भूमि में तुमने जन्म लिया था?

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वास्तव में यदि आज कोई भी पाश्चात्य विद्वान् महाकवि कालिदास के ग्रन्थों का अनुशीलन एवं अन्वेषण के आधार पर उसकी जन्मभूमि का परिभ्रमण करके कुछ भी लिख दे तो वह सब हम भारतीयों के लिए ब्रह्मवाक्य के समान अकाटय प्रमाण हो जायेगा। क्योंकि हम स्वतन्त्र होने पर भी दासता की मनोवृत्तियों से मुक्त नहीं हो पा रहे है और पाश्चात्यों के लिखे पर अधिक विश्वास करने लगते हैं।

महाकवि कालिदास के अमर साहित्य के आधार पर ही, उसकी परिस्थितियों को दृष्टि में रखकर, हिमालय के पर्यावरण पर विचार कर एवं उसकी भावनाओं का समादर करके ही उसकी जन्मभूमि और आत्मकथा का सही स्वरूप प्रबुद्ध पाठकों के समक्ष आ सकता है। मेघदूत में यक्ष के रूप में महाकवि कालिदास के हृदय के भावों को उसकी आत्मकथा के रूप में अच्छी प्रकार से देखा जा सकता है। वास्तव में पूर्वाग्रहों को छोड़कर और महाकवि कालिदास के ग्रन्थों तथा उसके वर्णित स्थानों को देखा जाये तो अनेक समस्याएँ एवं भ्रमात्मक धारणाएँ दूर हो सकती हैं। इस पद्धति से सही तथ्य प्रकाश में आयेंगे। हमने पक्षपात, पूर्वाग्रह, दुराग्रह और भ्रमित धारणाओं से स्वतन्त्र होकर गहन चिन्तन के पश्चात् वर्षों से उलझी कालिदास की इस आत्मकथा को मेघदूत के उद्धरणों से परिपुष्ट किया है। आशा है इससे धूमिल मार्ग अवश्य प्रकाशित होगा। दोष दृष्टा को वास्तव में उनकी दोष दृष्टि से कहीं गुण ही नहीं दिखते हैं। अतः उन्हें तो नहीं किन्तु सच्चे गुणग्राही अध्येता हमारे श्रम से अवश्य लाभान्वित होंगे।

कालिदास के मेघदूत का विश्व के अधिक लोगों पर प्रभाव

परिस्थिति, पर्यावरण और सामाजिक व्यवस्था का सच्चे सामाजिक व्यक्ति पर अधिक प्रभाव पड़ता है। जिस वातावरण में मानव उत्पन्न होता है, रहता है और उसमें जो कुछ भी देखता है, उसे जनमानस की भाषा में कवि हृदय के कारण अभिव्यक्त कर ही देता है। अपने जीवन की कथा, व्यथा और अनुभूति को सच्चा कवि हृदय रखने वाला प्रसंग-वश अपनी रचनाओं में वर्णन कर ही देता है किन्तु उसके लिए वैसी ही पृष्ठभूमि का भी सृजन करता है। कवि होने के कारण मानवीय मनोभावों को वह अच्छी प्रकार से समझता है और उन्हें सार्वभौमिक रूप में किसी काव्य, पुराण, व्यक्ति विशेष एवं परिस्थिति विशेष से प्रभावित होकर अपने मर्मस्पर्शी भावों को किसी कथानक विशेष से जोड़कर भी व्यक्त कर ही देता है। ऐसी स्थिति में कवि की परिस्थिति और उसके भावों को समझना भी परमावश्यक होता है।

महाकवि अपनी सृजनात्मक प्रतिभा और आराध्य देव की कृपा से भी अनेक बातों को जानता है किन्तु बिना अतिसूक्ष्म दृष्टि से देखे, उस वर्ण विषय को आत्मसात किये बिना और उस भूभाग में अपने प्रारम्भिक जीवन में स्वच्छन्द

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विचरण किये बिना कभी भी सजीव रूप नहीं दे सकता है। जिस भूभाग में महाकवि उत्पन्न होता है, अधिक समय तक रहता है और कवि हृदय पाकर उन सभी दृश्यों तथा घटनाओं को मन एवं आंखों में इस प्रकार संजो लेता है कि लिखने में उसे कल्पना का तनिक भी सहारा नहीं लेना पड़ता है। केवल कविता या कथानक को सौन्दर्यमय और रमणीय बनाने के लिए अलंकारों का आश्रय अवश्य लेना पड़ता है। कवि होने के कारण महाकवि कालिदास के हृदय पर भी उसके बाल्यकाल की सूक्ष्म प्रकृति निरीक्षण की इतनी अमिट छाप पड़ी हुई थी कि उसने अपनी रचनाओं में यथा प्रसंग उन्हें अच्छा स्थान दिया है। तभी उसे प्रकृति का कवि और उपमा का धनी महाकवि माना गया है। मेघदूत गीतिकाव्य भी कालिदास के जीवन पर आधारित शपित समय की प्रवासी जन की व्यथापूर्ण हृदयस्पर्शी कथा है। कालिदास ने एक साधारण सी घटना को लेकर अपनी सच्ची व्यथा मानवीय कथा के रूप में अभिव्यक्त की है। मेघदूत गीतिकाव्य ने विश्व के सबसे अधिक सहृदयों को अपनी दारुण दुखमयी व्यथा से आकर्षित किया है।

मेघदूत से अनुप्रमाणित होकर ही विश्व के अधिक लोगों ने महाकवि कालिदास के मेघदूत का अपनी-अपनी भाषाओं में अनुवाद किया है। उसकी विषय वस्तु को स्पष्ट करने के लिए मेघदूत पर ३०–४० के लगभग टीकाएं भी हुई हैं किन्तु मल्लिनाथ की संजीवनी टीका प्रमाणिक, सर्वप्रिय और सरल मानी गई है। उसके साथ ही बल्लभ, निरुक्तकार सारोद्धारिणी, सरस्वती तीर्थ आदि की टीकाएं भी प्रचलित हैं। अंग्रेजी शासन काल में भारतीय विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही था। अतः बंगाल और महाराष्ट्र के दो प्रसिद्ध विद्वानों ने संस्कृत एवं अंग्रेजी भाषा के विशेष मर्मज्ञ होने के कारण मेघदूत का संस्कृत श्लोकों के साथ अंग्रेजी में अनुवाद और टीका भी की हैं। श्री शारदारंजन रे और मोरेश्वर रामचन्द्र काले ने मेघदूत के अतिरिक्त पाठ्यक्रमों में अनुमोदित अनेक नाटक एवं काव्यों का भी अंग्रेजी में अनुवाद किया है।

हिन्दी में सर्वप्रथम सरस्वती पत्रिका के सम्पादकाचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी राजा लक्ष्मण सिंह, आचार्य केशवप्रसाद मिश्र, सेठ कन्हैयालाल पोद्दार और डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने भी मेघदूत का सर्वप्रथम अनुवाद किया है। तिब्बती भाषा में मेघदूत का सर्वप्रथम अनुवाद हुआ है। विलसन ने अंग्रेजी में अनुवाद किया है। लंका के पानवोसो ने सिंहली भाषा में एवं मैक्समूलर ने जर्मन पद्य में मेघदूत का अनुवाद किया है। अमेरिका के आर्थर राइडर ने मेघदूत का पद्यानुवाद किया है।

बंगाली, मराठी, गुजराती, तेलगु, कन्नड़, नेपाली आदि अनेक भारतीय

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भाषाओं में भी मेघदूत का अनुवाद हुआ है। गढ़वाली भाषा में भी मन्दाक्रान्ता छन्द में पद्यानुवाद आचार्य धर्मानन्द जमलोकी ने किया है।

इस प्रकार माननीय हृदय की सच्ची व्यथा की कथा से प्रभावित होकर ही सहृदय लोगों ने मेघदूत पर सबसे अधिक लिखा हैं क्योंकि यह महाकवि कालिदास के दारुण दुखमय जीवन की सच्ची आत्मकथा है।

सारे विश्व में सम्मान पाया महाकवि कालिदास तूने।
निज अमर साहित्य से सभी को मन्त्रमुग्ध किया तूने ॥

कालिदास, उत्तरप्रदेश शासन और उत्तराखण्ड

महाकवि कालिदास के कृतित्व और व्यक्तित्व से शताब्दियों से विश्वभर के लोग परिचित हैं किन्तु हिमालय के उत्तराखण्ड की पावन भूमि से कम ही लोग परिचित हैं। वास्तव में सत्ता का यह एक विशेष नियम है कि जिसे वह चाहती है वही सच्चा एवं अच्छा होता है। सत्ता से सम्बन्धित इतिहास लेखक भाग्य विधाता बनकर जो लिख देते हैं, वही ब्रह्मवाक्य बन जाता है। महाकवि कालिदास के युग में हिमालय का उत्तराखण्ड अति ही दुर्गम स्थान में था। जहां सच्चे साधक ही साधना रत रहते थे और यात्रा के लिए परमधार्मिक श्रद्धालु व्यक्ति ही आते थे। यातायात के साधन कठिन पदयात्रा, घोड़ा, धनहीन मानव की पीठ या कन्धा ही होता था। सर्व साधारण की यहां पहुंच नहीं होती थी। धार्मिक आस्था वाले ही लोग संकट को सहन कर इस धरती की यात्रा करते थे। भाग्यवान् लोग ही इस दुर्गम यात्रा से बहुत दिनों में वापस आ पाते थे या इसी शान्त पावन भूमि के धार्मिक एवं प्राकृतिक वैभव के ऐश्वर्य में आकर्षित होकर यही रम जाते थे। वही लोग बाद में अपनी सच्ची साधना से यहां के ही साधक सिद्ध हो जाते थे, इसी आधार पर कालिदास ने कुमारसम्भव और मेघदूत में अनेक सिद्ध, यक्ष, गन्धव, विद्याधर आदि देवयोनियों का विशद वर्णन किया है। तभी तो इस उत्तराखण्ड को देवभूमि के नाम से भी जाना जाता है। देवभूमि के निवासी अपनी अद्‌भूत शक्तियों से अपनी इच्छा के अनुरूप सभी कार्य सिद्ध कर लेते थे। उत्तराखण्ड पावन भूमि ने वेदव्यास, सत्यवती, विदुर, उद्धव, पाण्डुपुत्रों तथा धृतराष्ट्र, गान्धारी के दुखी मन को शान्ति देकर परमगति दी। इस पवित्र भूमि में महर्षि वेदव्यास ने वेद के मन्त्रों और उनके बिस्तृत भाष्य के रूपमें लोक कल्याण के लिए सभी को इन्हें पढ़ने का अधिकार देने के लिए १८ पुराणों का सृजन यहीं किया है।[१]

---

१. इस पर विशेष अध्ययन के लिए हमारी श्रीमद्भागवत और उसका बहुमुखी विकसित समाज पुस्तक को देखें पृष्ठ १ से १५।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हिमालय के उत्तराखण्ड की केदारभूमि शिव और शक्ति के अंश से परिपूर्ण भाग हैं। महाकवि कालिदास ने अमर साहित्य में शिव-शक्ति का अत्यधिक गुणगान किया है। अच्छी भावनाओं से ही मानव कल्याणकारी कार्य होते हैं और पर्यावरण शुद्ध होता है।

साहित्य ही समाज का वास्तविक प्रतिबिम्ब और पूर्व पीढ़ियों की परम्परागत संचित ज्ञानराशि होती है। वह ज्ञानराशि धरोहर के रूप में सच्चे लेखक को ही प्राप्त होती है। सच्चा साहित्य निर्माता पूर्व प्राप्त ज्ञानराशि और अपनी अनुभूति से मानव कल्याण के लिए अपनी अद्‌भुत कृतियों द्वारा समाज को वितरण कर देता है। पात्र के अनुरूप ही उन कृतियों से गुणग्राही जन सत्य और तथ्य को लेकर मूल लेखकों के हृदय के भावों का रहस्य अपनी लेखनी द्वारा प्रभावोत्पादक शैली से स्पष्ट कर देता है।

संस्कृत के विद्यावारिधि महाकवि कालिदास का जन्म भी इन्हीं परिस्थितियों में हिमालय के उत्तराखण्ड की पवित्र केदारभूमि में हुआ था। सचमुच जिस पर्यावरण और परिस्थिति में व्यक्ति का जन्म होता है, उसी से प्रभावित होकर वह अपने कृतित्व में अपने सही व्यक्तित्व का परिचय देता है। प्रायः लोक गीतों में भी गीतकार के हृदय की सही अभिव्यक्ति देखी जाती है। श्रोता एवं पाठक उस गीतकार के हृदय के सभी भावों को सुगमता से उसकी रचना के द्वारा समझ जाते हैं।

शताब्दियों से केदारखण्ड की पावन धरती में जन्म लेने वाले कालिदास के साहित्य को पाठक निरन्तर अध्ययन करते आ रहे हैं और लोकगीत एवं गीति काव्य का महत्त्व भी समझते हैं किन्तु कालिदास के प्रवासी जीवन की दारुण दुखमयी व्यथा तथा कथा को वास्तविक रूप में अभिव्यक्त करने वाले मेघदूत का रहस्य नहीं समझ पाये हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि पाश्चात्य इतिहास लेखकों के भ्रमात्मक व्यामोह से इस ओर बुद्धि का संचरण ही नहीं हो पा रहा है। अतः महाकवि कालिदास की आत्मकथा भ्रमात्मक किंवदन्तियों में ही उलझी रही। तत्त्व ग्रहण की ओर कम ही लोगों का ध्यान जा पाया है जब कि गीतिकाव्य के स्वरूप, रहस्य और महत्त्व को कई लोग अच्छी प्रकार से जानते हैं।

भारत भूमि का यह परम सौभाग्य रहा है कि समय के अनुरूप यहाँ अनेक क्षेत्रों में महापुरुषों का जन्म होता रहा है। उत्तरप्रदेश को उसमें भी अधिक गौरव है कि राम एवं कृष्ण की जन्मभूमि में ही कलाविद् कालिदास का भी जन्म हुआ है। हिमालय का धरती को शस्य श्यामल करने वाला उपकारी रूप और पर्यावरण को अपनी वनसम्पदा से स्वच्छ रखने वाला स्वरूप, तपस्थली उत्तराखण्ड की केदार भूमि के प्राकृतिक वैभव पूर्णस्थान ही कालिदास की जन्म-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भूमि है। अनजान लोगों के विचारों ने, सत्ताधारी लोगों के दम्भ ने, दूसरों के अनुकरण करते वाले, भ्रमात्मक धारणाओं को फैलाने वालों के पक्षधरों एवं किवदन्तियों को गढ़ने वाले लोगों ने एवं ऐसी जनश्रुतियों ने ही महाकवि कालिदास के वास्तविक जीवन चरित्र को प्रकाश में नहीं आने दिया है।

उत्तराखण्ड, बद्री-केदारनाथ गढ़वाल की गुप्तकाशी का नाम एवं महत्त्व को न जानने वाले लोगों ने ही गुप्तकाशी के गुप्त शब्द को व्यर्थ समझ कर छोड़ दिया और काशी को ही महाविदुषी विद्योत्तमा और शारदानन्द की जन्मभूमि माना है। शताब्दियों के बहुत बड़े अन्तराल के बाद महाकवि कालिदास, कविल्ठा कालीमठ, गुप्तकाशी, विद्योत्तमा और राजा शारदानन्द का मूल जन्मस्थान भुला दिये गये एवं उत्तराखण्ड की निश्छल जनता भी परिस्थितियों के बदलने के साथ बदलती गई और अपने वास्तविक स्वरूप को एवं पूर्व पुरुषों को सर्वथा भूल गई। जैसा शासक या पथ प्रदर्शक नेता होता है वैसी ही जनता भी हो जाती है।

चिरकाल हुआ तुझे भूल गया था तेरा उत्तराखण्ड।
अब तेरे ही कर्मठ जनों ने जगाया है उत्तराखण्ड॥

शताब्दियों से विभिन्न संस्कृति और सभ्यताओं की दासता के कारण हम अपने सही स्वरूप को भूल गये, कुछ रोजी-रोटी की चिन्ता में भी खो गये। आज हमें स्वतन्त्र हुए पैंतालिस वर्ष होने लगे हैं किन्तु अभी तक हमारी मानसिक दासता दूर नहीं हो पाई है। स्वतन्त्रता के पश्चात् मध्यप्रदेश के प्रबुद्ध वर्ग ने महाकवि कालिदास के प्रति अपनी कृतज्ञता अभिव्यक्त करते हुए मेघदूत गीतिकाव्य में वर्णित विदिशा, विदर्भ, अवन्ती, उज्जयिनी के भूभाग के वर्णन और विक्रमादित्य के राज्याश्रय में रहने के कारण कालिदास को अपनी श्रद्धामयी दृष्टि से उज्जयिनी का ही निवासी मानकर उस महाकवि की स्मृति में मध्यप्रदेश सरकार की सहायता से अनेक कार्य आरम्भ किये हैं। इसके लिए मध्यप्रदेश की सरकार और उज्जयिनी का प्रबुद्ध वर्ग इन कार्यों के लिए धन्यवाद के पात्र हैं। यद्यपि मेघदूत के अनुरूप उज्जयिनी महाकवि कालिदास की जन्मभूमि तो प्रमाण से नहीं होती है किन्तु महाकवि की कर्मभूमि, यशदात्री और शापविमुक्त कराने की पावन धरती अवश्य है। ऐसे महान् राष्ट्रीय कवि को सम्मान देना प्रत्येक गुणग्राही भारतवासी का पुनीत कर्तव्य होना ही चाहिए। ऐसी स्वस्थ परम्पराओं से ही हमारी साहित्यनिधि सुरक्षित रह सकेगी और इतने दिनों तक रही है।

अच्छा हो यदि जन्मभूमि और कर्मभूमि के गुणग्राही लोग सहयोग से दोनों के महत्त्व को समझ कर महाकवि कालिदास के प्रति अपनी सच्ची श्रद्धा व्यक्त करने के लिए कोई रचनात्मक सही कार्य करें तो बहुत अच्छा रहेगा। इससे मातृभूमि के सच्चे गुणों को गाने वाले, राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ करने वाले कालिदास के भावों के अनुरूप आदर्शमय कार्य हो सकेगा।

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तेरी पावन स्मृति में सर्वत्र स्मारक बनते रहेंगे।
प्रति वर्ष तुम्हें सभी के श्रद्धा सुमन चढ़ते रहेंगे ॥

वस्तुतः महाकवि कालिदास को उसकी सच्ची मानवीय भावनाओं के कारण विश्व का विशिष्ट कवि, राष्ट्रीय भावनाओं के कारण राष्ट्र का सर्वश्रेष्ठ महाकवि माना जाता है। सम्पूर्ण भारत में उत्तरप्रदेश अपनी सांस्कृतिक, धार्मिक और भौगोलिक अनेक विशेषताओं के कारण अपना विशिष्ठ स्थान रखता, है। पवित्र नदियों पावन तीर्थों और धार्मिक स्थानों की यह पवित्र धरती है। ऋषि-मुनियों एवं मनीषियों की यह जन्मस्थली है। इसी पावन धरती में हिमालय उत्तराखण्ड गढ़-वाल में महाकवि कालिदास का भी जन्म हुआ है और इसी परम्परा में कई शता-ब्दियों के बाद धार्मिक एवं साहित्यिक परिवेश में कबीर, तुलसी, सूर, जायसी और रैदास आदि अनेक महान् पुरुषों का जन्म भी इसी उत्तरप्रदेश में हुआ है।

उत्तरप्रदेश के हिमालय के उत्तराखण्ड की केदारभूमि को ही कालिदास को जन्म देने का गौरव प्राप्त है। बहुत वर्षों से परम्परागत रूप में अन्वेषण में लगे हुए विद्वानों ने अपनी सत्य और तथ्यपूर्ण पुस्तकों, शोधपूर्ण लेखों, भाषणों एवं विचार गोष्ठियों से महाकवि कालिदास को कालीमठ परमसिद्धपीठ से सिद्धि पाने, उस युग के विद्या कि केन्द्र गुप्तकाशी से विद्या प्राप्त करने एवं गुप्तकाशी के ही राजपरिवार में महाविदुषी विद्योत्तमा से वैवाहिक सम्बन्ध होने से अच्छी सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली थी। साहित्य साधना, हिमालय और कैलास के शिव-शक्ति के शाप से अपनी पत्नी का दारुण विरह का दुख प्रवासी यक्ष के रूप में कालिदास को रामगिरि में भोगना पड़ा था। इस सब को कालिदास ने मेघदूत गीति काव्य के द्वारा गाया है और प्रबुद्ध पाठकों को अपनी सच्ची व्यथापूर्ण गाथा आपबीती आत्मकथा सुनाई है।

महाकवि कालिदास कि ग्राम कविल्ठा की 'महाकवि कालिदास जन्म भू स्मारक समिति के सतत प्रयास तथ्यपूर्ण पुस्तकों और अन्वेषणापूर्ण कार्यों से उत्तरप्रदेश सरकार की स्वतन्त्रता के पश्चात् ठीक ४५ वर्ष में गाढ़निद्रा अब भंग हुई है। अपने ही प्रान्त में 'दीपक तले अन्धेरा' वाली उक्ति सही निकली और अब हमारी प्रान्तीय सरकार का इस कार्य की ओर ध्यान आकर्षित हुआ है। इस वर्ष सन् १९९१ मार्च में उत्तरप्रदेश शासन ने चार लाख के लगभग का अनुदान देकर उत्तरप्रदेश हिमालय कि उत्तराखण्ड केदारभूमि कविल्ठा, चमोली गढ़वाल के विश्व-विख्यात महाकवि कालिदास की जन्मभूमि स्वीकार करके ही यह अनुदान की धनराशि दी और अपने सही दायित्व को देर सवेर में अनुभव तो किया है। उत्तरप्रदेश सरकार को अपने विशेषज्ञ विशेष अधिकारियों के द्वारा स्वतन्त्रता के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पश्चात् ही इस अन्वेषण पूर्ण कार्य कराके बहुत पहले ही यह ठोस कदम उठा लेना चाहिए था किन्तु सवेरे का भूला हुआ यदि शाम को घर आ जाता है तो उसे भूला हुआ नहीं माना जाता है।

उत्तरप्रदेश सरकार की महाकवि कालिदास के प्रति श्रद्धा सराहनीय है। इस मान्यता और आर्थिक सहायता के लिए गुणग्राही प्रान्तीय सरकार बधाई की पात्र है एवं उत्तरप्रदेश शासन को प्रेरणा देने वाले गुणी लोग विशेष रूप से धन्य-वाद के भागी हैं। हिमालय के उत्तराखण्ड केदारभूमि के कालीमठ सिद्धपीठ के निकट कविल्ठा ग्राम में अब कालिदास की जन्मभूमि के प्रमाण में महाकवि कालिदास का चिरस्थाई, चिरप्रमाण का एक भव्य स्मारक शीघ्र ही निर्माण हो जायेगा। प्रथम राष्ट्र कवि के स्मारक में केन्द्रीय सरकार को भी अपना योगदान देकर अपनी सच्ची कृतज्ञता व्यक्त करनी चाहिए। लाल सदा गुदिड़ियों में छिपे रहते हैं और अपने ही पर्यावरण में रहकर विश्व को अपने कार्यों से दिशा दिखाते हैं।

हिमालय उत्तराखण्ड का यह भूभाग सभी क्षेत्रों में अपना सर्वस्व राष्ट्र के लिए बलिदान करने पर भी शताब्दियों से अपने भोलेपन से पिछड़ा हुआ है। जिससे महाकवि कालिदास जैसे प्रतिभावान् व्यक्तियों की परम्परा टूट गई और अभी इतने दिनों तक हिमालय उत्तराखण्ड के निवासी सरस्वती साधक, भारतीय संस्कृति के रक्षक कालिदास को शासन, प्रशासन, बुद्धिजीवी वर्ग और सत्ताधारी नेताओं ने उसको सच्ची प्रेरणा देने वाली जन्मभूमि हिमालय उत्तराखण्ड गढ़वाल से सर्वथा भूला दिया था।

हिमालय ने त्याग से द्रवित हो देश को क्या नहीं दिया ?
निज वनसम्पदा व सीमा की सुरक्षा से क्या नहीं किया ?

गतवर्ष १९९० में महाकवि कालिदास जन्म भू स्मारक समिति को उत्तरप्रदेश संस्कृत अकादमी लखनऊ ने कालिदास समारोह को मनाने के लिए कुछ अनुदान देने का ध्यान रखा था। आगे भी इस प्रकार इस समिति को अकादमी को अनुदान देकर उसे भी अन्य संस्थाओं की तरह बढ़ाना चाहिए।

जनतान्त्रिक युग में अब जनता में चेतना के भाव जाग्रत होने लगे हैं। जो अधिक दिनों से पिछड़े हुए थे वे अब कर्तव्यों के साथ अपने अधिकारों को भी समझने लगे हैं। शान्ति तथा अहिंसा पूर्ण पद्धति पर अपने अभ्युदय एवं विकास के लिए वैचारिक क्रान्ति द्वारा सुधार लाने और पिछड़ापन दूर करने के लिए ही उत्तराखण्ड की जनता में भी उत्तराखण्ड राज्य की माँग की भावनाएँ उत्पन्न होने लगीं हैं। आज जनता में ऐसे भाव इसलिए उठ रहे हैं कि स्वतन्त्रता से पूर्व राष्ट्रीय कांग्रेस ने जो रामराज्य के स्वप्न दिखाये थे उन्हें भूल जाने के कारण ही भारतीय जनता में सर्वत्र आक्रोश बढ़ता जा रहा है। शिक्षित युवा वर्ग में

 CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नौकरी न मिलने से, स्वरोजगार के सुयोग न पाने से एवं दूसरों का मुख देखने की शिक्षा से कुण्ठा उत्पन्न हो रही है। आज उत्तराखण्ड की प्रतिभाएँ इस रत्नगर्भा को छोड़कर प्रवासी बनती जा रही हैं।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने अपने आर्थिक विचारों से क्षेत्रीय संसाधनों को दृष्टि में रखकर ग्रामीण जनता और पिछड़े हुए क्षेत्रों में लघु कुटीर उद्योग एवं आर्थिक विपन्नता के कारण सहकारी समितियों के द्वारा आर्थिक विकास के लिए अनेक उपाय बताये हुए थे किन्तु सत्ताधारी और सरकारी तन्त्र इस पर ध्यान न देकर बड़े-बड़े नगरों के विकास में ही उलझ गये। पहले राजनैतिक और सामाजिक सेवा में वही लोग आते थे, जिनमें त्यागमय जीवन से सच्ची सेवा करने के विचार होते थे और जनता उन पर भरोसा करके उनका ही चयन भी करती थी। इधर कई वर्षों से यह देखा जा रहा है कि पुराने मूल्यों का ह्रास होता जा रहा है। अब स्वार्थों ने इस राष्ट्र सेवा की राजनीति को दोष पूर्ण बना दिया है और अधिक लोगों का रुझान सत्ता प्राप्ति की ओर होने लगा है। नैतिक मूल्यों का ह्रास राष्ट्र के लिए एवं लोकतन्त्र के लिए घातक है। इसी सुधार के लिए श्रीकृष्ण ने अर्जुन को गीता में यह आचरणीय उपदेश दिया है :—

'समाज और राष्ट्र के उच्च पदासीन श्रेष्ठ लोग जैसा आचरण करेंगे उन्हें ही देखकर सामान्य जन भी वैसा ही आचरण करेंगे।'[1]

राष्ट्रीय चरित्र से ही राष्ट्र में एकता, राष्ट्रीयकरण एवं राष्ट्रप्रेम के भाव बढ़ेंगे। राष्ट्रीयभावों से ही साम्प्रदायिक उन्माद, पृथक्वाद, आतंक और अराजकता दूर होगी। सच्चा और अपने पद का दुरुपयोग न करने वाला शासक ही न्याय की रक्षा कर सकेगा। कठोरता दुष्टों के दमन का सबसे बड़ा अस्त्र है। भारत का सदा से यह सौभाग्य रहा है कि यहाँ समय-समय पर देश सेवक-सुधारक और रक्षक उत्पन्न होते रहे हैं।

पुस्तकों का मानव के जीवन में बहुत बड़ा योगदान होता है। पुस्तकें मानव के जीवन निर्माण में सद्गुरु और सच्चे शुभचिन्तक मित्र का भी काम करती हैं। उत्तराखण्ड में कोई ऐसा बड़ा पुस्तकालय भी नहीं है जिसमें विविध विषयों की पुस्तकें हों और इसके साथ ही उत्तराखण्ड के लेखकों की पुस्तकें भी उनमें प्राप्त हों। अतः इस प्रकार के कार्यों में पर्वतीय विकास संगठनों को अधिक से अधिक सहयोग एवं सहायता देनी चाहिए, जिससे उत्तराखण्ड में एक वृहद् पुस्तकालय की स्थापना हो सके। पुस्तकालयों के अभाव में ही उत्तराखण्ड के सैकड़ों साहित्यकारों को हम जानते ही नहीं हैं। ज्योतिविद् शास्त्री चैतराम भट्ट अध्यक्ष-महाकवि

१. यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनु वर्तते॥ गीता ३ अध्याय २१ श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कालिदास जन्म भू स्मारक समिति ने सूचित किया है कि उत्तरप्रदेश शिक्षा विभाग लखनऊ ने उन्हें ५ हजार धनराशि की पुस्तकें तथा उनके रख-रखाने के लिए साज-सज्जा भी प्रदान की है। इसके लिए शिक्षा विभाग के अधिकारी बधाई के पात्र हैं। स्थानीय जिला प्रशासन और जिला परिषद् को भी इस कार्य में योगदान देकर इस पुस्तकालय को एक राष्ट्रीय स्तर का पुस्तकालय बनाने में आर्थिक सहायता देनी चाहिए।

महाकवि कालिदास जन्म भू स्मारक समिति का शिव संकल्प एक भव्य रूप में साकार रूप लेकर हमारे समक्ष आया है। इसके लिए उसके कर्मठ सक्रिय कार्यकर्ता आर्थिक सहायता देने वाले और सहयोग देने वाले विशेष रूप से धन्यवाद के अधिकारी हैं किन्तु अब उन लोगों पर इस कार्य को सुसंगठित करने का अधिक दायित्व आ गया है, जिसे उन्हें अब अधिक निष्ठा, एवं सतर्कता एवं कुशलता से कार्य करना चाहिए। हम उस शक्तिदात्री से प्रार्थना करते हैं कि वे उन सभी को 'संगच्छध्वं संवदध्वं स वो मनांसि जायताम्' की सच्ची भावनाएँ दे।

आषाढ़ प्रथमदिवस को खोला मन का भेद तुमने।
तभी आरम्भ किया कविलठा में तेरा समारोह हमने ॥
हे जन्मभूमि के गौरव यशस्वी महाकवि कालिदास।
हम सभी श्रद्धा से नमन करते तुम्हें हे कालिदास ॥

तीर्थों का महत्त्व

महाकवि कालिदास ने अपने ग्रन्थों में तीर्थ स्थानों का महत्त्व भी स्पष्ट किया है। स्वयं महाकवि ने शाप, ताप और पाप से मुक्त होने के लिए अपनी आत्मकथा में अपनी धार्मिक आस्था के आधार पर तीर्थों के दर्शन, तीर्थों के वास और पावन नदियों का स्नान जन्म-जन्मान्तरों का पाप नाशक एवं पुण्य कर्मों का उदय माना है। इस तीर्थ यात्रा में अच्छे लोगों का सत्संग, कष्ट में रहकर नियमों का पालन और अपनी पवित्र भावनाओं के द्वारा तीर्थ वास का सच्चा लाभ प्राप्त होता है। कालिदास ने अपनी आत्मकथा मेघदूत में राम और सीता के द्वारा सेवित रामगिरि में निवास करने के कारण ही शाप दूर किया। शारीरिक रोग, मानसिक तनाव और सांसारिक प्रपंच शान्त, एकान्त एवं पावन पर्यावरण में रहने से स्वतः ही दूर हो जाते हैं। एवं मन पवित्र हो जाता है महाकवि कालिदास को उत्तरा-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खण्ड के तीर्थ स्थानों के दर्शन, निवास और स्नान करने से जड़त्व दूर हुआ तथा वाग्सिद्धि प्राप्त हुई और कुरुक्षेत्र, ब्रह्मावर्त, उज्जयिनी एवं रामगिरि आश्रमों से शाप, ताप, पाप नाश हुए।

महाकवि कालिदास ने अपनी जन्मभूमि उत्तराखण्ड में ही नहीं अपितु दूर अपनी कर्मभूमि और भारत के अनेक पावन तीर्थ स्थानों का वास एवं नदियों का स्नान पापनाशक तथा शान्ति देने वाला माना है। धार्मिक, आध्यात्मिक, शारीरिक, चारित्रिक, सांसारिक और साहित्यिक सुखों की प्राप्ति भी इनके ही द्वारा होती है। इस तीर्थ यात्रा से हवा पानी का बदलाव (आवहवा बदलने) शारीरिक दोष एवं अनेक बीमारियाँ दूर हो जाती हैं तीर्थों की यात्रा दर्शन, अच्छे लोगों का सत्संग मानव के हृदय परिवर्तन एवं दुखों के दूर करने में बहुत बड़े सहायक होते हैं। बड़े से बड़े आघात एवं महान् दुखों को भी व्यक्ति भूल जाता है या सहन करने की शक्ति पा जाता है। जघन्य से जघन्य कुकृत्य करने वाला, असह्य दुख भोगने वाला एवं प्रतिशोध लेने वाला व्यक्ति भी परिवर्तित हो जाता है। तीर्थ यात्रा में भले बुरे लोगों के अनुभवों को सुन करअपने को सुधार करने का सुयोग भी मिलता है। तीर्थयात्रा में प्रकृति के सही स्वरूप को देखने, संसार के दुख-सुखों को समझने और आत्म चिन्तन का अच्छा मौका मिलता है। सद्पुरुषों की संगत एवं वाणी से बुरा से बुरा व्यक्ति भी अच्छा बन जाता है और सत्पथ पर लग जाता है। कई श्रद्धालु लोगों की तीर्थ यात्रा करने से मन कामना भी पूर्ण हो जाती हैं एवं बिभिन्न प्रकार के संकट भी दूर होते देखे गये हैं। जो लोग तीर्थयात्रा में तीर्थयात्री की सेवा, सहायता और सहयोग करते हैं उन्हें ही तीर्थ यात्रा का सही फल मिलता देखा गया है। पवित्र हृदय एवं निस्वार्थ भाव से मानवीय आधार पर किये गये कार्य सच्ची यात्रा के परिचायक होते हैं। तीर्थयात्रा से यदि मन परिवर्तित न हुआ तो यात्रा व्यर्थ है।

कवि, लेखक, समाजसुधारक और महापुरुष अपनी लेखनी, वाणी तथा आचरण से ऐसे लोगों के लिए पथ प्रदर्शक बनते हैं। महाकवि कालिदास ने मेघदूत गीतिकाव्य से मन्दाक्रान्ता सुमधुर छन्द के गीतों से अपनी आत्मकथा द्वारा मानव मात्र को एक व्यवस्थित मार्ग दिखाया है। संगीत में भजनों एवं प्रभावोत्पादक भाषण में दूसरों को आकर्षित करने की बहुत बड़ी शक्ति होती है, दुखी से दुखी व्यक्ति भी आत्म विभोर होकर ललित कलाओं की ओर प्रवृत्त हो जाता है या ईश्वर की सच्ची भक्ति की ओर लग जाता है। शास्त्रों तक सबकी पहुँच नहीं होती है किन्तु तीर्थयात्रा से धार्मिक विचार सहानुभूति, सहायता, समता के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भाव और विद्वान् महात्माओं के दर्शनों से कम समय में अधिक ज्ञान प्राप्त हो जाता है। अपने कामों के द्वारा ही मानव भला-बुरा बनता है और कर्मों में परिवर्तन एवं परिमार्जन अच्छी संगत, महात्माओं के बचनों, सद्शास्त्रों का अध्ययन करने असह्य विपत्तियों में पड़ने पर संसार का भौतिक सुख भोगने पर और मृत्यु का भय होने से ही मानव भले कार्यों की ओर प्रवृत्त होता है।

विपत्ति मानव के धैर्य, आस्तिकभाव, सदाचार, बुद्धि की परीक्षा और मानवीय गुण की कसौटी है। रोगी शरीर के लिए पथ्य और औषधि जिस प्रकार हितकारी है, उसी प्रकार गरीबी और विपत्ति मानव के जीवन सुधार की सच्ची अभ्युदय की सीढ़ियाँ हैं। रोग मनुष्य को शरीर की अनित्यता बताते हैं और संकट एवं विपत्तियाँ उसे जीवन का सही उद्देश्य बताती हैं। उस सृष्टि नियान्ता की इच्छा के बिना मानव अपने स्वार्थों से परमार्थ की ओर कभी भी नहीं लगता है। रामचरित मानस में तुलसीदास ने इसे इस प्रकार कहा है :—

विनु सत्संग विवेक न होई। राम कृपा विनु दुर्लभ सोई।

कालिदास की भाँति तुलसीदास में भी तीर्थों का वास, पवित्र नदियों का स्नान तथा सन्तों के दर्शनों को पापनाशक माना है। स्वयं प्रयाग, सोरों (कासगंज एटा काशी, अयोध्या, चित्रकूट, उत्तराखण्ड गंगा, यमुना, सरस्वती तथा सरयू का स्नान मानव के सभी प्रकार के पापों का नाशक माना है और सच्चा मानव बनने के लिए इस प्रकार कहा :—

मुद मंगलमय सन्त समाजू। जो जग जंगम तीरथ राजू॥
राम भक्ति जहं सुरसरि धारा। सरसइ ब्रह्म विचार प्रचारा॥

जल शरीर के मल को दूर करता है किन्तु विश्वासी जन के गंगाजल और ईश्वर का नाम मन के मल को दूर कर हृदय को निर्मल करता है। तीर्थ स्नान और सत्संगति की महिमा इस प्रकार तुलसी ने वर्णन की है :—

मज्जन फल पेखिअ ततकाला। काक होंहि पिक बकउ मराला॥
सुनि आचरज करै जनि कोई। सतसंगति महिमा नहिं गोई॥

तीर्थयात्रा में पदयात्रा का अधिक महत्त्व है, सन्तों, महात्माओं ने धार्मिक; सांस्कृतिक और राष्ट्रीय एकता में पदयात्रा को अधिक महत्त्व दिया है क्योंकि इससे अधिक से अधिक स्थानों, प्राकृतिक दृश्यों, स्थानीय लोगों एवं धार्मिक स्थानों को सूक्ष्म दृष्टि से देखने का सुयोग मिलता है। देशवासियों में इससे भावात्मक एकता जागती है। रेल और मोटरों की यात्रा होने से पूर्व भारतीय जनता में सामाजिक, धार्मिक सहिष्णुता, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय एकता अधिक थी एवं लोगों में दुर्गम यात्रा करने का उत्साह था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तीर्थों, नदियों और प्राकृतिक सौन्दर्यमय वैभव का महाकवि कालिदास ने अधिक वर्णन किया है। मध्यप्रदेश के भूभाग अपनी कर्मभूमि और उत्तराखण्ड अपनी जन्मभूमि का अपनी आत्मकथा मेघदूत में विस्तृत वर्णन किया है। कुमार-सम्भव में कालिदास ने उत्तराखण्ड के अनेक तीर्थ स्थानों का वर्णन किया है। और पार्वती के जीवन में तपस्या, सत्यनिष्ठा, तीर्थों में बास एवं साधना करने का महत्त्व बताया है। उत्तराखण्ड वैदिक काल से ही ऋषि-मुनियों की तपस्थली रही है। यहीं सन्त-महात्माओं ने ईश्वर चिन्तन कर आत्मज्ञान और मुक्ति पाई है। महात्मा उद्धव, विदुर, मान्धाता के पुत्र मुचकुन्द ने नर-नारायण की पावन भूमि बद्री नारायण धाम तीर्थ में ही साधना में रत हो गये। धृतराष्ट्र, गान्धारी और पाण्डव यहीं अन्तर्धान हुए। अभिमन्यु का पुत्र राजा परीक्षित् हरिद्वार के निकट शुकदेव मुनि से श्रीमद्भागवत को सुनकर ध्यान मग्न होकर मुक्त हो गया।

आज भी धार्मिक तीर्थयात्री और श्रद्धालु भारतीयों में तीर्थों के प्रति अत्यधिक आस्था है। कष्टों को उठाकर अधिक धन, श्रम एवं समय व्यय कर भारतीय धार्मिक जनता अपने परम्परा के विश्वासों से तीर्थों का महत्त्व समझ कर यात्रा करती हैं। दान, पुण्य, धार्मिक कर्मकाण्ड, जप, तप और उपासना के द्वारा ये तीर्थ यात्री अपने जीवन को सफल मानते हैं। इन्हीं लोगों के द्वारा भारत के सभी तीर्थ स्थानों पर पुण्य प्राप्ति एवं धार्मिक यात्रियों की सुख-सुविधाओं के लिए अनेक निःशुल्क धर्मशालाएँ और भोजनालयों की भी व्यवस्था की हुई है। तीर्थ-यात्रा, तीर्थस्थानों में तीर्थयात्रियों को सुख पहुँचाना धार्मिक और मानवीय दृष्टि से उपकारक माना गया है।

उसी परम्परा की स्थापना में उत्तराखण्ड के अनेक पावन तीर्थों पर श्री सत-पाल महाराज जी ने अपने पूज्य पिता परम सिद्ध 'हंस' जी के नाम से अनेक धर्म-शालाओं का निर्माण किया है। जिसका विस्तृत विवरण इस प्रकार है :—

उत्तराखण्ड गढ़वाल अति प्राचीन काल से धार्मिक दृष्टि से अपना एक महत्त्व-पूर्ण स्थान रखता है। बद्रीनारायण, केदारनाथ, जोशीमठ, गंगोत्री, यमनोत्री के कारण धार्मिक जनता अनेक कष्टों को सहन करती हुई हिमालय के इस दुर्गम स्थान की यात्रा करती आ रही है। धार्मिक यात्रा आध्यात्मिक दृष्टि से पापनाशक, आत्मिक शान्ति और वातावरण के परिवर्तन के कारण स्वास्थ्यवर्धक एवं मनो-हारी भी है।

धार्मिक भावनाओं के कारण कुछ महात्माओं ने उत्तराखण्ड के तीर्थ यात्रियों की कठिनाइयों को देखकर मार्गों में विश्राम के लिए अनेक धर्मशालाओं का निर्माण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किया है, उनमें बाबा काली कमली चमत्कारी महात्मा का नाम विशेष उल्लेखनीय है। ऋषिकेश से लेकर समस्त उत्तराखण्ड के तीर्थस्थानों में बाबा काली कमली की अनेक धर्मशालाएँ हैं।

उधर बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कुछ आध्यात्मिक गुरुओं के हृदय में भी मानव कल्याणकारी भावनाओं से द्रवीभूत होकर विचार आये कि अब नये पर्यावरण के अनुरूप जनसंख्या की दृष्टि से पर्यटकों की बढ़ती हुई संख्या को देखकर एवं श्रद्धालु तीर्थयात्रियों की भावनाओं से प्रभावित होकर नई दिल्ली की 'मानव उत्थान सेवा समिति' २/१२ पंजाबीबाग के संस्थापक और आध्यात्मिक जगत् में ख्याति प्राप्त गुरु श्री सतपाल महाराज जी ने उत्तराखण्ड गढ़वाल के अनेक तीर्थ स्थानों पर तीर्थ यात्रियों की असुविधाओं को ध्यान में रखकर आधुनिक युग के अनुरूप स्वच्छ, सुखद, विश्राम युक्त और प्राकृतिक सौन्दर्यमयी सुषमा को ध्यान में रख कर अनेक निःशुल्क धर्मशालाओं का निर्माण कर मानव कल्याणकारी बहुत बड़ा कार्य किया है। हरिद्वार, श्रीनगर, पौड़ी गढ़वाल, कालीमठ, बद्रीनारायण चमोली गढ़वाल में धार्मिक जनता और श्रमणार्थी लोगों की सुविधाओं का ध्यान रखकर अपने निःशुल्क विश्रामगृहों का भी निर्माण कर मानव सेवा के लिए बहुत ही उपकारी कार्य किया है। इन निःशुल्क धर्मशालाओं और विश्रामगृहों से अधिक यात्री लाभान्वित हो रहे हैं।

इसके साथ ही साथ मानव उत्थान सेवा समिति द्वारा दीन, दुखी और अभाव ग्रस्त लोगों की अनेक प्रकार की सेवा का भी प्रबन्ध किया हुआ है। इस प्रकार के मानव उत्थान सम्बन्धी कार्यों को करने का समस्त श्रेय सेवा समिति के संस्थापक श्री सतपाल महाराज जी को है। जिन्होंने मानवीय दुखों को देखकर इस प्रकार की उपकारी योजनाओं को प्रारम्भ किया है।

श्री सतपाल महाराज जी के चमत्कारी कार्यों से प्रभावित होकर देश, विदेश के अनेक शिष्य अपनी शक्ति के अनुरूप अपना जीवन समर्पित कर मानव उत्थान सेवा समिति के माध्यम से सेवा के कार्यों में संलग्न हैं। ये लोग बिना भेदभाव के मानव उत्थान के कार्यों में लगे हुए अपने मानव जीवन का सही लाभ उठा रहे हैं।

सन् १९८८ जून १५ को आपके ही कर कमलों से कालीमठ सिद्धपीठ के निकट कविल्ठा (कविस्थान) में महाकवि कालिदास भू स्मारक समिति का उद्घाटन हुआ था और डा० अच्युतानन्द घिल्डियाल की अध्यक्षता में यह त्रिदिवसीय समारोह सम्पन्न हुआ था। महाकवि कालिदास स्मारक बनाने में श्री सतपाल महाराज जी का पहले से ही बहुत बड़ा योगदान रहा है और आगे भी इस

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रकार सहयोग मिलता ही रहेगा। इन मानव हितकारी और लोक सेवा के कार्यों के लिए श्री सतपाल महाराज जी धन्यवाद के पात्र हैं।

मानव जीवन पाकर कुछ उपकार का काम करो।
दुखी जनों की सेवा कर जीवन में अपना नाम करो ॥

उत्तराखण्ड गढ़वाल में यात्रा करने के मार्ग

उत्तराखण्ड के तीर्थस्थानों में जाने के दो प्रमुख द्वार है। एक तो हरिद्वार दूसरा कोटद्वार है। हरिद्वार से भी सीधी बसें मिल जाती हैं या हरिद्वार से गाड़ी से ऋषिकेश जाकर गंगोत्री; यमनोत्री, बद्रीनाथ एवं केदारनाथ के लिए सीधी बसें मिल जाती हैं। ऋषिकेश में कई बस स्टेशन हैं, जहाँ से जी० एम० ओ०, गढ़वालमण्डल, आदि की अनेक बसें मिलती हैं। देहरादून से भी उत्तराखण्ड के समस्त तीर्थ स्थानों के लिए उत्तरप्रदेश परिवहन की बसें एवं टैक्सियाँ सुगमता से मिल जाती हैं। ऋषिकेश के दो मार्ग हो जाते हैं—नरेन्द्रनगर, प्रतापनगर होकर टिहरी और टिहरी से उत्तरकाशी गोमुख तक यात्रा की जा सकती है। परिवार के सुखों को भोगने के बाद गढ़वाल के बहुत सारे लोग अपनी वृद्धावस्था (बाढ़ाहट) उत्तरकाशी चले जाते थे। उत्तरकाशी में अनेक परमकोटि में पहुँचे हुए महात्मा साधना रत हैं। टिहरी से भी अब मोटरें श्रीनगर होती हुई बद्री-केदार को जाती हैं।

ऋषिकेश से प्रायः यात्रा करने वाले लोग लक्ष्मण झूला, देवप्रयाग जहाँ रघुनाथ जी का प्राचीन मन्दिर है और भागीरथी एवं अलकनन्दा का संगम है। कीर्तिनगर, श्रीनगर जहाँ अनेक दर्शनीय स्थान कमलेश्वर महादेव, श्रीयन्त्र आदि हैं। श्रीनगर गढ़वाल की प्राचीन राजधानी थी, यहाँ से रुद्रप्रयाग पहुँचते हैं। रुद्रप्रयाग से केदारनाथ और बद्रीनाथ जाने के दो दिशाओं में दो मार्ग हो जाते हैं। यहाँ पर मन्दाकिनी और अलकनन्दा का संगम होता है। बाईं ओर का मार्ग गुप्तकाशी गौरीकुण्ड, केदारनाथ को जाता है और दाईं ओर का मार्ग बद्रीनाथ को जाता है। रुद्रप्रयाग में रात विश्राम करने के बाद प्रातः अगस्तमुनि, गुप्तकाशी गौरीकुण्ड के लिए बसें चलती हैं। गौरीकुण्ड से पार्वती की साधनास्थली गौरीपर्वत प्रारम्भ हो जाता है। यहाँ से केदारनाथ १४ किलोमीटर के लगभग पैदल यात्रा का मार्ग है। यहाँ से पदयात्री रामवाड़ा तक भी जा सकते हैं, और जो सुगमता से जा सकते हैं, वे सायंकाल केदारनाथ पहुँच जाते हैं। गौरीकुण्ड में यात्रियों के लिए सभी प्रकार की सवारियाँ उपलब्ध हो जाती हैं। डांडी, घोड़ा एवं कण्डी उन लोगों के लिए हैं जो १४ किलोमीटर मार्ग न चल सकते हों। समूह में चलने पर यह मार्ग कष्टकारक नहीं लगता।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रुद्रप्रयाग से एक विशेष बस गुप्तकाशी होती हुई महाकवि कालिदास की साधनास्थली सिद्धपीठ कालीमठ होती हुई कालिदास की जन्मस्थली कविल्ठा ग्राम एवं कोटमा तक जाती है। कोटमा से कुछ ही दूर कोटमाहेश्वरी का प्रसिद्ध मन्दिर भी दर्शनीय है। यहाँ पर शक्ति ने शिव को परास्त किया है। यद्यपि यह दुर्गम पदयात्रा का मार्ग है। कोटमाहेश्वरी पर भी दो पवित्र गंगाओं का संगम है। एक नदी खाम से आती है और दूसरी नदी मन्दाकिनी की ही एक गुप्तधारा केदार से आती हैं। ये दोनों नदियाँ कालिदास के ग्राम कविल्ठा से कालीमठ काली के चरणों को छूकर गुप्तकाशी में केदारनाथ से आने वाली मन्दाकिनी में मिल जाती हैं। केदार से आने वाली त्रिवेणी तीन नदियाँ रुद्रप्रयाग में अलकनन्दा में मिल जाती हैं।

रुद्रप्रयाग से गोचर, कर्णप्रयाग, नन्दप्रयाग, विष्णुप्रयाग, जोशीमठ, हनुमान-चट्टी से बद्रीनारायण के मन्दिर तक मोटर अनेक दुर्गम पर्वत श्रृंखलाओं एवं अनेक मोड़दार चढ़ाइयों को पार करती हुई, गंगा का सुन्दर स्वच्छ दृश्य, पर्वत चोटियों का भव्यरूप निहारते हुए तीर्थयात्री नर-नारायण के दर्शन करने के लिए बद्रीनाथ पहुँच जाते हैं। यह पर्वत ९ हजार फुट ऊँचाई पर है। वर्षा पड़ने पर ६ मास नवम्र से अप्रैल तक केदारनाथ की पूजा ऊखीमठ और बद्रीनाथ की पूजा जोशी मठ में होती है।

दूसरा मार्ग उत्तराखण्ड की यात्रा का काटद्वार है जिसका मुख्य स्टेशन नजीबा-बाद है, जो मुरादाबाद से पाँचवाँ स्टेशन है। जहाँ से जी० एम० ओ० की अनेक आरामदायक बसें मिलती हैं जो केदारनाथ एवं बद्रीनाथ के लिए निरन्तर मिलती रहती हैं। कोटद्वार के निकट ही कण्वघाटी में कण्व ऋषि का आश्रम है, जहाँ शकुन्तला के साथ दुष्यन्त का गन्धर्व विवाह हुआ था, महाकवि कालिदास का अन्तिम विश्वविख्यात एवं नाटकों में सर्वोत्तम शकुन्तला नाटक उत्तराखण्ड गढ़वाल के इसी भूभाग के आधार पर लिखा गया है। कण्व आश्रम में मालनी नदी प्रवाहित होती है। यहाँ से हरिद्वार भी निकट पड़ता है।

कोटद्वार से मोटर दुगड्डा, गुमखाल होती हुई सतपुली पहुँचती है। ऊँची-ऊंची पर्वत श्रृंखलाओं में घूमती पर्वतीय भूभाग का प्राकृतिक सौन्दर्य एवं सामने लैन्सिडाउन छावनी को दिखाकर मोटर सतपुतली पहुंचा देती है। सतपुली से मोटर पौड़ी के सुन्दरतम दृश्य और देवदारू के पेड़ों की ठंडी हवा देकर मोह लेती है। सामने हिमालय की वर्फ से ढकी चोटियां दिखाती देती है पुनः श्रीनगर पहुंच जाती है। श्रीनगर सम्पूर्ण पहाड़ी प्रदेशों में गंगा की घाटियों में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इतनी लम्बी-चौड़ी समभूमि कहीं नहीं होगी। पुनः रुद्रप्रयाग होती हुई केदार और बद्रीनारायण के लिए तीर्थयात्री इच्छा से जा सकते हैं।

कई श्रद्धालु यात्री पहले केदारनाथ की यात्रा कर पुनः रुद्रप्रयाग से बद्रीनारायण जाते हैं और बद्रीनारायण सीधे ऋषिकेश से अपने-अपने घरों को अपना मंगलमय पुण्य यात्रा करके सुख से अपने परिवार में पहुंच जाते हैं।

आवश्यक परामर्श

यात्रियों को यात्रा करने से पूर्व अपनी सुखद एवं मंगलमय यात्रा के लिए अपने साथ कम सामान रखना चाहिए जिससे कुलियों का व्यय कम होगा, चलने में सुगमता रहेगी और निश्चिन्त रहेंगे।

अपने शरीर के अनुरूप सिरदर्द और पेट दर्द की औषधि भी रख लेनी चाहिए।

अब प्रायः सभी बड़े-बड़े प्रसिद्ध स्थानों पर अनेक टूरिस्ट बंगले अनेक विश्रामगृह, धर्मशालाएँ होटल भी हैं जहां आरम्भ करने की सभी सामग्री और सामान मिल जाता है।

पर्वतीय यात्रा की चढ़ाई में चलने के लिए कपड़े के जूते सुखदायक होते हैं अतः उनका प्रयोग लाभप्रद और आरामदायक होता है।

यात्रा में खान-पान का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि इसीसे शारीरिक कष्ट होते हैं।

ईश बन्दन तीर्थ सेवन ये सभी हैं पापनाशक।
और तभी मन की भावनाएं बनाती हैं पापनाशक॥

तीर्थयात्रा को तुमने शाप और पापनाशक था माना।
निज रोग शोक का भी उसे ही सही उपचार था माना॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

State Museum Library Lucknow 7631

राज्य संग्रहालय पुस्तकालय
प्रो० बी० एन० पुरी संग्रह
लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हमारा प्रकाशित सद्साहित्य

१. प्राचीन राजवंश और बौद्धधर्म	डा० अच्युतानन्द घिल्डियाल			६०।-
२. प्राचीन भारतीय स्मृतिकार और नारी	,,	,,		२५।-
३. प्राचीन भारतीय सामाजिक विचारक	,,	,,		२५।-
४. प्राचीन भारतीय राजनैतिक विचारक	,,	,,		१५।-
५. प्राचीन भारतीय सामाजिक संस्थायें	,,	,,		१५।-
६. प्राचीन भारतीय आर्थिक विचारक	,,	,,		३०।-
७. कालिदास और उसका मानवीय साहित्य	,,	,,		७५।-
८. कालिदास की आतमकथा और मेघदूत	,,	,,		३०।-
९. श्रीमद्भागवत और उसका बहुमुखी सिकसित समाज	,,	,,		६०।-
१०. धर्म समाजशास्त्र	,,	,,		३०।-
११. अध्यापन कार्य और भारतीय महिलायें	,,	,,		२५।-
१२. तुलसीदास और उसका जनकल्याणकारी मानस	,,	,,		१००।-
१३. समकालीन भारतीय समाज एवं संस्कृति	,,	,,		२५।-
१४. समकालीन भारतीय समाज एवं परिवर्तन	,,	,,		२२।-
१५. आधुनिक भारतीय सामाजिक विचारक	,,	,,		२५।
१६. आधुनिक भारतीय आर्थिक विचार	,,	,,		८।-
१७. औपनिषदिक परम सत एवं मूल्य सिद्धान्त	,,	,,		२५।-
१८. राममोहनराय एवं आधुनिक भारत	,,	,,		५।-
१९. प्राचीन एवं आधुनिक भारतीय सामाजिक विचार	,,	,,		४२।-

हमारा शीघ्र प्रकाशित होने वाला सद्साहित्य

१. सोमेश्वर सूरी और उसके नीतिवाक्यामृतं का अनुशीलन डा० घिल्डियाल
२. शुक्लयजुर्वेद और भैषज्य विज्ञान श्रीमती डा० गौरी घिल्डियाल
३. अथर्ववेद का सामाजिक महत्त्व और भौतिक सुखवाद डा० घिल्डियाल
४. वाल्मीकि कालीन भारतीय समाज
५. महाभारत कालीन भारतीय समाज और शासन प्रबन्ध
६. गृहविज्ञान और भारतीय समाज--श्रीमती गोदावरी घिल्डियाल

भारतीय प्राच्य विद्या शोध संस्थान

सी १४/१६० सी २-१ सोनिया
सिगरा—वाराणसी २२१०१०